प्रकाशक

पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय (बिहार-प्रान्त)

'अभिनव जयदेव', 'अभिनव [illegible]'

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

संकलयिता

श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी

बालचन्द विज्जावई-भाषा। दुहु नहि लग्गई दुज्जन-हासा।
ओ परमेसर हर-सिर सोहई। ई निश्चय नाअर-मन मोहई॥
—विद्यापति-कृत 'कीर्ति-लता

संशोधक

कुमार गंगानन्द सिंह, एम्. ए., एम्. एल. ए.

पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय और पटना

समर्पण

हिन्दी के उन 'सफल समालोचकों' के कुशल करों में
जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिये
'नवरत्न' में दस रत्न घुमेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये 'बिहारी' को,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये
कितने अन्य कवियों की
कीर्त्ति पर
सफाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिये
'दास' को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो 'केशव' की कविता में 'तुलसी' की कविता से
अधिक काव्य-गुण पाते हैं—
अभिनवजयदेव
मैथिलकोकिल

विद्यापति की पदावली

का
यह संक्षिप्त संकलन
उनके नौसिखे संकलयिता द्वारा
सादर, सविनय और सभय समर्पित।

मैथिल-कोकिल

कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है, इसका परिचय इसीसे मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानो को कविकुलगुरु महर्षि वाल्मीकि की वन्दना के लिये जिह्वा खोलनी पडी तब उन्होंने यही कहा—

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविता-शाखा वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम् ॥

इस एक श्लोक ही मे जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओ मे है उनका व्यापक निरूपण है, थोडे-से शब्दो मे ही बहुत-कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओ का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याख्या करने के लिये उनको 'मैथिल-कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिली भाषा-राकारजनी के राकेश और कविता-कामिनी के कमनीय कान्त है। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल-कान्त पदावली, भावुक-हृदय-विमोहिनी भावुकता, और नव-नव-भावोन्मेषिणी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्ही गुणो की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है कि केवल मैथिलीभाषा को ही आपका गर्व नहीं है, वगभाषा और हिन्दी-भाषा-भाषी भी आपको अपनाने मे अपना गौरव समझते है, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते है। तीन-तीन प्रान्तो मे समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता मे है, तो आपकी ही कविता मे है, अन्य किसी की कविता को आज तक यह महत्त्व नही प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक

प्रान्त मे नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रहकर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली मे से सरस-से-सरस सुमनो के सग्रह करने मे जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने मे सुगन्ध है। यदि आपलोगो ने इसका समुचित समादर किया तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार मे उक्त कविपुंगव की अधिकाश रचना आपलोगो के कर-कमलो मे अर्पित की जावेगी। उस समय मैं एक वृहत् भूमिका-द्वारा इसी महान् कवि की रचनाओ पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पक्तियो को लिखकर ही सतोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्वविद्यालय,
काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय

द्वितीय संस्करण

हिन्दी-भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र-सटीक-संकलन के प्रथम संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का दूसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिताजी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यतः यह श्रीयुत नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों-का-त्यों रहने दिया है; क्योंकि इससे शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त सा हो गये हैं। बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर किया जाय तो कैसे? हाँ, कई स्थानों में मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे, पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूँगा।

टीका में मैंने जहाँ तहाँ कुछ हेरफेर किया है। समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद-शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के

प्रान्त मे नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रहकर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली मे से सरस-से-सरस सुमनो के संग्रह करने मे जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने मे सुगन्ध है। यदि आपलोगो ने इसका समुचित समादर किया तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार मे उक्त कविपुंगव की अधिकांश रचना आपलोगो के कर-कमलो मे अर्पित की जावेगी। उस समय मैं एक बृहत् भूमिका-द्वारा इसी महान् कवि की रचनाओ पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पंक्तियो को लिखकर ही संतोप ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्वविद्यालय,
काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय

द्वितीय संस्करण

हिन्दी-भाषा के प्रेमियो ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र-सटीक-संकलन के प्रथम संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का दूसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिताजी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यत यह श्रीयुत नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदो के पाठ को मैंने ज्यों-का-त्यों रहने दिया है; क्योंकि इससे शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त सा हो गये है। विना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर किया जाय तो कैसे? हाँ, कई स्थानो मे मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे, पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूँगा।

टीका में मैंने जहाँ तहाँ कुछ हेरफेर किया है। समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानो में सर्वथा विवाद-शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के

काल की मैथिली नहीं है। दोनों में बहुत अन्तर हो गया है। कहीं-कहीं तो ऐसा मालूम पड़ता है कि इस महाकवि ने अपने अनूठे भावों को संगीत बद्ध करने के लिये अनूठे शब्दों का निर्माण किया है। ऐसी अवस्था में कितनी टीकाएँ प्रकाशित हुई हैं और होंगी उनके सम्बन्ध में समालोचना की गुंजाइश है और रहेगी। इन बातों को दृष्टि में रखते हुए मैंने प्रथम संस्करण में की टीका का संशोधन उन स्थानों में किया है जहाँ भाषा का यथार्थ भाव व्यक्त करने के लिये वैसा करना मुझे नितान्त आवश्यक प्रतीत हुआ। यह मानना होगा कि इस प्रकार के गुटके संस्करण में टीका के लिये यथेष्ट स्थान मिलना असंभव है। यदि अपने काम में मुझे कुछ भी संतोष है तो इसीलिये कि इससे अधिक संशोधन मैं इस संस्करण में नहीं कर सकता था।

मैं तो एक ऐसे संस्करण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जिसमें पदों के पाठ निर्विवाद हों और टीका विस्तृत, समालोचनात्मक और प्रामाणिक। देखूँ, यह मधुर स्वप्न कब तक चरितार्थ होता है? तब तक के लिये सहृदय पाठकों से मेरा अनुरोध है कि ऐसे अधूरे प्रयत्नों से सन्तोष करें। यदि इसमें उनकी तुष्टि न हो तो शिष्ट समालोचना द्वारा तथ्य-निरूपण करके ही वे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

श्रीगंगानन्द सिंह

विषय-सूची

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के संकलन मे मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस शारदाचरण मित्रा द्वारा प्रकाशित बंगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अत. इन सज्जनों का मै अत्यन्त अनुग्रहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने मे उक्त पुस्तक, 'मैथिलकोकिल विद्यापति', 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' एवं 'मैथिली-दर्पण' से सहायता मिली है; अत इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र है।

हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एवं कविता-रचना मे अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे-से सग्रह के लिये एक छोटी—किन्तु चोखी भूमिका—लिख देने के लिये प० अयोध्यायजी का मै चिर-ऋणी हूँ।

सुहृद्वर बाबू शिवपूजनसहाय, श्रद्धेय प० जनार्दन झा, श्री जगदीश्वर ओझा, 'मैथिली'-सम्पादक बाबू उदितनारायणलाल दास, मित्रवर श्री रामनाथ 'सुमन' प्रिय 'विकल' आदि ने इस सग्रह को उपयोगी बनाने में मेरी सहायता की है; इनके प्रति मै अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र है पुस्तक-भंडार के प्राण बाबू रामलोचनशरणजी, जिनके उत्साह-दान से ही यह पुस्तक लिखी गई है और जिन्होंने इसे सुलभ और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

—श्रीबेनीपुरी

विद्यापति का परिचय

Every reader of the beautiful selection of Vidyapati's poems is sure to be rewarded with delight and pleasure that are the fruit of literary pursuits

—The 'People', Lahore.

प्रस्तुत पुस्तक मे विद्यापति के संबन्ध में जितनी जानने योग्य बातें हैं उन सबका बहुत अच्छी तरह विवेचन किया गया है। यह संस्करण बहुत ही अच्छा निकला। पाद-टिप्पणियाँ बहुत ही उपयोगी हैं। इस संस्करण की उपयोगिता के विषय में हम केवल यही कह सकते हैं कि हमारे एक मित्र, जो हिन्दी-साहित्य से सर्वथा विरक्त थे इन पादटिप्पणियो की सहायता से 'विद्यापति' का अध्ययन करके ही 'हिन्दी-साहित्य' के उपासक बन गये।

—'माधुरी' (लखनऊ)

जन्मस्थान

विद्यापति का जन्म 'दरभंगा' जिले के 'बेनीपट्टी' थाने के अन्तर्गत 'बिसपी' गाँव मे हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाडी उत्तर-पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन 'कमतौल' है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनो से यहीं वास करते थे। इस गाँव का पहला नाम 'गढ-बिसपी' था। इनको यह गाँव, इनके आश्रय-दाता राजा शिवसिंह की ओर से, उपहार-स्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

स्वस्तिश्रीगजरथपुरात समस्तप्रक्रियाविराजमानश्रीमद्रामेश्वरीवरलब्धप्रसादभवानीभवभक्तिभावनापरायणरूपनारायण महाराजाधिराजश्रीमच्छिवसिंहदेवपादास्समरविजयिनो जरैल तप्पायां 'विसपी' ग्रामवास्तव्य सकललोकान् भूकर्षकांश्च समादिशन्ति। ज्ञातुमस्तुभवताम्। ग्रामोऽयमस्माभि सप्रक्रियाभिर्नवजयदेव महाराजपंडित ठक्कुर श्रीविद्यापतिभ्य शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकर्म्मकरिष्यथेति ॥ ल० स० २९३ श्रावण शुदि ७ गुरौ।

इनके वंशधर बहुत दिनो तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु, इधर चार पुश्त पहले, वे इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के 'सौराठ' नामक गाँव मे बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग, लाखिराज के रूप मे, करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे (पैमाइश) होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरो से छीन लिया गया। उस समय इनके वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिये उपर्युक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र के सम्बन्ध में कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रिअर्सन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य बंगीय अनुसंधान-कर्त्ताओं ने इस दान-पत्र को प्रामाणिक माना है।

'बिसपी' गाँव इनको शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के पुत्र सिद्ध विद्वेषी पंडित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर 'अति लुब्ध नगर-याचक' नाम से इनका उपहास किया करते थे।

बंगाली नहीं, बिहारी

इन्हें बंग-देशीय सिद्ध करने के लिये भी कोशिश हुई थी।

बात यों है कि इनकी अधिकांश रचनाएँ शृंगार-रस से ओत-प्रोत हैं। भारतीय शृंगारी कवियों के प्रधान उपास्य देव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और व्रज-भाषा का शृंगार-साहित्य राधाकृष्ण की केलि-क्रीडाओं से भरा पड़ा है। इन्होंने भी अपने पदों में राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा-साहित्य में कहीं अन्यत्र मिलना कठिन है।

जिस समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि-कोकिल की काकली मिथिला की गली-गली को रसप्लावित कर बंगाल के श्यामल व्योम मंडल को गुँजा रहा था। चैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मंत्र-मुग्ध हो गये। वे ढूँढ-ढूँढकर इनके पद गाने लगे। इनके अलौकिक पदों को गाते-गाते प्रेमावेश में, वे मूर्च्छित हो जाते थे!

चैतन्यदेव भारत के अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिये कितने गौरव की बात है!

चैतन्यदेव की शिष्य-परम्परा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदित बढ़ती गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास, श्रीनिवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताएँ बनाना प्रारम्भ किया।

---

* 'गोविन्ददास' मैथिल कवि थे। इनके पदों का सटिप्पण संग्रह 'गोविन्दगीतावली' नाम से 'पुस्तक-भंडार' द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त लिखते हैं—"विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइआछिल, बोध हय कोन देशे कोन कविर तद्रूप हय नाइ। ताहाँरइ भाषा भंगिमा-चूरिया, गडिया-गठिया, रूप-रस, छन्दोबंध, भाव-भंगी, शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनोमोहन वैष्णवकाव्यसमूह सृजित हइल।'

श्रीत्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य, एम्० ए०, बी० एल० ने जो लिखा था उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चंडीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्द-दास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और ब्राह्म रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सब ही उनलोगों की आभा से आलोकित हैं, और उनलोगों का अनुकरण करके कविता-रचना में व्यस्त पाये जाते हैं।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों के रगरग में प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियों द्वारा गाये जाने के कारण इनके बंगदेशीय पदों का रूप भी ठेठ बँगला हो गया। अब तो बंगाली लोग यह सर्वथा भूल ही गये कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे'।

बंगाली भाई अपनी कुशाग्र बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हैं। उन लोगों ने इनका निवास-स्थान भी बंगाल ही में ढूँढ निकाला! यही नहीं, 'शिवसिंह' नामक एक बंगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े—'रानी लखिमा देवी' भी मिल गईं! यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि 'विद्यापति ठेठ बंगाली थे!

बँगला १२८२ साल में (स्वर्गीय) राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने पहले-पहल 'बङ्गदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे'। इसके प्रमाण में उन्होंने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये। फिर तो सारे बंगाल में कोलाहल मच गया। विद्यापति पर बंगाली लोग इतने फिदा थे कि उनका अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे।

उस समय एक प्रसिद्ध बँगला-लेखक ने यह अन्दाज लड़ाया था कि विद्यापति बंगाली ही थे—पहले बंगाली लोग मिथिला में विद्याध्ययन को

जाते थे—सम्भव है, विद्यापति यहाँ से विद्याध्ययन को गये हों और वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किया हो और बस गये हों।

किन्तु ये सब गपोड़-बाजियाँ अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जस्टिस शारदाचरण मित्र, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त आदि सभी बंगीय विद्वानों ने यह कबूल कर लिया है कि ये मिथिला-निवासी थे और इन्होंने मैथिली भाषा में कविता की है।

हमें धन्यवाद देना चाहिये श्रीयुत ग्रिअर्सन साहब को, जिन्होंने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

जन्म-काल

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के समय भी निश्चित नहीं हैं। किंवदन्ती तथा स्फुट पदों के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति संभव है।

पता तो केवल इसी का लगता है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या शकाब्द १३२४ में देवसिंह मरे थे, उसी साल शिवसिंह राजगद्दी पर बैठे थे, और राजगद्दी पर बैठने के छः महीने के अन्दर उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव उपहार में दिया था।

शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय में विद्यापति का एक पद यों है—

अनल[3] रन्ध्र[9] कर[2] लक्खन नरवइ सक समुद्द[4] कर[2] अगिनि[3] ससी[1]।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ बार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ अद्धासन सुरराय सरू। इत्यादि

बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' ग्रंथ में लिखा है कि "बिसपी गाँव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस वर्ष का थी—इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्त्तिलता' नाम की पुस्तक लिखी थी। इस प्रकार सहायजी उसे १६ की अवस्था में लिखी

हुई बताते है। सहायजी का यह कथन अनुमान-विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है।

सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसलमानों से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये, जहाँ से वे पुनः नहीं लौटे—सम्भवतः वे उसी युद्ध में मारे गये। इतिहास से यह * सिद्ध है, और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और शिवसिंह की संगति रही।

विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों? अनुमान की बात जाने दीजिये, इतिहास भी इसके विरुद्ध है।

सहायजी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता 'गणपति ठाकुर' के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते-जाते थे। नेपाल-दरबार के पुस्तकालय में विद्यापति रचित 'कीर्त्तिलता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी उन्होंने करा ली थी। उस 'कीर्त्ति-लता' में लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अतः राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा—वे ऐसी अवस्था के जरूर रहे होंगे कि दरबार में अपने पिता के साथ जा सकें। २९२ लक्ष्मणाब्द में यदि विद्यापति केवल २० वर्ष के थे, तो २५२ लक्ष्मणाब्द में वे राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ-जा सकते थे—उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा!

---

*'मिथिला दर्पण' के रचयिता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज करने की बात लिखी है। किन्तु 'मिथिलादर्पण' का काल-निर्णय नितांत अशुद्ध जान पड़ता है। यहाँ तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है।—लेखक

बात यों है कि सहायजी को बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री-लिखित 'मिथिला-राज्य की वंशावली' ने धोखा दिया है। खत्रीजी के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४८८ ईसवी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है *। सहायजी ने स्वयं इसका खंडन किया है, क्योंकि विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। यों खत्रीजी ने सहायजी के गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है!

किन्तु एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मानकर भी दूसरी जगह सहायजी ने उसे प्रामाणिक मान लिया है! 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंहदेव का समय खत्रीजी ने १४७० ई० लिखा है। सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है!

जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म-संवत् को आगे बढ़ाना सहायजी के लिये जरूरी था। किन्तु सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है, वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी की होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास-सिद्ध है।

स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ २० में लिखा है कि नरसिंह-देव के पुत्र धीरसिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत-ग्रंथ की 'सेतुदर्पणी' नामक टीका लिखी गई थी, जिसके अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द

---

* लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न-भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल (२९३ ल० सं०) को १४०० ई० माना है, 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' के रचयिता ने इसे १६१२ ई० लिखा है, और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है!—लेखक

मे धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये हैं। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० मे पड़ता है*। सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था, तब उसका पिता १४७० मे कैसे राजा हुआ? बस, साफ प्रकट है कि खत्रीजी ने यहाँ भी ४६ वर्ष की गलती की है।

१४७० मे ४६ घटा देने पर १४२४ ई० मे नरसिंहदेव का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार, एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है, १४२५ मे वे मर गये हो और १४२८ मे उनके पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पणी' से भी यही पता चलता है।

इसी ४६ वर्ष के फेर मे पड़कर जहाँ सहायजी ने केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम उन्हे हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिये आपने जमीन-आसमान का कुलाबा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

सहायजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने पृष्ठ २३ मे लिखा है कि ३४९ लक्ष्मणाब्द मे इनके अपने हाथ से भागवत-पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर 'चंदा झा' के साथ स्वयं 'तरौनी' जाकर उस पुस्तक को देखा था। उस पुस्तक के अंत में लिखा है—"शुभमस्तु सर्वार्थगता ल० स० ३०९ श्रावण शुदि १५ कुजे राजाबनौली ग्रामे श्रीविद्यापतिर्लिपिरियमिति।" इस ३०९ को ही सहायजी ने भ्रमवश ३४९ मान लिया है!

अब यथार्थ बात सुनिये। वह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है, और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगा।

एशियाटिक सोसाइटी में एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है, जो १३२२ शकाब्द (=२९० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी

---

* सहायजी की गणना के अनुसार।—लेखक

शिवसिंह की राजधानी 'गजरथपुर' में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने उसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' लिखा है, और शिवसिंह का नाम 'महाराजा' की उपाधि से युक्त है।

इससे दो बातों का पता चलता है। एक यह कि शिवसिंह अपने पिता के जीवनकाल में ही 'महाराजा' कहलाते थे। [मालूम होता है, वृद्ध पिता ने अपना शासन-भार पुत्र को ही सौंप दिया था और जनता शिवसिंह को ही अपना अधिपति मानती थी।] दूसरी बात यह प्रकट होती है कि शिवसिंह के सिंहासनारोहण के पहले से ही विद्यापति दरबार में रहते थे। देवसिंह के नाम से विद्यापति ने कुछ पद भी बनाये हैं।

हाँ, तो यह सिद्ध है कि पिता की मृत्यु के पहले से ही शिवसिंह राज्य-शासन करते थे। मिथिला में यह जनश्रुति है कि शिवसिंह पचास वर्ष की अवस्था में राजगद्दी पर बैठे थे और विद्यापति उनसे दो वर्ष बड़े थे। अत शिवसिंह के राज्यारोहण के समय विद्यापति की अवस्था ५२ वर्ष की थी।

यदि यह जनश्रुति तथ्यपूर्ण मान ली जाय, तो प्राय हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे, क्योंकि विद्यापति को उपर्युक्त ताम्रपत्र में 'अभिनव जयदेव' लिखा है। उस समय तक विद्यापति की कीर्त्ति चारों ओर फैल गई रही होगी। इनकी कविता के माधुर्य पर मुग्ध होकर लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहने लगे थे। इनकी कविता राजा के अन्त पुर से लेकर गरीबों की झोंपड़ियों तक में गूँज रही थी। राजसिंहासन पर बैठने के समय शिवसिंह अपने प्यारे सहचर विद्यापति को कैसे भूल सकते थे? जिसकी कविता-सुधा का पान कर वे मस्त बने थे, जिसकी कविता उन्हें और उनकी सहधर्मिणी 'लखिमा' को अमर कर चुकी थी, उसे वे कैसे कुछ पुरस्कार न देते? अत राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव प्रदान किया।

बिसपी गाँव २९३ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति को दिया गया था। उस समय उनकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष की होगी। अतः उनका जन्म २४१ लक्ष्मणाब्द में, या संवत् १४०७ विक्रमीय (= सन् १३५० ई०) में, होना सम्भव है।

इस कथन की पुष्टि पूर्वोक्त राजा गणेश्वरसिंह के दरबार में विद्यापति के आने-जानेवाली बात से भी होती है। 'कीर्त्तिलता' के अनुसार राजा गणेश्वर २५२ लक्ष्मणाब्द में परलोकवासी हुए थे। उस समय विद्यापति १०—११ वर्ष के रहे होंगे। तभी तो इनके पिता इन्हें राज-दरबार में ले जाते थे।

वंश-विवरण

विद्यापति मैथिल ब्राह्मण थे। इनका मूल 'बिसइवार' और आस्पद 'ठाकुर' था।

मैथिलों में पंजी-प्रथा का प्रचलन है। जितने मैथिल ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ हैं, सभी के नाम, पुश्त-दर-पुश्त, एक पोथी में लिखे हुए हैं। इस पोथी को 'पंजी' कहते हैं।

पंजी से पता चलता है कि 'गढ़बिसपी' में कर्मादित्य त्रिपाठी नामक ब्राह्मण रहते थे। ये राजमंत्री थे। ये विद्यापति के वंश के आदि-पुरुष 'विष्णुशर्मा ठाकुर' के पोते थे।

कर्मादित्य के बाद इनके वंश में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, सभी तत्कालीन मिथिला के राजा के दरबार में उच्च पदों पर काम करते रहे—कोई राजमंत्री थे, कोई राजपंडित—किसी को 'महामहत्तक' की उपाधि प्राप्त हुई, तो किसी को 'सान्धि-विग्रहिक' की।

इनका वंश अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के कारण उस समय मिथिला में बेजोड़ था। इनके वंश में कितने ही लेखक और कवि भी हो गये हैं।

कर्मादित्य के पोते वीरेश्वर ठाकुर ने, जो नान्य-वंशी राजा शक्रसिंह

एव उनके पुत्र हरिसिहदेव * के राजमन्त्री भी थे, 'छान्दोग्य-दशकर्मपद्धति' की रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार बिहार मे दशकर्म किये जाते है।

वीरेश्वर के सोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, 'महावार्त्तिकनैबन्धिक' नाम से प्रख्यात थे। वीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य-चिंतामणि', 'विवादरत्नाकर', 'राजनीति-रत्नाकर' आदि सप्तरत्नाकरों की रचना की थी। 'राजनीति-रत्नाकर' एक अत्यन्त बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत-कुछ प्रकाश पडता है। वे उपर्युक्त हरिसिहदेव के मन्त्री एव महासन्तक सान्धि-विग्रहिक थे।

विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। वे एक अच्छे कवि थे। उन्होने 'गगाभक्ति-तरङ्गिणी, नाम की एक पुस्तक की रचना की थी।

यो देखा जाता है कि विद्यापति का वश सरस्वती का अपूर्व कृपापात्र रहा है। जिस प्रकार इनके पूर्वजो ने राज्यकर्म मे अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती-सेवा मे भी वे लोग पीछे नही रहे है। ऐसे प्रतिभावान् कुल मे उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्य-कुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापण्डित थे। इनकी माता का नाम था 'हँसिनी देवी'।

वह पिता धन्य है, जिसे ऐसा पुत्ररत्न प्राप्त हुआ था। वह माता भी धन्य है, जिसने ऐसे पुरुषरत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। बिसपी

* हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध 'सिमराँव गढ' के अधिपति थे। उन्होंने नैपाल को जीता था।—लेखक

गाँव का प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है जहाँ ऐसे कविकोकिल ने अपना जीवन व्यतीत किया था।

कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की आराधना करके विद्यापति-सा पुत्र-रत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में बचपन से ही आया-जाया करते थे।

गणेश्वर के बाद कीर्त्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति उनके दरबार में आने-जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। कीर्त्तिसिंह के दरबार में, मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे, क्योंकि कीर्त्तिसिंह के नाम पर ही इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ 'कीर्त्तिलता' रचा था। यह पूरा ग्रन्थ नैपाल के राज-पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है।

'कीर्त्तिलता' कवि की तरुण वयस की रचना है। इसकी भाषा संस्कृत प्राकृत-मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ट' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है—

देसिल वअना सब जन मिट्ठा।
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सबको मीठी लगती है, यही जानकर मैंने अवहट्ट भाषा में इसकी रचना की है।'

किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य-कुशलता के लिये बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। इनका प्रतिद्वन्द्वी उसी अवस्था में कोई नहीं था। ये अभिमान के साथ इस पुस्तक के प्रथम पल्लव में लिखते हैं—

बालचन्द विज्जावइ भाषा। दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर-सिर सोहइ। इ निच्चय नायर-मन मोहइ॥

"बाल-चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनों पर दुष्टों की हँसी लग नहीं सकती। वह (बालचन्द्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है और यह (विद्यपति की भाषा) निश्चय-पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषा-पंडितों का—मन मोहती है।"

इस पद के एक-एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है! 'जयदेव' के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज था। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इनका कोई भी प्रतिद्वंद्वी हिन्दी-साहित्य में नहीं है।

कीर्त्तिसिंह के बाद शिवसिंह के पिता देवसिंह राजा हुए। देवसिंह के समय में राज्यशासन का भार शिवसिंह के ही कंधों पर था। इसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिंह में घनिष्टता हुई। तब से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्हीं के पास रहे।

संस्कृत-रचनाएँ

इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत-साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ हैं।

प्रथम रचना उपर्युक्त 'कीर्त्तिलता' है।

दूसरी पोथी 'भू-परिक्रमा' है। यह राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक शिक्षा से भरी कहानियाँ हैं। इसीका बृहद् रूप 'पुरुष-परीक्षा' है।

तीसरी पोथी है—'पुरुष-परीक्षा'। मालूम होता है, यह उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकास हो चुका था। यह राजा शिवसिंह की आज्ञा से, उन्हीं के राजत्वकाल में, लिखी गई थी। इसमें ललित कथाओं के रूप में धार्मिक एवं राजनीतिक विषयों का वर्णन है। इसमें भी कवि ने शृङ्गार रस के परदे में राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत मान है। १८३० ईसवी में

इसका अँगरेजी मे अनुवाद हुआ था। यह अनुवाद, लार्ड विलियम टर्नर के परामर्श से, राजा कालीकृष्ण बहादुर ने किया था। फोर्ट विलियम-कालेज मे पहले यह पाठ्य पुस्तक की तरह पढाई जाती थी। उक्त कालेज के व्रजभाषा के अध्यापक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० मे इसका भाषानुवाद किया था। ※

चौथी पुस्तक 'कान्ति-पताका' है। इसमे मैथिली भाषा मे लिखी गई प्रेम-सम्बन्धी कविताएँ है।

पाँचवीं 'लिखनावली' है, जिसमे संस्कृत मे पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। यह रजायनौली के अधिपति 'पुरादित्य' के लिये, २९९ लक्ष्मणाब्द मे, लिखी गई थी। इसी रजावनौली मे विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द मे अपने हाथ से 'भागवत' लिखकर समाप्त की थी।

छठी पुस्तक 'शैव-सर्वस्व-सार' है। यह शिवसिंह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद रानी विश्वासदेवा के समय मे, लिखी गई थी। इसमे भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओं की कीर्ति-कथा है एव शिव की पूजा की विधि लिखी हुई है।

सातवी पुस्तक 'गगा-वाक्यावलि' है, जो विश्वासदेवी के ही लिये लिखी गई थी।

आठवी पुस्तक है – 'दान-वाक्यावलि'। यह राजा नरसिंह देव की स्त्री 'धीरमती' को समर्पित की गई है।

नवी पुस्तक 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' दुर्गा-पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिंहदेव के कहने से हुआ था। धीरसिंह के समय मे यह पूरी हुई थी। इसमे धीरसिंह के भाई भैरवसिंह और चन्द्रसिंह के भी नाम आये हैं।

※ 'पुरुष परीक्षा' का शुद्ध हिन्दी-अनुवाद 'पुस्तक भडार' से एक रुपये मे मिल सकता है।— प्रकाशक

किया था। ऐसी अवस्था मे इनका शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, इनका पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त-वछल प्रभु बान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा॥

"कोई चन्द्र की पूजा करते है। कोई विष्णु की पूजा करते है। किन्तु मैने सबको छोड दिया। हे वाण-महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।"

ये वाण-महेश्वर कौन है? 'बिसपी' से उत्तर 'भेडवा' नामक एक गॉव मे आज भी वाणेश्वर-महादेव है। कहते है कि ये इसी महादेव की उपासना करते थे।

वही नहीं, इनके बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ हैं, जो मिथिला मे इनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध है। मिथिला मे इनकी पदावली तो विशेषत स्त्रियो मे प्रचलित है। अधिकतर स्त्रियाँ ही इनके पद गाती हैं। पुरुषो मे तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध है। तीर्थ-स्थानों को जाती हुई झुड-की-झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुर पद गाती-झूमती जाती है, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुष के झुड बडे प्रेम से नचारियॉ गाते है।

कहते हैं, स्वयं महादेवजी इनकी भक्ति पर मुग्ध थे।

एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया, और इनकी नौकरी करने की अनुमति मॉगी। इन्होंने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई-कोई 'उदना' भी कहते है। 'उगना' के रूप मे स्वयं महादेवजी थे।

'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी सेवा मे लीन रहता। एक दिन उसके साथ ये कहीं जा रहे थे। रास्ते मे इन्हे प्यास

लगा। उसने कहा। वह चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा। ये उसे पीने लगे।

किन्तु, पीने पर इन्हें मालूम हुआ कि यह पानी गंगा का है। पूछा—"उगना, यह पानी कहाँ से लाया है?

'उगना' ने कहा—"निकट के ही कुँए से!

इन्होंने कहा—"यह जल कुँए का हो नहीं सकता, यह तो गंगाजल है।

बहुत कहने-सुनने पर भी जब इनको सन्तोष न हुआ, तब 'उगना' ने अपना यथार्थ रूप प्रकट किया। स्वयं महादेव 'उगना' के रूप में थे! यह पानी उन्हीं की जटा का था!

उस जगह, निकट में, कोई कुँआ या तालाब न पाकर महादेव ने अपनी जटा से पानी लेकर इन्हें दिया था। महादेव ने कहा—"देखो, तुम मेरे पूर्ण भक्त हो। मैं तुमसे अलग नहीं रहना चाहता। किन्तु प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी यह बात किसी से न कहोगे। खबरदार, जिस दिन यह बात प्रकट करोगे, उसी दिन मैं अन्तर्द्धान हो जाऊँगा।"

'उगना' इनके पास रहने लगा। किन्तु ये अब उसे कभी कोई नीच काम करने को न कहते। एक दिन इनकी स्त्री ने उससे कुछ लाने के लिये कहा। उसके लाने में देर हुई। ब्राह्मणी बिगड़ पड़ी। ज्योंही वह निकट आया, एक चैला लेकर टूट पड़ी। यह देखकर ये चिल्ला उठे—"हा-हा! यह क्या कर रही हो? साक्षात शिव पर प्रहार!!!"

उसी क्षण 'उगना' अन्तर्द्धान हो गया। विद्यापति पागल होकर गाने लगे—

उगना रे मोर कतए गेला।
कतए गेला सिव कीदहु भेला॥
भाँग नहिं बटुआ रुसि बैसलाह।
जोहि हेरि आनि देल हँसि उठलाह॥

जे मोर कहता उगना उदेस ।
ताहि देबओ कर कँगना वेस ॥
नन्दन-वन मे भेटल महेस ।
गौरि मन हरखित मेटल कलेस ॥
विद्यापति भन उगना सों काज ।
नहि हितकर मोर त्रिभुवन राज ॥

इस तरह के कई पद हैं ।

यद्यपि इस नास्तिकवाद के वैज्ञानिक युग मे इस कथा पर लोगो का विश्वास न जमेगा किन्तु ऐसी घटनाओं से प्राचीन भारतीय इतिहास भरा पडा है । इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि ये वैष्णव नहीं, शैव थे । हॉ, यह बात निस्सन्देह सत्य है कि ये आज-कल के शैवों की तरह विष्णुद्रोही नहीं थे । ये शिव और विष्णु को एक ही रूप की दो कलाएँ मानते थे । इनका यह पद्य है—

भल हरि भल हर भल तुअ कला ।
खन पित बसन खनहि बघछला ।—इत्यादि

साथ-ही-साथ, देवियों—खासकर 'दुर्गा'—की स्तुति जो इन्होंने की है, उससे इनके शाक्त होने के विषय मे जरा भी सन्देह नहीं हो सकता । इनकी आलोचना करने पर ऐसा ही विश्वास दृढ होता है कि आधुनिक मैथिलों की तरह ये शिव, विष्णु तथा चंडी—तीनों—को मानते थे, पर किसी एक विशेष सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं थे ।

यदि आप आज मैथिलों के सिर का चन्दन देखेंगे तो बात स्पष्ट हो जायगी । वे एक ही साथ भस्मत्रिपुण्ड्र भी धारण करते हैं, श्रीखण्ड-चन्दन भी और सिन्दुर-बिन्दु भी उपर्युक्त तीनों देवताओं की ये तीनों निशानियाँ हैं वे तीनों को समान आदर की दृष्टि से देखते हैं, पर किसी एक सम्प्रदाय के नहीं हैं ।

आश्रयदाता शिवसिंह

इनके प्रधान आश्रयदाता राजा शिवसिंह थे। उन्हीं की छत्र-च्छाया में रहकर इन्होंने अपने अधिकांश पदों की रचना की थी। जिस प्रकार शिवसिंह ने प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सांसारिक झंझटों से मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार बदले में इन्होंने उनका और उनकी धर्मपत्नी 'लखिमा देवी' का नाम अपने पदों में देकर उन्हें अजर-अमर बना दिया है। शिवसिंह का भौतिक दान तो थोड़े ही दिनों में विलीन हो गया, किन्तु इन्होंने जो उन्हें यश का दान दिया वह अनन्त काल तक संसार में विद्यमान रहेगा।

ये शिवसिंह कौन थे?

मिथिला के नवीन युग के शासकों में 'सिमराँव' और 'सुगाँव' के राजघराने अधिक प्रसिद्ध हैं। राजा शिवसिंह 'सुगाँव'–राजघराने में हुए थे। 'सुगाँव-राजघराने के पहले 'सिमराँव'-राजघराने के लोग शासन करते थे। उनकी राजधानी 'सिमराँव- गढ' में थी—जो वर्त्तमान चम्पारण जिले में है।

सिमराँव के राजा क्षत्रिय थे। इस राज्य के संस्थापक नान्यदेव थे। इसी राजकुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंहदेव हुए थे जिन्होंने नैपाल-विजय किया था। हरिसिंहदेव के मंत्री विद्यापति के पूर्वज चंडेश्वर थे और उनके राजपंडित कामेश्वर ठाकुर।

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंहदेव ने एक बृहद्- यज्ञानुष्ठान किया था। किन्तु अन्य राजाओं द्वारा यज्ञ भ्रष्ट कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल में चले गये।

इसी समय सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढाई की। मिथिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का चिर मनोरथ पूरा हुआ—मिथिला का शासन-सूत्र मुसलमानों के हाथ आया।

इस अवसर पर राजपण्डित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से भेंट की। बादशाह* उनके गुण से अत्यन्त सन्तुष्ट हुए—उनके अस्वीकार करने पर भी उन्हीं को मिथिला-प्रदेश का शासक नियुक्त किया। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ आया।

कामेश्वर ठाकुर 'ओयनवार' ब्राह्मण थे। उनके पूर्वपुरुष प० ओयन ठाकुर ने किसी राजा से—सम्भवतः नान्यदेव से—'ओयनी' नामक गाँव उपहार मे पाया था। 'ओयनी' (बैनी) गाँव दरभगा जिले मे पूसा-रोड स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव मे बसने के कारण इस वंश को 'ओयनवार वश' कहते हैं।

ओयनवार-वश के सबसे प्रथम राजा यही कामेश्वर ठाकुर हुए। उनके बाद उनके पुत्र भोगेश्वर, और भोगेश्वर के बाद उनके पुत्र गणेश्वर, राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे–वीरसिंहदेव और कीर्त्तिसिंह। इन्हीं कीर्त्तिसिंह के दरबार मे विद्यापति ने कीर्त्तिलता का निर्माण किया था। कीर्त्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह निःसन्तान मरे, तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।

राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। उनकी राजधानी 'गजरथपुर' नामक नगर मे बागमती नदी के किनारे थी।

यह गजरथपुर कहाँ है? दरभगे से ४–५ मील पूर्व-दक्षिण कोने पर 'सिवईसिंहपुर' नामक एक गाँव है। लोगों का कहना है, उसी का दूसरा नाम गजरथपुर था। वहाँ जाकर पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यही शिवसिंह की राजधानी थी—इधर भी उस गढ़ को खोदने मे कभी-कभी सोना-चाँदी द्रव्य मिलते थे, किन्तु अब गढ का कहीं पता नहीं है—जहाँ पहले गढ था, वहाँ अब खेत लहरा रहे हैं।

---

*उस समय तुगलक वशी पठान सम्राट् गयासुद्दीन का राज्यकाल था।—लेखक

शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देखकर मालूम होता है, वे बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ* पुरुष थे। विद्यापति के पदों में उनके नाम के साथ-साथ उनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी का नाम पदों में देने से लोगों ने उलटा-सीधा बहुत-कुछ अनुमान किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यों है कि विद्यापति ने जहाँ कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहीं साथ-ही-साथ साधारणतया उसकी रानी का भी नाम दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी के नाम पदों में होने के विषय में मिथिला में यह प्रवाद है कि विद्यापति जिन पदों की रचना करते थे, वे सब राजा के अन्तःपुर में गाये जाते थे। राजा-रानी दोनों अन्तःपुर में एकत्र बैठते उनके चारों ओर स्त्रियाँ आ बैठतीं। उस समय 'केर्टा' (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी राजा और रानी की भणिता से युक्त विद्यापति के पद गाने लगती।

'केर्टा' स्त्रियाँ गान-विद्या में निपुण होती थीं। वे महल में किसी काम के लिये नियुक्त की जाती थीं।

इनके पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के भी नाम आये हैं। सम्भवतः लखिमादेवी ही पटरानी रही हों, या उन्हीं पर राजा की सबसे अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के वे अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली 'कर' भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई। दैव-दुर्विपाक से शिवसिंह कैद

---

* विद्यापति के ही समान अन्य कितने कवि भी शिवसिंह के दरबार में थे। कहते हैं कि उन्हीं में से एक उमापति थे, जो 'पारिजात हरण' और 'रुक्मिणी-परिणय' नामक भाषा नाटकों के रचयिता कहे जाते हैं। लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को ही मानते थे। —लेखक



करके दिल्ली ले जाये गये। देवसिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया, किन्तु पुत्रशोक से पीडित रहने लगे।

इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना! तब ये अपनी जान पर खेलकर शिवसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुलतान ने हुकुम दिया – अगर शायर हो, तो कुछ करामात दिखाओ। इन्होंने कहा कि मैं अदृष्ट का दृष्टवत वर्णन कर सकता हूँ। सुलतान ने एक सद्यःस्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। ये गाने लगे –

कामिनी करए सनाने।

हेरितहि हृदय हनए पँचबाने।—आदि

सुलतान को इससे भी संतुष्टि नहीं हुई। विद्यापति एक काठ के संदूक में बंद किये गये और वह संदूक कुँए में लटका दिया गया। ऊपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूँकती हुई खडी की गई। तब इनसे कहा गया कि ऊपर जो कुछ है उसका वर्णन करो। ये संदूक के अन्दर से गाने लगे—

सजनी निहुरि फुकु आगि।
तोहर कमल भमर मोर देखल
मदन ऊठल जागि।
जो तोहे भामिनि भवन जएबह
ऐबह कोनह बेला।
जो ए संकट सौं जी बाँचत
होयत लोचन मेला॥

बादशाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजा शिवसिंह छोड दिये गये। तब इन्होंने निम्नलिखित पद कहा—

भन विद्यापति चाहथि जे विधि
करथि से से लीला।

राजा सिवसिंह बँधन मोचन
तखन सुकवि जोला ॥

राजा शिवसिंह की दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला में प्रचलित हैं। उन्होंने अपने पिता का तुलादान कराया था। कितने ही तालाब खुदवाये थे। प्राचीन कमला नदी के किनारे 'लहेरा' नामक गाँव में घोडदौड नामक एक तालाब खुदवाया था। कहते हैं, उन्होंने वहाँ अपना निवासस्थान भी बनाया था। उसका भग्नावशेष अभी तक पाया जाता है। मधुबनी (दरभंगा) से दक्षिण 'पतौल' नामक गाँव में उनका खुदवाया हुआ एक तालाब है, जिसके विषय मे यह कहावत प्रसिद्ध है—

पोखरि रजोखरि और सब पोखरा।
राजा सिवसिंह और सब छोकरा॥

वे बहुत दिनों तक युवराज के रूप मे कार्य करते रहे, किन्तु प्रजा उन्हें ही अपना राजा समझती थी। देवसिंह तो नाम-मात्र के राजा थे। युवराजावस्था में ही शिवसिंह 'महाराज' कहे जाते थे।

ल० २९३ मे देवसिंह की मृत्यु हुई। ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढ़ाई कर दी। दिल्लीश्वर के साथ बंगाल के नवाब भी थे। शिवसिंह के लिये बड़े संकट का समय था। एक ओर पिता का श्राद्धादि कर्म, दूसरी ओर युद्ध का आयोजन!

विद्यापति ने प्राकृत मिश्रित एक पद में शिवसिंह की इस विजय की चर्चा यों की है—

अनल रंध्र कर लक्खन नरवइ, सक समुद्द कर अगिन ससी।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ, वार वेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहमी छड्डिअ अद्धासन सुरराए सरु।
दुहु सुरतान नींदे अब सोअओ तपन हीन जग तिमिर भरु॥
देखहु ओ पृथिवी के राजा, पौरुस माझ पुन्न वलिओ।
सत वले गंगा मिलिअ कलेवर, देवसिंह सुरपुर चलिओ॥

एकदिस सकल जवन बल चलिओ, ओकादिस से जमराए च।
दूअओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंघ करू॥
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ, दुन्दुभिसुन्दर साद धरू।
वीर छत्त देखन को कारन, सुरगन सते गगन भरू॥
आरम्भिए अन्तेट्टि महामख, राजसूअ असमेध जहाँ।
पंडित घर अचार वर वानिज, जाचक कों घर दान कहाँ॥
विज्जावइ कविवर यहु गावय, मानव मन आनन्द भओ।
सिंहासन सिवसिह बइठ्ठो, उच्छवै वैरस विसरि गओ॥

शिवसिंह ने राजगद्दी पर बैठते ही उनको विसपी गाँव उपहार मे दे दिया। राज्यारोहण के तीनहीं वर्ष बाद पुन यवन-सेना मिथिला पर आ चढी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावत बादशाह ने बडी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये। किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। उन्होंने अपनी स्त्रियों को, विद्यापति के साथ, अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास 'रजा-बनौली' (नेपाल-तराई) भेज दिया।

राजा पुरादित्य द्रोणवार-कुल के ब्राह्मण थे। बडे ही प्रताप-शाली थे। अपने बाहुबल से सप्तरी-परगना जीतकर उसमे अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी 'लिखनावली' मे लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुलं तदीय वसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता।
दोर्दर्पार्जित सप्तरीजनपदे राज्यस्थिति कारिता।
संग्रामेऽर्जुन भूपतिर्विनिहतो वन्धोनृशसायित।
तेनेयं लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता॥

शिवसिंह, सेना के साथ, बादशाह से जा भिडे। वे शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उडाते हुए फिर बाहर निकल आये। उनकी वीरता पर

बादशाह मुग्ध हो गया। यवन-सेना उनके पीछे दौड़ी, तो बादशाह ने मना कर दिया।

शिवसिंह वहाँ से नेपाल की ओर जंगल में चले गये और पुनः अपने राज्य में न लौटे। कोई-कोई कहते हैं, वे मारे गये।

उनकी मृत्यु—अथवा पलायन—के बाद, मालूम होता है, विद्यापति बहुत दिनों तक लखिमा देवी* के साथ रजाबनौली में ही रहे, क्योंकि यहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में यहाँ के राजा पुरादित्य के लिये इन्होंने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०९ लक्ष्मणाब्द में इन्होंने स्वलिखित भागवत की पोथी भी यहीं समाप्त की।

लिखनावली' के बाद इन्होंने शिवसिंहके भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वासदेवी के लिये दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रन्थों में समय नहीं दिये गये हैं।

पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिये इन्होंने 'विभागसार' की रचना की थी। उनकी स्त्री धीरमती के लिये 'दानवाक्यावली' लिखी थी।

इनकी अन्तिम रचना 'दुर्गा-भक्ति-तरंगिणी' है। यह नरसिंहदेव के समय में प्रारम्भ की गई थी और धीरसिंह के राजत्वकाल में समाप्त हुई थी।

धीरसिंह का समय 'सेतुदर्पिणी' के अनुसार, ३२१ लक्ष्मणाब्द है। अतएव, इस समय तक, अर्थात् संवत् १४८७ वि० या १४३० † ई० तक इनका जीवित रहना सब प्रकार से सिद्ध है।

---

*लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जनश्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी-किसी ऐतिहासिक के मत से उन्होंने शिवसिंह के बाद ६ वर्ष तक राज भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने कहीं भी इसकी ओर इशारा तक नहीं किया है। अतः यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है। —लेखक

† 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' में ३२१ लक्ष्मणाब्द को १४३९ ई० लिखा है। —लेखक

मृत्यु-काल

३२१ लक्ष्मणाब्द तक इनका जीवित रहना सिद्ध होता है। धीरसिंह के बाद के किसी राजा के नाम से‡ लिखी गई इनकी कोई पुस्तक नहीं मिलता है। इससे अनुमान होता है कि धीरसिंह के राजत्वकाल में ही या उनके थोड़े ही दिनों के बाद इनकी मृत्यु हो गई। इनका एक पद यों है—

सपन देखल हम सिवसिंघ भूप।
बतिस बरस पर सामर रूप॥
बहुत देखल गुरुजन प्राचीन।
आब भेलहुँ हम आयुविहीन॥
सिमटु सिमटु निअ लोचन नीर।
ककरहु काल न राखथि थीर॥
विद्यापति सुगतिक प्रस्ताव।
त्याग के करुणा रसक सुभाव॥

इससे पता चलता है कि शिवसिंह के मृत्यु के बत्तीस वर्ष बाद विद्यापति ने उन्हें स्वप्न में देखा था। ऐसी प्राचीन धारणा है कि 'बहुत दिनों पर यदि अपना कोई मृत प्रेम-पात्र मलिन वेश में दीख पड़े, तो मृत्यु निकट समझनी चाहिये'। यही भाव बड़े ही कारुणिक शब्दों में उपर्युक्त पद में वर्णित है।

---

‡ विद्यापति के एक पद में 'कंसदलन नारायण सुन्दर तसु रंगिनि पए होई' ऐसी भणिता है। मैंने भ्रमवश पहले इस 'कंस दलन-नारायण' को 'कंस-नारायण' नामक मिथिला का राजा समझा था। एक तो नाम में ही भेद है, दूसरे राधा का वर्णन है, अतः वहाँ कृष्ण अर्थ है। 'कंस नारायण' विद्यापति की मृत्यु के बहुत पश्चात् राजा हुए थे।—लेखक

शिवसिंह २९६ लक्ष्मणाब्द मे मरे थे अत. ३२८ लक्ष्मणाब्द मे विद्यापति ने उक्त स्वप्न देखा होगा, जो विक्रमीय संवत १४९४ होता है। यदि हम इस स्वप्न के तीन वर्ष के बाद इनकी मृत्यु मान ले, तो ये नब्बे वर्ष की अवस्था मे, सवत १४९७ वि० मे (या १४४० ईसवी मे), मरे थे। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त ने भी इसी समय को प्रामाणिक माना है।

उस समय ये बूढे हो चले थे। जन्म-भर शृगार-रचना मे व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय मे ससार से इन्हे विरक्ति हो गई थी। इन्हे अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता था—निराशा की काली घटाने इनके हृदय-व्योम को आच्छादित कर लिया था। ये अत्यन्त करुण-स्वर मे गाते है—

तातल सैकत वारि-बॅद सम, सुत मित रमणि समाज।
तोहे बिसरि मन ताहि समर्पिनु अब मझु हब कौन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहु जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसवासा॥
आध जनम हम नींद गमायनु जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि रभसरॅग मातनु तोहे भजब कओन बेला॥

इन्होने अपनी कविता-रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था मे इस धन को देख-देखकर कहते है—

जतन जतेक धन पापे बटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए करम सग चलि जाए॥
ए हरि वन्दो तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु जुवती मतिमय मेलि।
अमृत तजि किए हलाहल पीअनु सम्पद अपदहि भेलि॥

ये अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

वयस, कतह चल गेला।
तोहे सेवइत जनम वहल, तइओ न अपन भेला॥

वयस, तुम कहाँ चले गये। तुम्हें सेवते हुए अपना जन्म बिता दिया, किन्तु तुम अपने न हुए!

कहा जाता है, अपना मृत्यु-समय निकट आया जान ये अपने घर के लोगों से विदा लेकर गंगा-सेवन को चले। गंगा-सेवन की प्रथा मिथिला में अद्यावधि प्रचुरता से प्रचलित है। गंगा-यात्रा के अवसर पर इन्होंने अपने पुत्र को बहुत-कुछ उपदेश दिया। कहा—"बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि-सत्कार में कभी न चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के तुल्य जानना।"

पश्चात् ये अपनी कुल-देवी विश्वेश्वरी के निकट गये। देवी से जाने की अनुमति माँगी। कहा—"माँ, अब गंगा जा रहा हूँ। जन्म-भर शिव की आराधना की। अब विदा दो।"

घर पर सभी को सन्तोष दे, पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले। राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तब अपनी पालकी रखवा दी। एक अभिमानी भक्त की तरह कहा— "मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिये दो कोस आगे नहीं बढ़ आवेगी?"

रात बीती। दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये। गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर, पहुँच गई थी!!

आज तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है। उस स्थान का नाम 'मऊ वाजितपुर' है। यह दरभंगा जिले में है। यहीं इनकी मृत्यु हुई।

इनकी चिता पर एक शिव-मन्दिर की स्थापना की गई। यह शिव-मंदिर आजतक विद्यमान है। इनकी मृत्यु-तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है।

विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदसि जान॥

इसके अनुसार इनकी मृत्यु कार्त्तिक शुक्ला त्रयोदशी को हुई। यह तिथि प्रामाणिक समझ पडती है। कार्त्तिक महीने में गंगा-सेवन करने का, हिन्दू-शास्त्र के अनुसार, बड़ा महत्त्व है। इनकी मृत्यु गंगा-तट पर

हुई थी—जब कि ये गंगा-सेवन करने गये थे। अतः इस तिथि को अप्रामाणिक मानने का कोई कारण नहीं।

हस्ताक्षर

विद्यापति प्राचीन हिन्दी-कवि चन्द बरदाई को छोड़कर, सभी प्रसिद्ध हिन्दी-कवियों से पहले हुए थे। इनके हाथ की लिखी हुई इनकी निजी रचना—पदावली या संस्कृत-पोथियाँ—नहीं पाई जातीं। हाँ, एक 'सटीक भागवत' की पोथी इनके हाथ की लिखी अवश्य पाई जाती है। यह पुस्तक दरभंगे से बारह कोस दूर 'तरौनी' नामक गाँव में जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभंगा-जिले की पंडितमंडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति से भी यह सिद्ध है कि यह विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह ताल-पत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फीट और डेढ़ इंच तथा चौड़ाई सवा दो इंच के लगभग है। पत्र की संख्या ५७६ है। पत्र के दोनों ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ में छः पंक्तियाँ हैं। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग-अलग, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपिदोष नहीं। रोशनाई प्रायः सर्वत्र स्वच्छ। अन्तिम पत्र काष्ठ के वेष्टन, घर्षण और बन्धन के कारण जीर्ण हो गया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रन्थ के शेष में लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता संख्या ल० स० ३०९ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजावनौलीग्रामे श्रीविद्यापतिलिपिरियमिति।"

अन्तिम दो अक्षर 'मिति' पत्रांश से छिन्न हो गया है। 'रजावनौली' गाँव दरभंगे से प्रायः १५ कोस उत्तर है। शिवसिंह २९३ लक्ष्मणाब्द में राज्यासन पर बैठे थे। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है।

मालूम होता है, शिवसिंह की मृत्यु के बाद इनका जी सांसारिक कार्यों से उचट गया था—कम-से-कम शृंगारिक रचनाओं की ओर से।

मित्र-वियोग होने पर ऐसा होना सम्भव भी है। इसी शोकावस्था में अपने चित्त की शान्ति के लिये, इन्होंने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो तो आश्चर्य नहीं।

परिवार

इनके बेटे का नाम 'हरपति' था। इनके एक पद में उनका नाम आया है। इनके एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लडकी का नाम 'दुलही' था। इन्होंने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें पति-गृह-गमन के समय कन्या को उपदेश दिया गया है। उन पदों में 'दुलही' शब्द आया है। कहते हैं, ये पद इन्होंने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे।

'दुलही' का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम, क्या रहस्य है? मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में एक पद प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लडकी का नाम 'दुलही' था। अन्तिम काल में ये कहते हैं—

दुल्लहि, तोहर कतय छथि माऐ।
कहुन ओ आवथु एखन नहाए॥

'दुलही' तुम्हारी माँ कहाँ हैं? कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें।'

दरभंगे के वर्त्तमान राजघराने में 'नरपति ठाकुर' नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में 'लोचन' नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का संकलन किया था। उसमें उसने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं।

'रागतरंगिनी' में एक कविता 'चन्द्रकला' नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है—"इतिश्रीविद्यापतिपुत्रवध्वा"। इससे मालूम होता है, 'चन्द्रकला' विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमल कच गडमडित कोमलम् ।
अधर बिम्ब समान सुन्दर शरदचन्द्रनिभ ननम् ॥
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्ज्वल सौरभम् ।
बाहुवल्लि मृणाल पकज हार शोभित ते शुभम् ॥
शोभय सुन्दरि मम हृदयम् ।
गदगद हास सुदति निपुणम ॥
उर पीन कठिन विशाल कोमल याति युग्म निरतरम् ।
श्रीफला कमला विचित्र विधातु निर्मल कुच वरम् ॥
श्यामा सुवेपा त्रिवलि रेखा जघनभार विलम्बिते ।
मत्त गज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते ॥
सुललित मन्द गमन करई ।
जनि पति सग वरटा भमई ॥
अतिरूप यौवन प्रथम सम्भव किं वृथा कथया प्रिये ।
तेजह रूप-विमोह परिहरि शोक चिन्तित चिन्तये ॥
उपयात मदन-व्याधि दु सह दहए पावक से वनम् ।
पवन दिसे दिसे दहए पावक युगमदारज सम्वरम ॥
श्यामा सवन्दिते ।
अति स्मय गीत सुशोभिते ॥
आत्म दान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये ।
सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम् ।
अधर-सुधा मधुपानमियम् ॥
चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोहें राधिके ।
वचन मम वर कृष्णमनुसर किन्तु कामकला शुभे ।
चन्द्रकला हे वचन करसी ।
मानिनि माधवमनुसरसी ॥

सहपाठी पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकांड विद्वान हो गये है। वे विद्यापति के सहपाठी थे। इन्होंने 'विसपी' गाँव मे एक अतिथिशाला बनवा रक्खा था। प्रतिदिन भोजन के पश्चात ये स्वय अतिथिशाला मे जाते और अतिथियों मे वार्त्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब ये अतिथिशाला मे गये तब सभी अतिथि इनकी अभ्यर्थना मे खडे हो गये। केवल कोने मे एक अत्यन्त कृश पुरुष बैठा ही रहा। इनके पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि उसने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता पर इनके मुख से सहसा निकल गया—

"प्राघुणो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षित ।'

'घर के कोन मे सूक्ष्म कीट- घुन -वत अतिथि सूक्ष्मतावशत नही दीख पडे।'

बैठे हुये पुरुष ने तुरत उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया—

"नहि स्थूलधिय. पुंस सूक्ष्मे दृष्टि. प्राययते ॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नही दीख पडता।'

बोली सुनते ही ये अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हे आदरपूवक अपने घर ले आये। पक्षधर मिश्र सम्भवत इनसे कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक 'विष्णुपुराण' में ३४५ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्वेषी केशव मिश्र

बडे लोगों के प्रति उनके अडोस-पडोसवाले सदा द्वेष-भाव रखते है, यह बात स्वयसिद्ध है। इनके भी कुछ लोग विद्वेषी थे। ये शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, भावावेश मे, निज प्रणीत नचारी गाते-गाते, ये नाचने तक लगते थे। इसी कारण कुछ लोग इन्हें 'नर्त्तक' नाम से चिढाते थे।



ऐसा प्रवाद है इनके एक और प्रसिद्ध विद्वेषी हो गये हैं, जिनका नाम है, 'केशव मिश्र'। इनका समय ४७३ लक्ष्मणाब्द है अर्थात इनके लगभग सौ वर्ष पश्चात।

मिश्रजी प्रसिद्ध शाक्त थे। 'द्वैत-परिशिष्ट' नामक स्वरचित ग्रन्थ मे उन्होंने 'देवीभागवत' को प्रामाणिक ग्रन्थ प्रतिपादित किया है।

विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिये मिश्रजी इनसे चिड-से गये थे। वे इनका 'अतिलुब्ध नगग्याचक' नाम से उपहास करते थे। इन्होंने 'विसपी' गाँव उपहार-रूप मे ग्रहण किया था—इसीलिये ये 'नगग्याचक' थे! द्वेष का कोई ठिकाना है!

मिश्रजी शिवसिंह के कुल की दौहित्र-संतान थे—राजकुटुम्ब के पुरुष थे। अतएव ऐसी उद्दंडता—ऐसी विद्वेषबुद्धि—स्वाभाविक भी है!



पदावली

यद्यपि इन्होंने लगभग एक दर्जन संस्कृत-ग्रन्थों का निर्माण किया था, तथापि इनकी प्रसिद्धि का खास कारण है इनकी 'पदावली'।

गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते है। इन्होंने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए है। इन्होंने कविता में जयदेव को आदर्श माना है—लोग इन्हे 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अत, जयदेव के ही समान, ये सगीत-पूर्ण कोमल-कान्त पदावली मे शृंगारिक रचना करते थे।

राजा नरपति ठाकुर के दरबारी कवि 'लोचन' ने अपनी 'राग-तरंगिणी' में लिखा है कि 'सुमति' नामक एक कलाविद् कायस्थ कत्थक के लड़के 'जयत' को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

सुमतिसुतोदयजन्मा जयत शिवसिंहदेवेन।
पडितवरकविशेखर विद्यापतये तु सन्न्यस्त ॥

विना सगीत का मर्म जाने सगीतमय पदों को रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, ये स्वय भी गान-विद्या मे पारगत थे।

इनके पदों में कहीं-कहीं छन्दोभग-सा दीख पड़ता है। किन्तु, सूरदास के पदों में भी यही बात पाई जाती है। पर संगीत के सुर-लय के अनुसार जो पद बनाये जाते है, उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है—अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीलिये सगीत से अपरिचित व्यक्तियों को इनके पदो में छन्दोभग का आभास मिल जाता है।

पदावली का रूप

इन्होंने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चलता है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का सग्रह प्रकाशित किया

था। बाबू ब्रजनन्दनसहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे पद हैं, जो नगेन्द्रनाथ गुप्तवाले संस्करण में नहीं हैं। सहायजी के नये पदों में नचारियों की ही प्रधानता है।

किन्तु अभीतक इनके बहुत-से अनूठे पद अप्रकाशित ही हैं। मिथिला की स्त्रियाँ जिन पदों को विवाह के अवसर पर गाती हैं उनका, तथा बहुत-सी नचारियों का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणों को देखने से पता चलता है कि इन्होंने पदों की रचना विषय-विभाग के अनुसार नहीं की थी। 'बिहारी' के ही समान ये भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगों ने उनका अलग-अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो इनके अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही हैं और उन्हीं का संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बँगला के प्राचीन संग्रह-ग्रंथों में है, किन्तु हाल में तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ मिले हैं जिनसे इनके कितने नवीन पद प्राप्त हुए हैं, एवं पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रन्थों में सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी भी विद्यापति-लिखित 'भागवत' के साथ 'तरौनी' ग्राम के उन्हीं स्वर्गीय पंडितजी के घर में सुरक्षित पाई गई है। कहा जाता है कि विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे लिखा था। इस पोथी की लिखावट और इसके तालपत्र को देखने से मालूम होता है कि कम-से-कम तीन सौ वर्षों का यह प्राचीन है। लापरवाही से रखने के कारण यह पोथी जीर्ण-शीर्ण हो गई है। पहला और दूसरा पत्र गायब है। फिर नवाँ नहीं है। इसके बाद ८१ से लेकर ९५ पत्र तक एकदम नहीं है। १०३ नम्बर का पत्र भी गायब है। १३२ पत्र के बाद का कुछ भी अंश नहीं मिलता। सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नहीं चलता कि यह कब लिखी गई, किसने इसे लिखा और कुल कितने पद इसमें थे। इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं।

दूसरी पोथी नेपाल में पाई गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्रथम-प्रथम इसे नेपाल-दरबार के पुस्तकालय में देखा था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है किन्तु इस पोथी की भाषा में नेपाल-तराई (मोरँग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। मालूम होता है, इसे किसी मोरँग-निवासी ने लोगों से सुनकर लिखा था, जिससे ऐसी गलती हुई है। इस पोथी में लगभग ३०० पद हैं।

तीसरी पोथी है पूर्वोक्त रागतरंगिणी। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं। प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम और मात्राओं की संख्या भी दी है। यह ढाई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—'अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम-प्रथम विद्यापति ने ही की'।

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अबतक विवाद-ग्रस्त रही है। बंगाली लोग इनको बँगला का प्रथम कवि या बंगभाषा का प्रवर्त्तक मानते हैं। इसी लिये उनलोगों ने इनको बंगाली सिद्ध करने की भी चेष्टा की थी। किन्तु अब तो यह सब प्रकार सिद्ध हो गया कि ये मैथिल थे।

मैथिलों की एक खास बोली है—'मैथिली'। विद्यापति भी मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हें अपनी बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। सचमुच यही ठीक है।

किन्तु यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंगभाषा की या हिन्दी-भाषा की ? बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली को व्रज-बोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है।

गुप्तजी 'प्राच्य-विद्या-महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य रखता है। हमारी राय भी उनसे मिलती है।

मिथिला वंग-देश से सटी हुई है। विद्यापति का जन्म दरभंगे में हुआ था, जो द्वारबंग या 'बंगाल का द्वार' है। इसलिये मैथिली पर बंगभाषा का प्रभाव जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक बँगला की।

जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी, अँगरेजी पोशाक पहनकर, अँगरेज नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली भी हिन्दी को छोड़कर बंगभाषा की नहीं हो सकती। हाँ, बंगभाषा के संसर्ग मे इसमे मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज-कल की मैथिली में कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष बीते। इन पाँच सौ वर्षों मे भाषा में कुछ-न-कुछ परिवर्त्तन होना बहुत सम्भव है।

कुछ मैथिल महाशय इन पदों की भाषा को तोड-फोडकर आज-कल की मैथिली-बोली से मिलाने का अनुचित प्रयत्न करते हैं। किन्तु क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे कि ऐसा करके वे इनकी स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा रहे हैं।

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खूब हुई है। बंगालियों ने उसे ठेठ बँगला का रूप दे दिया है, मोरंगवालों ने मोरंग का रंग चढाया है, बाबू ब्रजनन्दनसहायजी ने उसपर भोजपुरी की कलई की है, और आज-कल के मैथिल उसपर आधुनिक मैथिली का रोगन चढा रहे हैं। भगवान इनकी कोमलकान्त पदावली की रक्षा करे।

पदावली की विशेषता

इनकी पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रंग-ढंग रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितनों की कविताओं में छिपाकर रखिये वह स्वयं चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दीकोकिल की काकली हूँ। जिस प्रकार हजारों पक्षियों के कलरव को चीरती हुई कोकिल की काकली आकाश-पाताल को रसप्लावित और अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है।

बंगाल के 'यशोहर' (Jessore) जिले में बसंतराय नामक एक कवि हो गये हैं। विद्यापति के पदों का प्रचार देखकर उन्होंने भी विद्यापति के नाम से कविता करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु वे अपनी कविताएँ इनकी कविता में न खपा सके।



दूसरी पोथी नेपाल में पाई गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्रथम-प्रथम इसे नेपाल-दरबार के पुस्तकालय में देखा था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है किन्तु इस पोथी की भाषा में नेपाल-तराई (मोरँग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। मालूम होता है, इसे किसी मोरँग-निवासी ने लोगों से सुनकर लिखा था, जिसमें ऐसी गलती हुई है। इस पोथी में लगभग ३०० पद हैं।

तीसरी पोथी है पूर्वोक्त रागतरंगिणी। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं। प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम और मात्राओं की संख्या भी दी है। यह ढाई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—'अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम-प्रथम विद्यापति ने ही की'।

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अबतक विवाद-ग्रस्त रही है। बंगाली लोग इनको बँगला का प्रथम कवि या बंगभाषा का प्रवर्त्तक मानते हैं। इसी लिये उनलोगों ने इनको बंगाली सिद्ध करने की भी चेष्टा की थी। किन्तु अब तो यह सब प्रकार सिद्ध हो गया कि ये मैथिल थे।

मैथिलों की एक खास बोली है—'मैथिली'। विद्यापति भी मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हें अपनी बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। सचमुच यही ठीक है।

किन्तु यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंगभाषा की या हिन्दी-भाषा की? बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली को ब्रज-बोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है।

गुप्तजी 'प्राच्य-विद्या-महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य रखता है। हमारी राय भी उनसे मिलती है।

मिथिला बंग-देश से सटी हुई है। विद्यापति का जन्म दरभंगे में हुआ था, जो द्वारबंग या 'बंगाल का द्वार' है। इसलिये मैथिली पर बंगभाषा का प्रभाव जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक बँगला की।

जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी, अँगरेजी पोशाक पहनकर, अँगरेज नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली भी हिन्दी को छोड़कर बंगभाषा की नहीं हो सकता। हाँ, बंगभाषा के संसर्ग से इनमे मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज-कल की मैथिली से कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष बीते। इन पाँच सौ वर्षों मे भाषा में कुछ-न-कुछ परिवर्त्तन होना बहुत सम्भव है।

कुछ मैथिल महाशय इन पदों की भाषा को तोड़-फोड़कर आज-कल की मैथिली-बोली से मिलाने का अनुचित प्रयत्न करते हैं। किन्तु क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे कि ऐसा करके वे इनकी स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा रहे हैं!

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खूब हुई है! बंगालियों ने उसे ठेठ बँगला का रूप दे दिया है, मोरंगवालों ने मोरंग का रंग चढ़ाया है, बाबू व्रजनन्दनसहायजी ने उसपर भोजपुरी की कलई की है, और आज-कल के मैथिल उसपर आधुनिक मैथिली का गिलट चढ़ा रहे हैं! भगवान इनकी कोमलकान्त पदावली की रक्षा करें!

पदावली की विशेषता

इनकी पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रंग-ढंग रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितनों की कविताओं मे छिपाकर रखिये, वह स्वयं चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दीकोकिल की काकली हूँ। जिस प्रकार हजारों पक्षियों के कलरव को चीरती हुई कोकिल की काकली आकाश-पाताल को रसप्लावित और अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है।

बंगाल के 'यशोहर' (Jessore) जिले में वसंतराय नामक एक कवि हो गये हैं। विद्यापति के पदों का प्रचार देखकर इन्होंने भी विद्यापति के नाम से कविता करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु वे अपनी कविताएँ इनकी कविता में न खपा सके!

इनकी भाषा इनकी खास अपनी भाषा है, इनकी वर्णनप्रणाली इनकी खास वर्णन-प्रणाली है, इनके भाव स्वयं इनके ही हैं। इनकी पदावली पर 'खास' की मुहर लगी हुई है। बंगाल के सैकड़ों कवियों ने इनके अनुकरण पर कविताएँ कीं, किन्तु कोई भी इनकी छाया न छू सके।

ये एक अजीब कवि हो गये हैं। राजा की गगनचुम्बी अट्टालिका से लेकर गरीबों की टूटी हुई फूस की झोपड़ी तक में इनके पदों का आदर है। भूतनाथ के मन्दिर और 'कोहबर-घर' में इनके पदों का सामान्य रूप से सम्मान है।

कोई मिथिला में जाकर तमाशा देखे। एक शिवपुजारी, डमरू हाथ में लिये, त्रिपुंड्र रमाये, जिस प्रकार 'कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ' गाते-गाते तन्मय होकर अपने-आपको भूल जाता है, उसी प्रकार नव-वधू को कोहबर में ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ 'सुन्दरि चललिहुँ पहु-घर ना, जाइतहि लागु परम डर ना' गाकर नव वर-वधू के हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द-स्रोत में डुबो देती हैं। जिस प्रकार नवयुवक 'ससन-परस खसु अम्बर रे देखलि धनि देह' पढ़ता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमांचित हो जाता है उसी प्रकार एक वृद्ध 'तातल सैकत वारिबुन्द सम सुत मित रमनि समाज, तोहे बिसारि मन तोहि समर्पिनु अब मझु हब कोन काज, माधव, हम परिनाम निरासा' गाता हुआ अपने नयनों से शत-शत अश्रुबिन्दु गिराने लगता है।

विद्वद्वर ग्रियर्सन का यह कहना कितना सत्य है—

'Even when the Sun of Hindu-religion is set, when belief and faith in Krishna and in that medicine of 'disease of existence the hymns of Krishna's love is extinct, still the love borne for songs of Vidyapati in which he tells of krishna & Radha will never diminished '

"हिन्दू-धर्म के सूर्य का अस्त भले हो हो जाय—वह समय भी आ जाय जब राधा और कृष्ण में मनुष्यों का विश्वास और श्रद्धा न रहे

और कृष्ण के प्रेम की स्तुतियों के लिये जो इहलोक में हमारे अस्तित्व के रोग की दवा है, अनुराग जाता रहे, तो भी विद्यापति के गान के लिये—जिसमें राधा और कृष्ण का उल्लेख है—लोगों का प्रेम कभी कम न होगा।

डाक्टर ग्रियर्सन के कथन का प्रमाण बंगाल में जाकर देखिये। सहस्र-सहस्र हिन्दू आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण-विषयक पदों का कीर्त्तन करते हुए अपने-आपको भूल जाते हैं।

एक जगह पुनः आप लिखते हैं—"The glowing stanzas of Vidyapati are read by the devout Hindu with a little of the baser part of the human sensuousness as the songs of the Solmon the Christian priests."

"जिस प्रकार ख्रीष्ट पादरी सालमन के गान गाते हैं, उसी प्रकार, भक्त हिन्दू विद्यापति के अनूठे पदों को पढ़ते हैं।"

इनकी उपमाएँ अनूठी और अछूती हैं। इनकी उत्प्रेक्षाएँ कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं। रूपक का इन्होंने रूप खड़ा कर दिया है। स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनाएँ ओत-प्रोत हैं। श्रुत्यनुप्रास इनके पदों का स्वाभाविक आभूषण है। प्रधान काव्यगुण—प्रसाद और माधुर्य—इनके पद-पद में टपकते हैं।

प्रकृति-वर्णन में तो इन्होंने कमाल किया है—इनका वसंत और पावस का वर्णन पढ़कर मन्त्र-मुग्ध हो जाना पड़ता है। इनके वसंत और पावस में मिथिला की खास छाप है। वसंत में मिथिला की शस्य-श्यामला भूमि अलंकृत और दर्शनीय हो जाती है। पावस में, हिमालय निकट होने के कारण, यहाँ बिजलियाँ जोर से कड़कती हैं—प्रायः कुलिशपात होता है। इन्होंने इसका बड़ा ही अपूर्व वर्णन किया है।

इनका मिलन और विरह का वर्णन भी देखने योग्य है। हिन्दी-कवियों के विरह-वर्णन में, 'घनआनन्द' आदि दो-चार को छोड़कर, हृदय-वेदना का सूक्ष्म विश्लेषण प्रायः नहीं देखा जाता। विद्यापति का विरह-वर्णन प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है—उसमें वेदना है, व्याकुलता है, प्रियतमा के प्रियतम के प्रति तल्लीनता है, कोरी हाय-हाय वहाँ नहीं है।

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

वन्दना

[१]

नन्दक नन्दन कदम्बक तरु-तर
धिरे धिरे मुरलि बजाव।
समय सँकेत-निकेतन बइसल
बेरि बेरि बोलि पठाव ॥२॥
सामरि, तोरा लागि
अनुखन विकल मुरारि ॥३॥
जमुनाक तिर उपवन उदवेगल
फिरि फिरि ततहि निहारि।
गोरस बेचए अवइत जाइत
जनि जनि पुछ बनमारि ॥४॥

१—नन्दक नन्दन=नन्द के बेटे श्रीकृष्ण। तर=तले, नीचे। २—सँकेत-निकेतन=मिलने का निर्दिष्ट स्थान। बइसल=बैठे हुए। बेरि बेरि=बार-बार। (सकेत-स्थान में बैठकर मिलन का समय आया जान) बार बार बुला रहे हैं (वंशी से पुकार रहे हैं)—"नामसमेतम् कृत-सकेतम् वादयते मृदुवेणुम्"—गीतगोविन्द। ३—सामरि=श्यामा, सुन्दरी,—'शीते सुखोष्णसर्वांगी ग्रीष्मे च सुखशीतला। तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेतिकथ्यते॥' तोरालागि=तुम्हारे वास्ते। अनुखन—प्रतिक्षण।

४—" तिर=तट। उदवेगल=उद्विग्न हुआ, व्याकुल। ततहि=उसी तरफ। जनि जनि =प्रत्येक स्त्री से (पुल्लिंग जन, स्त्री० जनि) यमुना के किनारे उपवन में (भ्रमण करते हुए) व्याकुल होकर पुन-पुन उसी

तोहे मतिमान, सुमति, मधुसूदन
वचन सुनह किछु मोरा।
भनइ विद्यापति सुन बरजौवति
वन्दह नन्द-किसोरा ॥७॥

[२]

राधा की वन्दना

देख देख राधा रूप अपार।
अपुरुब के बिहि आनि मिलाओल
खिति-तल लावनि-सार ॥२॥
अगहि अंग अनँग मुरछायत
हेरए पड़ए अथीर।
मनमथ कोटि-मथन करु जे जन
से हेरि महि-मधि गीर ॥४॥

ओर (तुम्हारे आगमन-पथ का ओर) देखते हैं, और दूध-दही बेचने को आने-जानेवाली प्रत्येक रमणी से वनमाली श्रीकृष्ण (तुम्हारे विषय में) पूछते हैं। ६—मतिमान = अनुरक्त। हे सुमति! मेरी कुछ बातें सुनो, मधुसूदन तुमपर अनुरक्त हैं। ७—भनइ = कहते हैं। जौवति = युवती। वन्दह—वंदना करो।

"ते सुकृती रस-सिद्ध कवि, वंदनीय जग माहिं।
जिनके सुजस-सरीर कहँ, जरा मरन-भय नाहिं॥"

२—अपुरुब = अपूर्व। बिहि = विधि, ब्रह्मा। आनि मिलाओल = ला मिलाया, रच दिखाया। खिति = क्षिति, पृथ्वी। लावनि—लावण्य। ३—अनँग = कामदेव। हेरए = देखकर। अथीर = अस्थिर, चचल। ४—मनमथ = कामदेव। मधि = में। जो करोड़ों कामदेवों का (अपने सौंदर्य

सामर बरन, नयन अनुरंजित,
जलद-जोग फुल कोका।
कट कट बिकट ओठ-पुट पाँडरि
लिधुर-फेन उठ फोका ॥६॥
घन घन घनए घुघुर कत बाजय,
हन हन कर तुअ काता।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र बिसरु जनि माता ॥८॥

कितना हो। मेलल = रक्खा। कूड़ा कैल = चूर-चूर कर दिया। अनुरंजित = रँगा हुआ, लाल। जलद-जोग फूल कोका = बादल में कमल फूले हों। पाँड़रि = एक लाल फूल। फोका = बुलबुद्। ७—काता = कत्ता, कटार।

वय:-सन्धि

[४]

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल।
स्रवन क पथ दुहु लोचन लेल ॥२॥
वचन क चातुरि लहु-लहु हास।
धरनिये चाँद कएल परगास ॥४॥

मुकुर लई अव करई सिंगार।
सखि पूछइ कइसे सुरत-विहार ॥६॥
निरजन उरज हेरइ कत वेरि।
हसइ से अपन पयोधर हेरि ॥८॥
पहिल वदरि-सम पुन नवरंग।
दिन-दिन अनॅग अगोरल अंग ॥१०॥
माधव पेखल अपुरुव बाला।
सैसव जौवन दुहु एक भेला ॥११॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
दुहु एक जोग इइ के कह सयानि ॥१४॥

१—सैसव = शिशुता, वचपन। जोवन = जवानी। २—दोनो आँखों ने कानो की राह पकडी = कटाक्ष करना प्रारम्भ किया। ३—लहु= लघु, मंद। हास = हँसी। ४—परगास = प्रकाश। ५—मुकुर=आईना। ६—सुरत-विहार = काम-क्रीड़ा। ७—निरजन = एकान्त में। उरज = पयोधर = स्तन। हेरइ = देखती है। "स्मितं किंचिद्वक्त्रं सरलतरलो दृष्टिविभव। परिस्पन्दो वाचामपि नवविलासोक्तिसरस। गतीनामारम्भ.। किसलयितलीलापरिकर। स्पृशन्त्यास्तारुण्यं किमिह न हि रम्यं मृगदृश ॥" ९—बदरि = बेर का फल। नवरंग = नारंगी, नीबू

[५]

सैसव जौवन दरसन भेल।
दुहु दल-यले दन्द परि गेल ॥२॥
कबहु बाँधय कच कबहु विथारि।
कबहु झाँपय अँग कबहु उघारि ॥४॥
अति थिर नयन अथिर किछु भेल।
उरज - उदय - थल लालिम देल ॥६॥
चंचल चरन, चित चंचल भान।
जागल मनसिज मुदित नयान ॥८॥
विद्यापति कह सुनु वर कान।
धैरज धरह मिलायब आन ॥१०॥

कुच, पहले बेर के समान छोटे थे, पुन नारंगी-से हुए। १०—अनंग=कामदेव। अगोरस=पहरा दिया। ११—पेखल=देखा। अपुरुब=अपूर्व। १२—भेला=भया, हुआ। १४—के कह=कौन कहता है ?

२—दन्द=द्वन्द्व=युद्ध। परि गेल=पड गया, शुरू हो गया, ठन गया। दोनो (शैशव और यौवन) के सैन्यवल में द्वन्द्व युद्ध छिड गया। ३—कच=केश। विथारि=खोल देना। ४—अँग=देह, (यहाँ छाती)। ५—अथिर=चंचल। ६—उरज=कुच। उदयथल—उगने का स्थान। देल=दिया। कुचो के उत्पन्न होने के स्थान में लालिमा छा गई। ७—भान=मालूम होना। पैर चंचल थे ही, अब चित्त भी चंचल मालूम होता है। ८—मुदित=बंद। नयान=आँखे। कामदेव जाग तो गया, पर उसकी आँखें बन्द ही है, नहीं खुलतीं। ९—कान=कान्ह, कृष्ण। १०—आन=लाकर।

[६]

सैसब जौवन दरशन भेल।
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ॥२॥
मदन क भाव पहिल परचार।
भिन जन देल भिन्न अधिकार ॥४॥
कटि क गौरव पाओल नितम्ब।
एक क खीन अओक अवलम्ब ॥६॥
प्रगट हास अब गोपत भेल।
उरज प्रगट अब तन्हिक लेल ॥८॥
चरन चपल गति लोचन पाव।
लोचन क धैरज पदतल जाव ॥१०॥
नव कविसेखर कि कहइत पार।
भिन भिन राज भिन्न बेवहार ॥१२॥

२—मनसिज=काम। दोनो को राह में देखते हुए कामदेव ने (बाला के शरीर में) गमन किया। ३—पहिल परचार=प्रथम प्रचारित हुआ। ५—कटि क=कमर का। गौरव=गुरुता। नितम्ब—चूतड। ६—खीन=क्षीण, पतला। अओक=अन्य का=दूसरे का। ७, ८—गोपत=गुप्त। तन्हिक=उसका। प्रकट हँसी अब गुप्त हुई और उसकी प्रकटता अब कुचों ने ले ली। १०—धैरज=धीरता। 'काव्यप्रकाश' में कहा है—श्रोणीबन्धस्त्यजति तनुता सेवते मध्यभाग। पद्भ्या मुक्तास्तरलगतय सश्रितालोचनाभ्याम् ॥ वक्ष.प्राप्त कुचसचिवतामद्वितीयन्तु वक्त्रम्। सद्गात्राणा गुणविनिमय. कल्पितो यौवनेन। ११—नव कविसेखर=विद्यापति का उपनाम।

किछु किछु उतपति अकुर भेल ।
चरन-चपल-गति लोचन लेल ॥२॥

अब सब खन रह आँचर हात ।
लाजे सखिगन न पुछए बात ॥४॥

कि कहब माधव बयस क सधि ।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ॥६॥

तइअओ काम हृदय अनुपाम ।
रोपल घट ऊचल कए ठाम ॥८॥

सुनइत रस-कथा थापए चीत ।
जइसे कुरंगिनी सुनए सँगीत ॥१०॥

सैसव जौवन उपजल बाद ।
केओ न मानए जय अवसाद ॥१२॥

बिद्यापति कौतुक बलिहारि ।
सैसव से तनु छोड़नहि पारि ॥१४॥

१—अंकुर=कुचो के अंकुरे। ३—खन=क्षण। हात=हाथ। ५-६, माधव! वय-सन्धि (की बातें) क्या कहूँ—देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया। ७-८ तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उसके अनुपम हृदय पर घट स्थापित कर उस स्थान को ऊँचा कर दिया। ९—थापए=स्थापित करती है। १०—कुरगिनी=हरिणी। ११—उपजल बाद=होड मची। १२—केओ=कोई। अवसाद=पराजय। १४—शैशव को उसका शरीर छोडना ही पड़ेगा।

[८]

पहिल बदरि कुच पुन नवरंग।
दिन दिन बाढ़ए पिड़ए अनंग ॥२॥
से पुन भए गेल बीजकपोर।
अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर ॥४॥
माधव पेखल रमनि संधान।
घाटहि भेटल करत सिनान ॥६॥
तनसुक सुबसन हिरदय लागि।
जे पुरुख देखब तेकर भागि ॥८॥
उर हिल्लोलित चाँचर केस।
चामर झाँपल कनक महेस ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह मुरारि।
सुपुरुख बिलसए से बरनारि ॥१२॥

१—बदरि=बैर (फल)। नवरंग=नारंगी। २—पिड़ए=पीड़ा देता है। ३—बीजकपोर=बीजपूर, बड़ा (टाभ) नीबू; जैसे बीज क्रमशः बढ़ते-बढ़ते पोर (वृक्ष की मुटाई और गाँठ) बनता है उसी तरह कुच भी दृढ़ और मोटे हो चले। ४—सिरिफल=श्रीफल, बेल। १-४, एक संस्कृत श्लोक है—उद्भेदं प्रतिपद्यपक्वबदरीभावं समेता क्रमात्। पुन्नागाकृतिमाप्य पूगपदवीमारुह्यबिल्वश्रियम्॥ लब्ध्वा तालफलोपमां च ललितामासाद्य भूयोधुना। चंचत् काञ्चनकुम्भजम्भनमिमावस्याः स्तनौ विभ्रत॥ ५—पेखल=देखा। सिनान=स्नान। तनसुक=एक प्रकार का महीन कपड़ा। हिल्लोलित=झूलता हुआ। चाँचर=चंचल। ९-१०—हृदय पर झाँझरी से बने हुए बाल डोल रहे हैं, मानो सोने के महादेव को चँवर से ढक दिया हो। १२—बिलसए=विलास करें।

[९]

खने खन नयन कोन अनुसराई।
खने खन वसन धूलि तनु भरई ॥२॥
खने खन दसन-छटा छुट हास।
खने खन अधर आगे गहु बास ॥४॥
चउँकि चलए खने खन चलु मन्द।
मनमथ-पाठ पहिल अनुबन्ध ॥६॥
हिरदय-मुकुल हेरि हेरि थोर।
खने आँचर दए खने होए भोर ॥८॥
बाला सैसव तारुन भेट।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ। १०॥
बिद्यापति कह सुन बर कान।
तरुनिम सैसव चिन्हइ न जान ॥१२॥

———

१—खने खन=क्षण-क्षण। क्षण-क्षण में आँखें कोण का अनुसरण करती हैं—कटाक्ष करती हैं। २—क्षण-क्षण में अस्तव्यस्त वस्त्र (चंचल धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भरते हैं। ३—दसन=दाँत। हास=हँसी। ४—अधर=होठ। बास=वस्त्र। ६—अनुबन्ध=भूमिका। ७—हिरदय-मुकुल=हृदय की कली, कुच। ८—भोर=भूल जाना) ९-१०—तारुन=तरुणाई, जवानी। कनेठ=कनिष्ठ=छोटा। बाला के शरीर में बचपन और जवानी की भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है। इन दोनों में कौन बड़ा और कौन छोटा (कौन निर्बल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता। ११—कान=कान्ह, कृष्ण। १२—तरुनिम=जवानी।

नखशिख

[१०]

पीन पयोधर दूबरि गता।
मेरु उपजल कनक - लता ॥२॥
ए कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई।
अति अपूरुब देखलि साई ॥४॥
मुख मनोहर अधर रंगे।
फूललि मधुरी कमल संगे ॥६॥
लोचन - जुगल भृंग अकारे।
मधु क मातल उड़ए न पारे ॥८॥
भउँह क कथा पूछह जनू।
मदन जोड़ल काजर - धनू ॥१०॥
भन विद्यापति दूतिवचने।
एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१-२, पीन=पुष्ट। पयोधर=कुच गता=गात, शरीर। मेरु= सुमेरु पर्वत। दुबली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है मानो सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो। ४—अपूरुब= , अपूर्व। साई=उसे। ५—६, अधर=ओष्ठ। रंगे=रंगे हुए, लाल। मधुरी=एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष होता है। सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानो कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो। ७-८—भृंग भौंरा। मधु क मातल=मधु पीकर मस्त बना। (उस मुख-कमल में) दोनो लोचन भौंरे के समान है जो (मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होने से उड नहीं सकते।

[११]

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा ॥२॥
हरिन इन्दु अरविन्द करिनि हेम
पिक बूझल अनुमानी ।
नयन वदन परिमल गति तन रुचि
अओ अति सुललित बानी ॥४॥
कुच जुग परसि चिकुर फुजि पसरल
ता अरुझायल हारा ।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल
चाँद बिहिनु सब तारा ॥६॥

१—२, अहा, कैसी सुन्दर नई जवानी है ! जैसा देखा, वैसा कह नही सकता, छः अनुपम (पदार्थ) एक ही स्थान पर है । ३—इन्दु = चन्द्र । अरविन्द = कमल । करिनि = हथिनी । हेम = सोना । पिक = कोयल । ४—परिमल = सुगन्धि । तनु रुचि = शरीर की कान्ति । हरिन, चन्द्र, कमल, हथिनी, सोना, कोयल—ये छः क्रमश. आंख, मुख, शरीर की सुगन्धि, मस्तानी चाल, शरीर की कान्ति और मीठी बोली के उपमान हैं । ५—६, चिकुर = केश । फुजि = खुलकर । बिहिनु = विहीन । दोनो कुचो से स्पर्श करते हुए केश खुलकर छिटके हुए है जिनसे (मुक्ता की) माला उरझी हुई है, मानो, सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा को छोडकर (क्योंकि केश रूपी अंधकार भी है !) सब तारे मिलकर उगे हो । ७—लोल = चचल । कपोल = गाल । अधर = ओष्ठ ।

लोल कपोल ललित मनि-कुण्डल
अधर विम्ब अध जाई।
भौंह भ्रमर, नासापुट सुन्दर
से देखि कीर लजाई ॥८॥
भनइ विद्यापति से वर नागरि
आन न पावए कोई।
कंसदलन नारायन सुन्दर
तसु रंगिनी पए होई ॥१०॥

विम्ब = विम्बफल (लाल होता है)। अध = अध, नीचे। अधर विम्ब अध जाई = ओष्ठ की लालिमा देख विम्बफल नीचे जाता है = सा मालूम होता है। ८ भ्रमर = भौंरा। भौंह भ्रमर = भौंहें, भ्रमर के समान, काली हैं। नासापुट = नाक। कीर = सुग्गा। १०—कंसदलन नारायण = (१) मिथिला के राजा (२) श्रीकृष्ण। तसु = उसका। रंगिनी = स्त्री।

"इश्क को दिल में दे जगह 'अकबर'
इल्म से शायरी नहीं आती।"

(१२)

माधव की कहब सुन्दरि रूपे।
कतेक जतन विहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे ॥२॥
पल्लव-राज चरन-जुग सोभित
गति गजराज क भाने।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ॥४॥
मेरु ऊपर दुइ कमल फुलायल
नाल विना रुचि पाई।
मनि-मय हार धार बहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई ॥६॥

(नोट—"अद्भुत एक अनूपम बाग" शीर्षक सूरदास का एक प्रसिद्ध पद्य है। साहित्य-संसार में उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। सूरदास से डेढ़ सौ वर्ष पहले रची गई यह कविता पढ़कर, पाठक, विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें!)

१—की=क्या। २—विहि=विधि, ब्रह्मा। सरूपे=सत्य प्रत्यक्ष। ३—पल्लवराज=कमल। ४—कनक-कदली—सोने के केले का खम्भ (जांघ की उपमा)। सिंह=(कटि की उपमा)। मेरु=पहाड़ (उभड़ी हुई छाती)। ५—दुइ कमल=दो कमल (दोनो कुच)। नाल=डंटी। रुचि=शोभा। ६—(कुचों पर) मणि माला रूपी गंगा की धारा बह रही है, इसीसे—उसके स्रोत में —(बिना नाल के भी दोनो कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते।

अधर बिम्ब सन, दशन दाड़िम-बिजु
रवि ससि उगथिक पासे।
राहु दूर बस नियरो न आवथि
तै नहि करथि गरासे ॥८॥
सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने।
सारँग ऊपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधुपाने ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
एहन जगत नहि आने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन—
लखिमा देइ पति भाने ॥१२॥

७—अधर=ओष्ठ। बिम्बफल। सन=ऐसा। दसन=दाँत। दाड़िम=अनार। बिजु=बीज, दाना। रवि ससि उगथिक पासे=सूर्य-चन्द्र एक साथ उगे हैं (चन्द्रमा ऐसे मुख में बाल सूर्य-सा लाल सिंदूर है)। ८—राहु=(केश की उपमा)। नियरो=निकट। ९—सारँग=(१) हरिण। सारँग=(२) कोयल। सारँग=(३) कामदेव। सारँग तसु समधाने=उसके संधान में—कटाक्ष में—काम बसता है। १०—सारँग=(४) कमल (ललाट)। दस=(यहाँ बहुवाची)। सारँग=(५) भौंरा (केशों के लटके हुए गुच्छे)। मधुपाने=रस पीकर। (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) हैं, जो मधुपान कर केलि कर रहे हैं। एहन=ऐसा। आने=दूसरा।

(१३)

जुगल सैल-सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ॥१॥
फुललि मधुरि फुल सिंदुर लोटाएल
पाँति वइसलि गज-मोति रे।
आज देखल जति के पतिआएत
अपुरुव विहि निरमान रे ॥३॥
विपरित कनक-कदलि-तर सोभित
थल-पंकज के रूप रे।
तथहु मनोहर वाजन वाजए
जनि जागे मनसिज भूप रे ॥४॥
भनइ विद्यापति पूरव पुन तह
ऐसनि भजए रसमन्त रे।
बुझल सकल रस नृप सिवसिंघ
लखिमा देइ कर कन्त रे ॥७॥

१—जुगल सैल=दो पहाड (कुचों की उपमा)। सिम=सीमा में, निकट। हिमकर=चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल=(मुख की उपमा)। दुइ जोति=दो ज्योतियाँ (दो आँखे)। २—मधुरि फूल=एक तरह का लाल फूल। फुली हुई मधुरी (फूल) सिंदूर पर लोटती है और, दांत क्या है, गजमुक्ताओ की पंक्ति बैठी है। ४—विपरित=उलटा। कनक कदलि=(जांघ की उपमा)। थल पकज=स्थल कमल (पैरो की उपमा)। ५—तथहु=वहाँ भी। मनसिज=कामदेव। ६—पुन=पुण्य। ऐसनि=ऐसा। रसमत=रसवती, सुरसिका।

[१४]

चाँद-सार लए मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि
दह दिसि भेल उँजोरे ॥२॥
कामिनि कोने गढ़ली।
रूप सरुप मोयँ कहइत असँभव
लोचन लागि रहली ॥४॥
गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझ-खानि खीनि निमाई।
भागि जाइत मनसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुझाई ॥६॥
भनइ विद्यापति अद्‌भुत कौतुक
ई सब वचन सरूपे।
रूपनारायन ई रस जानथि
सिवसिंघ मिथिला भूपे ॥८॥

१—२, चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की, (जिसे देखते ही चकोर की आंखें चकित हुई। बाला ने (अपने मुख-चन्द्र को) अंचल से पोंछकर जो अमृत धो वहाया वही (चांदनी के रूप में) दशो दिशाओं में प्रकाशित हुआ। ३—कोने=किसने। गढली= गढा, रचा। ५—भरे= भार से। माझ खानि= मध्य भाग में (कटि)। खीनि= क्षीण, पतली। निमाई= निर्माण की। ६—त्रिवली-लता= त्रिवली= पेट में पडी तीन रेखाएं।

[१५]

सुधामुखि के विहि निरमिल वाला ।
अपरुव रूप मनोभवमगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥२॥
सुन्दर वदन चारु अरु लोचन
काजर-रंजित भेला ।
कनक-कमल माझ काल-भुजगिनि
स्रीयुत खंजन खेला ॥४॥
नाभि-बिवर सयँ लोम-लतावलि
भुजगि निसास-पियासा
नासा खगपति-चंचु भरम-भय
कुच-गिरि-संधि निवासा ॥६॥

१—के विहि = किस विधाता ने। निरमिल = निर्माण किया। २—मनोभव-मंगल = कामदेव का शुभ स्वरूप—"मनोभवमंगलकलस-सहोदरे"- गीतगोविन्द। त्रिभुवन बिजयी माला = तीनो भुवनो को पराजित करनेवाली माला के समान। ३—४ वदन = मुखड़ा। भेला हुआ। माझ—मध्य में। स्रीयुत = सुन्दर। सुन्दर मुख मे सुन्दर काजल लगी आँखे हैं, मानो सोने के कमल (मुख) में काल-सर्पिणी (अंजन) क्रीडा कर रही हो। अथवा मानो काल भुजगिनी रूपी आँखे कनक कमलरूपी मुख के बीच सुन्दर (स्रीयुत) खंजन की तरह खेल रही हो। ५—६, विवर = विल, छेद। सयँ = से। लोम = लतावली = वाल-रूपी लताएँ, पंक्तिबद्ध वाल। भुजगि = सर्पिणी। निसास = साँस। खगपति = गरुड़ चंचु = चोंच। नाभी रूपी विल से पंक्तिबद्ध वाल-रूपी सर्पिणी (नायिका

तिन वान मदन तेजल तिन भुवने
अवधि रहल दओ बाने।
विधि वड़ दारुन वधए रसिकजन
सोंपल तोहर नयाने ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
इह रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

की सुगंधित) सांसो की प्यास में (आगे बढ़ी), किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझकर डर से कुच रूपी (दो) पर्वतो के बीच के (संकीर्ण) मिलन-स्थान में आ बसी। ७ ८ तिन=तीन। तेजल=छोड़ा। अवधि=अवशिष्ट, वाकी। रहल=रहा। वओ=दो। वधए=वधने को, हत्या करने को तोहार=तुम्हारे। नयान=आँखें। कामदेव को पंचवाण कहते हैं, सो मदन ने अपने (पाँच वाणो में से) तीन वाण तो तीनो लोको में छोड़े, शेष उसके दो वाण रह गये। ब्रह्मा बड़ा ही निष्ठुर है, (उन बचे हुए दो वाणों को) रसिको की हत्या करने के लिये तुम्हारे नयनो को सौंप दिया। ९—=इह रस केओ पय जाने=यह रस कोई कोई ही जानता है। १०——देइ——देवी। रमाने=रमण, पति।

"हृदय-सिंधु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना।
जो बरसै बर बारि-बिचारू। होहि 'कवित'-चिंतामनि चारू॥"

[१६]

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि ।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे
विहि निरमाओल आनि ॥२॥
हस्ति-गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज-कुमारि ।
जिनकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ॥४॥
नील वसन तन घेरल सजनी गे
सिर लेल चिकुर सँभारि ।
तापर भमरा पिवए रस सजनि गे
बइसल पाँखि पसारि ॥६॥
केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि ।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ॥८॥

१—नागरि=नगर-निवासिनी; सुचतुरा। आगरि=अग्रगण्या। २—सनि=समान निरमाओल आनि=लाकर बनाया। ३—जकाँ=ऐसा। ४—जिनकर=जिसकी। एहनि=ऐसी। ५—चिकुर केश। ६—तापर=उसपर। भमरा=भौंरा। ७—केहरि=सिंह। अछि=(अस्ति) है। अम्बुज—कमल। धारि=धारण करो, समझो। ८—अवधरि=निश्चय।

[१७]

चिकुर - निकर तम - सम
पुनु आनन पुनिम ससी।
नयन - पंकज के पतिआओत
एक ठाम रहु बसी ॥२॥
आज मोयँ देखलि बारा।
लुबुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥४॥
सहज सुन्दर गोर कलेवर
पीन पयोधर सिरी।
कनक-लता अति बिपरित
फरल जुगल गिरी ॥६॥
भन विद्यापति विहि क घटन
के न अदूभुत जान।
राय सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥८॥

१—२—चिकुर निकर=केश समूह। पुनिम=पूर्णिमा का। ठाम=स्थान। केश समूह अंधकार के समान है, फिर, मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर-विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मोयँ=मैंने। बारा=बाला। ४—लुबुध=लुब्ध, अनुरक्त। चालक=संचालन करनेवाला। मयन—काम। की परकारा=किस प्रकार। ५—सिरी=श्री, शोभायुक्त। ६—फरल=फला। ७—घटन=सृष्टि।

[१८]

सजनी, अपरुप पेखल रामा।
कनक - लता अवलम्बन ऊअल
हरिन - हीन हिमधामा ॥२॥
नयन-नलिनि दओ अंजन रंजइ
भौंह विभंग - विलासा।
चकित चकोर - जोर विधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥४॥
गिरिबर-गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज-मोति क हारा।
काम कम्बु भरि कनक - सम्भु परि
ढारत सुरसरि - धारा ॥६॥
पएसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पावए बहुभागी।
विद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥८॥

१—अपरुप = अपूर्व। पेखल = देखा। रामा=सुन्दरी। २—कनक-लता=सोने की लता (देह)। ऊअल=उदित हुआ। हरिन-हीन हिमधामा = निष्कलंक चन्द्र (मुख)। ३—नलिनी = कमलिनी। दओं = दो। भौंह विभग-विलासा = कुटिल कटीली भौंहो—भवो—में भाव-भगी। ४-जोर = जोड़ा। बांधल = बाँधा है। पास=पास में, रस्सी मे। ५—६ गिरिवर गरुअ = पहाड़ के ऐसे भारी। पयोधर = कुच। गिम = ग्रीवा, कण्ठ। गजमोतिक = गजमुक्ता की। कम्बु=शख। कनक = सोना। पहाड़

[१६]

कनक-लता अरविन्दा ।
दमना माँझ उगल जनि चन्दा ॥२॥

केहु कहै सैवल छपला ।
केहु वोले नहि नहि मेघे झपला ॥४॥

केहु कहे भमए भमरा ।
केहु वोले नहि नहि चरए चकोरा ॥६॥

संसय परल सब देखी ।
केहु बोलए ताहि जुगुति विसेखी ॥८॥

भनइ विद्यापति गावे ।
वड़ पुन गुनमति पुनमत पावे ॥१०॥

ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानो, कामदेव शंख (कण्ठ) मे भरकर, सोने के महादेव (कुचो) पर गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो ७—पएसि=पैठकर, जाकर। पयाग—प्रयाग में। जाग=यज्ञ। सत=शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१—२, दमना=द्रोणलता। माँझ=में। उगल=उदित हुआ। जनि=मानो। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण-लता पर चन्द्रमा उगा है। ३—केहु=कोई। कहै=कहता है। सैवल=शैवल, सेंवार। छपला=छिपा हुआ। ४—५, झपला=ढँपा हुआ। ५—भमए भमरा=भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए=चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परल=पड़ गया। १०—पुन=पुण्य से। पुनमत=पुण्यवंत।

[२०]

कबरी-भय चामरि गिरि-कन्दर
मुख-भय चाँद अकासे ।
हरिन नयन-भय, सर-भय कोकिल
गति-भय गज वनवासे ॥२॥

सुन्दरि, किए मोहि सँभासि न जासि ।
तुअ डर इह सब दूरहि पलायल
तुहुँ पुन काहि डरासि ॥४॥

कुच-भय कमल-कोरक जल मुदि रहु
घट परवेस हुतासे ।
दाड़िम सिरिफल गगन वास करु
सम्भु गरल 'करु ग्रासे ॥६॥

भुज भय पंक मृनाल नुकाएल
कर-भय किसलय काँपे ।
कबि-सेखर भन कत कत ऐसन
कहब मदन परतापे ॥७॥

१—कबरी=केश। चामरि=चँवरवाली गौ। २—सर=स्वर, बोली। ३—किए=क्यो। सँभासि=बातचीत करके। जासि=जाती है। सुन्दरी, क्यो मुझसे बाते नहीं कर जाती ? ४—पलायल=भाग गया। ५—कमल-कोरक=कमल की कली। घट परवेस हुतासे=घड़ा अग्नि में प्रवेश करता है। ६—दाडिम=अनार। सिरिफल=बेल। गगन=आकाश। सम्भु=शिव। गरल=विष। ६—मृनाल=कमल-नाल। नकायल=छिप गया। कर=हाथ। किसलय=नवीन पत्ता।

[२१]

रामा, अधिक चंगिम भेल।
कतने जतन कत अदबुद, बिहि बिहि तोहि देल ॥२॥
सुन्दर बदन सिदुर-विन्दु सामर चिकुर भार।
जनि रवि-ससि संगहि ऊगल पाछ्र कय अंधकार ॥४॥
चंचल लोचन बाँक निहारए अंजन शोभा पाय।
जनि इन्दीवर पवन-पेलल अलि भरे उलटाय ॥६॥
उनत उरोज चिर झपावए पुनु पुनु दरसाए।
जइयो जतने गोअए चाहए हिमगिरि न नुकाय ॥८॥
एहनि सुन्दरि गुनक आगरि पुनें पुनमत पाव।
ई रस बिन्दक रूपनरायन कबि विद्यापति गाव ॥१०॥

१—रामा=सुन्दरि। चंगिम=शोभामयी। भेल=हुई। २—कतने=कितना। कत=कितना अदबुद=अद्भुत। विहि=विधि, ब्रह्मा। बिहि=विधि, प्रकार ढंग। अथवा बिहि-विहि=चुन-चुनकर। देल=दिया। ३—बदन=मुख। सामर=काला। चिकुर=केश। ४—ऊगल=उदित हुआ। पाछ्र=पीछे। कए करके। ५—बाँक=तिरछा। निहारए=देखती है। ६—इन्दीवर=कमल। पवन-पेलल=पवन द्वारा आन्दोलित अलि भरे=भौंरे के भार से। उलटय=उलट रहा हो। ७ उनत=उन्नत उभड़े हुऐ। उरोज=कुच। चिर=चीर से, सारी से। ८—जाइओ=यद्यपि। जतने=यत्न से। गोअए=गोपन करना छिपाना। हिम=बर्फ, साड़ी। गिरि=पहाड़ (कुच)। अथवा हिमगिरि=हिमालय पहाड़ (कुच)। नुकाय=छपना। ९—एहनि=ऐसी। पुनें=पुण्य से ही। पुनमत=पुण्यवन्त। १०—बिन्दक=ज्ञाता।

सहज प्रसन्न मुख दरस हृदय सुख
लोचक तरल तरङ्ग।
अकास पताल बस सेओ कइसे भेल अस
चाँद सरोरुह सँग ।।२।।
बिहि निरमलि रामा दोसर लछि समा
भल तुलाएल निरमान ।।३।।
कुच-मंडल सिरि हेरि कनक-गिरि
लाजे दिगन्तर गेल।
केओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ।।४।।
माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाय जनु
बिधि अनुसए भेल साजि।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जानि
जतन सिरिजु रोमराजि ।।७।।
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त।
सिर सिवसिंघ राउ पुरुख सुकृत पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ।।६।।

३—लछि=लक्ष्मी। तुलाएल=तुल्य हुआ, समान हुआ। ४—सिरि=श्री, शोभा ६—माझ खीनि=बीच मे पतली (कटि)। भरे=बोझ से। भाँगि जाय=टूटि जाय। अनुसए=आशंका। ७—पटोर=रेशम। सिरिजु=बनाया। रोमराजि=केश-समूह।

सद्य:-स्नाता

[२३]

कामिनि करए सनाने ।
हेरितहि हृदय हनए पँचवाने ॥२॥
चिकुर गरए जलधारा ।
जनि मुख-ससि डर रोअए अँधारा ॥४॥
कुच-जुग चारु चकेवा ।
निअ कुल मिलिअ आनि कोन देवा ॥६॥
ते संका भुज-पासे—।
बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे ॥८॥
तितल वसन तनु लागू ।
मुनिहु क मानस मनमथ जागू ॥१०॥
भनइ विद्यापति गावे ।
गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

२—हेरितहि = देखते ही । हनए=मारती है । पँचवाने = कामदेव के वाण । ३, ४—चिकुर = केश । गरए – गिरती है । जनि = मानो रोअए = रोता है । अँधारा = अंधकार । केशो से जल की धारा गिर रही है, मानो (मुख-रूपी) चन्द्रमा के डर से (केश रूपी) अंधकार रो रहा हो । ६—निअ – निज । मिलिअ= मिलने को । आनि कोन देवा=कोन आनि देवा = किसने ला दिया है । ७, ८—कहीं ये कुच-रूपी चकेवा आकाश में न उड़ जायँ, इसी शंका से अपनी भुजाओं से उन्हे बांध रक्खा है । ९—तितल = भींगा हुआ । १०—मानस = मन । मनमथ=कामदेव । धनि = रमणी । १२—जन = पुरुष ।

[२४]

आजु मझु सुभ दिन भेला।
कामिनि पेखल सनान क बेला ॥२॥
चिकुर गरए जलधारा।
मेह बरिस जनु मोतिम हारा ॥४॥
बदन पोछल परचूरे।
माजि धएल जनि कनक-मुकूरे ॥६॥
तेंइ उदसल कुच-जोरा।
पलटि बैसाम्रोल कनक-कटोरा ॥८॥
निबि-बंध करल उदेस।
विद्यापति कह मनोरथ सेस ॥१०॥

१—मझु = मेरा। भेला = हुआ। २—पेखल = देखा। बेला = समय। ३, ४—चिकुर = केश। गरए = गिरती है।—(काले) केशों से (उज्वल) जल की धारा गिर रही है, मानो बादल (केश) मोती की माला (जलधारा) की वर्षा कर रहे हों। ५—बदन = मुख। पोछल = पोंछा, परिमार्जित किया। परचूरे = प्रचुर रूप से, अच्छी तरह। ६—माजि धएल = माँजकर रख दिया, साफ कर रख दिया। कनक मुकूरे = सोने का दर्पण। ७—तेंइ = उससे—(मुख धोते समय)। उदसल = उकस गया, प्रकट हुआ। जोरा = जोड़ा, युगल। ८—पलटि = उलटकर। बैसाम्रोल = बिठला दिया, रख दिया। ९—निबि = कोंचा, फुफनी। करल = किया। उदेस = शिथिल। १०—सेस = समाप्त।

[२५]

जाइत पेखल नहाएलि गोरी ।
कति सयँ रूप धनि आनलि चोरी ॥२॥
केस निगारइत वह जल-धारा ।
चमर गरए जनि मोतिम-हारा ॥४॥
अलकहि तीतल तै अति सोभा ।
अलिकुल कमल वेढ़ल मधुलोभा ॥६॥
नीर निरंजन लोचन राता ।
सिदुर मॅडित जनि पंकज-पाता । ८॥
सजल चीर रह पयोधर-सीमा ।
कनक-वेल जनि पड़ि गेल हीमा ॥१०॥
ओ नुकि करतहि चाहि किए देहा ।
अवहि छोड़व मोहि तेजव नेहा ॥१२॥
ऐसन रस नहि पाओव आरा ।
इथे लागि रोइ गरए जलधारा ॥१४॥
विद्यापति कह सुनह मुरारि ।
वसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२—कति सयँ = कहाँ से । आनलि चोरी = चुरा लाई । ३—निगारइत = गारते समय, पानी निचोडते समय । ४—चमर = चँवर से । ५—अलक = केश । तीतल = भींगा हुआ । तै = इससे । ६-अलि-कुल = भ्रमर-गण । वेढल = घेर लिया । ७—पानी मे स्नान करने के कारण आखें अंजन-हीन और लाल हो गई है । ८ – पंकज-पाता = कमल का पत्ता । ९—पयोधर-सीमा = कुचो पर । १०—कनक-वेल = सोने का

[२६]

नहाइ उठल तीर राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरव वयान ॥२॥

सखि हे, अपरुब चातुरि गोरि।
सब जन तेजि कए अगुसरि संचरि
आड़ वदन तँहि फेरि ॥४॥

तँहि पुन मोति-हार तोरि फेंकल
कहइत हार टुटि गेल।
सब जन एक-एक चुनि संचरु
स्याम-दरस धनि लेल ॥६॥

नयन-चकोर कान्हु-मुख ससि-वर
कएल अमिय-रस-पान।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारव
कवि विद्यापति भान ॥८॥

बिल्व फल। पड़ि गेल=पड़ गया। हीमा=बर्फ। ११-ओ=वह (वस्त्र)। नुकि करतहि चाहि=छिपाना चाहता है। किए=क्यो। १३-ऐसन=ऐसा। आरा=अन्यत्र। १४—इथे=इसलिये।

१-राइ=राधा। हेरल=देखा। कान=कृष्ण। २-नत=नीचे। बयान=बदन, मुख। ४-अगुसरि=अग्रसर, आगे। संचरि=जाकर। आड़=ओट। ५-तोरि फेकल=तोड़कर फेंक दिया। टुटि गेल=टूट गया। ६-लेल=लिया। ७—कएल=किया। अमिय=अमृत।

प्रेम-प्रसंग

श्रीकृष्ण का प्रेम

[२७]

पथ गति नयन मिलल राधा कान।
दुहु मन मनसिज पूरल संधान ॥२॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।
समय न बूझय अचतुर चोर ॥४॥
विदगधि संगिनी सब रस जान।
कुटिल नयन कएलहि समधान ॥६॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई।
कह कवि-सेखर दुहु चतुराई ॥८॥

१—२, पथगति = राह में जाते हुए। कान = कृष्ण। मनसिज = कामदेव। पूरल = पूरा किया। संधान = वाण का संचालन। पथ में जाते हुए राधा कृष्ण दोनो आँखो से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनो के मन में कामदेव ने अपने वाण का सचालन किया—दोनो के हृदय में काम का सचार हुआ। ३—हेरइत = देखते ही। भेल भोर = वेसुध हुए। ४—समय न बूझए = अवसर नहीं समझता। ५—विदगधि—विदग्ध, सुरसिका। ६—कुटिल नयन = टेढ़ी चितवन से—इशारे से। कएलह्नि = कर दिया। समधान = सावधान। ७—उरझाई = उलझकर।

"बरन धरत चिंता करत, चहत न नेकहु सोर।
ढूँढ़त है सुबरन सदा, कवि व्यभिचारी चोर॥"

[२८]

सजनी, भल कए पेखल न भेल।
मेघ माल सयँ तड़ित-लता जनि
हिरदय सेल दई गेल ॥२॥
आध आँचर खसि आध वदन हँसि
आधहि नयन तरङ्ग।
आध उरज हेरि आध आँचर भरि
तबधरि दगधे अनङ्ग ॥४॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतनु कांचला उपाम।
हार हारल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥६॥
दसन मुकुता पाँति अधर मिलायल
मृदु मृदु कहतहि भासा।
विद्यापति कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पुरल आसा ॥८॥

१—भल कए = अच्छी तरह। पेखल न भेल = देख न सका। २—सयँ = संग मे, साथ मे। तडित-लता = बिजली। जनि = मानो। ३—नयन-तरङ्ग = कटाक्ष। ४—उरज = कुच। तबधरि = तब से। दगधे = जलाता है। अनग = काम। ५—कनक कटोरा = सोने का कटोरा (कुच)। अतनु = कामदेव। एक तो शरीर गौरवर्ण है और उस पर से (कुच) मानो मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कोंच (बलपूर्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है। ६—जनि बूझि ऐसन = ऐसा समझ पड़ता है मानो.....। ७—दसन = दांत। अधर = ओठ। भासा = भाषा, वचन। ८ अतए = इतना ही तो।

[२६]

ससन - परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह।
नव जलधर - तर संचर रे
जनि विजुरी - रेह ॥२॥
आज देखल धनि जाइत रे
मोहि उपजल रङ्ग।
कनक - लता जनि संचर रे
महि निर अवलम्ब ॥४॥
ता पुन अपरुब देखल रे
कुच -जुग अरविन्द।
विगसित नहि किछु कारन रे
सोझा मुख - चन्द ॥६॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बूझ रसमन्त।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त। ८॥

१—ससन = श्वसन, पवन। परस = स्पर्श से। खसु = गिर पड़ा। अम्बर = कपड़ा, अंचल। देख = देखा। धनि = बाला। २—जलधर = बादल। तर = तले, नीचे। जनि = मानो। रेह = रेखा। ३—जाइत = जाती हुई। रंग = प्रेम। ४—सचर = जा रही है। निर अवलम्ब = विना अवलम्ब का। ५—ता = उसपर भी। पुन = पुनः। जुग = दो। अरविन्द = कमल। ६—विगसित = खिला हुआ। सोझा = सम्मुख।

[३०]

अलखित हम हेरि विहुसलि थोर।
जनि रयनी भेल चाँद इँजोर ॥२॥
कुटिल कटाख लाट पड़ि गेल।
मधुकर-डम्बर अम्बर लेल ॥४॥
काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥६॥
लीला कमल भमर धरु वारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥
ते भेल वेकत पयोधर सोभ।
कनक-कमल हेरि काहि न लोभ ॥१०॥
आध नुकाएल आध उदास।
कुच कुम्भे कहि गेल अपन आस ॥१२॥
से अब अमिल निधि दए गेल सँदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥१४॥
भनइ विद्यापति दुहु मन जागु।
विसम कुसुम सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित = अलक्ष्य रूप से—बिना दूसरे के देखे। हेरि = देख कर। विहुसलि = मुस्कुराई। २—रयनी = रजनी, रात। इँजोर = उजाला। ५—काहिक = किसकी। के = कौन। ७—धरु वारि = निवारण कर—कौतुक से भ्रमर को कमल से निवारण कर। ९-ते = इससे। वेकत = व्यक्त, प्रकट। ११, १२—नुकाएल = छिपा हुआ। उदास = प्रकट। कुम्भ = घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रकट कुच-कुम्भ (दिखाकर) वह अपनी आशा कह गई (कि मिलूँगी) १३—अमिल =

(३१)

अम्बर विघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक-सम्भु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस चन्दा ॥२॥
कत रूप कहब बुझाई ।
मन मोर चचल लोचन बिकल भेल
ओ नहि अनइत जाई ॥४॥
आड़ वदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई ।
अओधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग वहि जाई ॥६॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
पुहवी नव पॅचवाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ।८॥

अप्राप्य। निधि = खजाना। १४—परिसेस = परिशेष, वाकी। १६—विसम = विषम, कठोर। कुसुम-सर = कामदेव का शर।

१—अम्बर = वस्त्र, अंचल। विघटु = हट गया। अकामिक = अकस्मात्। कर = हाथ। झाँपु = ढक लिया। सुछन्द = सुन्दर। अकस्मात् अंचल हट गया, (तव) कामिनी ने अपने दोनो हाथ से सुन्दर कुचो को ढक लिया। २—कनक-सम्भु = सोने के महादेव

(३२)

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
विहसि पलटि निहारि।
इन्द्रजालक कुसुम - सायक
कुहकि भेल वर नारि ॥२॥
जोरि भुज जुग मोरि बेढ़ल
ततहि वदन सुछन्द ।
दाम - चम्पक काम पूजल
जइसे सारद चन्द ॥४॥

(कुच) । दुइ पंकज = दो कमल (दोनो हाथ) । दस चंदा = दस चन्द्रमा (दस अगुलियाँ) । ३—कत = कितना । ४—अनइत = अन्यत्र, दूसरी जगह । ५—आड = ओट । ६—अओधा—उलटकर रखा हुआ । जुग बहि गई = युग वीत जाते है । ७—पुहवी = पृथ्वी । नव = नवीन । पंचवाने = कामदेव । ८—रमाने = रमण, पति ।

१—गेलि = गई । गजहु गामिनि = हाथी के समान मस्तानी चाल वाली । विहसि = मुस्कुराकर । निहारि = देखकर । २—इन्द्रजालक = ऐन्द्रजालिक, जादू भरा । कुसुमसायक = कामदेव । कुहकि = मायाविनी नटी भेलि = हुई । मानो वह श्रेष्ठ नारी काम ऐन्द्रजालिक की मायाविनी नटी हो । अर्थात् उसकी हँसी ने अद्‍भुत चमत्कार का अनुभव कराया । ३—४, मोरि = मोडकर । बेढ़ल = घेरा । ततहि = वहीं । वदन = मुख । दाम = रस्सी (माला) चम्पक = चम्पे की । जइसे = जैसे । सुछन्द = सुन्दर । दोनो हाथो को जडकर उनसे अपना सुन्दर मुख लपेट लिया, मानो कामदेव ने चम्पे की माला (हाथ) से शरद-चन्द्र (मुख) की पूजा की हो।

उरहि अंचल झाँपि चंचल
आध पयोधर हेरु।
पौन पराभव सरद-घन जनि
वेकत कएल सुमेरु ॥ ६ ॥
पुनहि दरसन जीव जुड़ाएब
टुटत विरह क ओर।
चरन जावक हृदय पावक
दहइ सब अँग मोर ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होय।
से जे रमनि परम गुनमनि
पुनु कए मिलव तोय ॥१०॥

४, ५—उरहि = वक्ष स्थल को । झाँपि = ढँककर । पयोधर=स्तन, कुच । हेरु = देखती है । पौन = पवन, वायु । पराभव = हारकर । जनि=मानो । वेकत = व्यक्त, प्रकट । कएल = किया । सुमेरु = पर्वत वक्ष स्थल को चंचल अचल से ढाँककर आधे कुच को देखती है, मानो पवन से हारकर शरद के मेघ (अचल) ने सुमेरु को (कुच) प्रकट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके से मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पडता है उसी प्रकार । ७—जीव प्राण। जुडाएब = शीतल होंगे। ओर=सीमा। ८—जावक = महावर । पावक = आग। दहइ = जलता है । उसके पैर के महावर (मेरे) हृदय में आग (लगा रहा) है जिससे मेरे सब अंग जल रहे हैं । १०—से = वह । पुनु = पुण्य, पुन. । मिलव = मिलेगी। तोय = तुम्हे ।

(३३)

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पंकज मधु-पिवि मधुकर रे
उड़ए पसारल पाँखि ॥ २ ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि वर नारि।
आसा-लुबुधल न तेजए रे
कृपन क पाछु भिखारि ॥४॥
इंगित नयन तरंगित रे
वाम भँओह भेल भंग।
तखन जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥ ६ ॥

१—आनन=मुख। भौंह सुरेखलि=भौंहो द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई। २-पंकज=कमल (मुख)। मधु=पुष्परस। पिवि=पीकर। मधुकर=भौंरा (नयन, उड़ए=उड़ने को। पसारल= पसार दिया, फैला दिया। पाँखि=पख, पर, (भौंह)। ततहि=वहाँ। धाओल=दौड़ गया। जतहि जहाँ। गेलि=गई। ४—आसा-लुबुधल= आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ। आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता। ५-इंगित=इशारेसे युक्त। तरगित= चंचल। वाम=बाईं। भँओह भेल भग=भौंह भंग हुई—भवें टेढी कीं। ६—तखन=उस समय। तेसर=तीसरा व्यक्ति। मनोभव=काम-

चन्दन चरचु पयोधर रे
गिम गज मुकुताहार।
भसम भरल जनि संकर रे
सिर सुरसरि जलधार॥८॥
वाम चरन अगुसारल रे
दाहिन तेजइत लाज।
तखन मदन सर पूरल रे
गति गंजए गजराज॥१०॥
आज जाइत पथ देखलि रे
रूप रहल मन लागि।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
धैरज गेल भागि॥११॥

देव। ७—चरचु = चर्चित किया। पयोधर = कुच, स्तन। गिम = गले में। भरल = भरा हुआ। सुरसरि = गंगा। कुच चन्दन से चर्चित हैं, जिनपर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है, मानो भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो। ९—अगुसारल = अग्रसर किया, आगे किया। दाहिन तेजइत लाज = दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है। १०—तखन = उस समय। मदन = कामदेव। गति = चाल। गजए = पराजित करती है। गजराज = हाथी। ११—रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया। खन = क्षण। सयँ = से। गेल = गये।

रूप लागि मन धाओल रे
कुच-कचन-गिरि साँधि।
ते अपराधे मनोभव रे
ततहि धएल जनि बाँधि ॥१४॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बुझ रसमंत।
रूपनरायन नागर रे
लखिमा देइ कत ॥१६॥

१३, १४--लागि = लिये। कुच-कंचन-गिरि सांधि = स्तन रूपी दो सोने के पहाड़ो कि संधि-स्थान मे-बीच मे। ते = उस। बाधि धएल = बांध रक्खा। रूप के लिये--सौंदर्य के लोभ में मेरा मन उसके कुच रूपी दो पहाड़ो के बीच में जा दौडा, मानो, इसी अपराध मे कामदेव ने उसे वहीं बांध रक्खा। १५--बुझ = बूझो, समझो। रसमन्त = रसिक।

हे सज्जना शृणुत मद्वचना समस्ता,
स्वर्गे सुधाऽस्ति सुलभा न तु सा भवद्भि।
कुर्वंस्तदत्र भवतामुपकारकारी
काव्यामृतं पिबत तत् परमादरेण ॥"

(३४)

पथ-गति पेखल मो राधा ।
तखनुक भाव परान पए पीड़लि
रहल कुमुद-निधि साधा ॥२॥
ननुआ नयन नलिनि जनि अनुपम
वक निहारइ थोरा ।
जनि सृखल मे खगवर बाँधल
दीठि नुकायल मोरा ॥४॥
आध वदन ससि विहसि देखाओलि
आध पीहलि निअ बाहू ।
किछु एक भाग वलाहक झाँपल
किछुक गरासल राहू ॥६॥

१,२-पथ गति = पथ में जाती हुई । पेखल = देखा । मो = मैं । तखनुक = उस समय का । परान पए = प्राण भी । पीडलि = पीड़ित किया । रहल = रह गया । कुमुद-निधि = कुमुद का सर्वस्व (चन्द्र) । साधा = साध, इच्छा । मैंने राह में जाती हुई राधा को देखा । उस समय की उसकी भावभगी ने प्राणों तक को पीडित किया, उस चन्द्र (मुख) को देखने की साध वनी ही रह गई । ३— ननुआ = सुन्दर । नलिनि = कमलिनी । जनि = समान । वंक = टेढा । निहारइ = देखती है । ४—सृंखल = शृंखला, जजीर । खगवर = पक्षिश्रेष्ठ। खजर । वांधल = वांधा । नुकाएल = छिप गया । ५—वदन-ससि = मुखरूपी चन्द्रमा । देखाओलि = दिखलाई । पीलहि = टॉप लिया । निअ = निज । वाहू = वाँह से, भुजा से । ६—झाँपल = ढाँप दिया । वलाहक = मेघ ।

कर-जुग पिहित पयोधर-अंचल
चचल देखि चित भेला।
हेम कमल जनि अरुनित चचल
मिहिर-तरे निन्द गेला ॥८॥
भनइ विद्यापति सुनहु मधुरपति
इह रस केह पए बाधा।
हास दरस रस सबहु बुझाएल
नाल कमल दुइ आधा ॥१०॥

गरासल=ग्रस लिया। ७,८—पिहित—आवृत, ढँका। पयोधर=स्तन। अंचल=विभाग, तट। हेम=सोना। जनि=मानो। अरुनित=लालिमा-युक्त। तरे=नीचे। मिहिर=सूर्य। निन्दा गेला=सो रहा। दोनो हाथो से ढके हुए स्तनो के तट-भाग देखकर चित्त चचल हो गया, मानो, सोने के कमल (दोनो कुच) लालिमा-युक्त चचल सूर्य (लाल हथेली) के नीचे सो रहे हो। ९, १०—सुनहु=सुनो। मधुरपति=मथुरा-पति। इह=यह। केह=कौन। हास=हँसी। दरस=दर्शन। बुझाएल=बूझ पडा, मालूम हुआ। नाल=(कमल की) डटी। हे मधुरापति श्रीकृष्ण, (तुम्हारे) इस रस मे कौन बाधा देगा? तुम्हारी पारस्परिक हँसी और दर्शन के रस से ही सबको मालूम हो गया कि मृणाल और कमल (तुम्हारे हाथ रूपी मृणाल और उसके कुच रूपी कमल) ये दोनो (एक ही पदार्थ) के दो भाग है—अर्थात् उसके कुच के लिये तुम्हारे हाथ ही उपयुक्त है।

(३५)

जहाँ-जहाँ पग-जुग धरई । तहि-तहि सरोरुह झरई ॥२॥
जहाँ-जहाँ झलकत अग । तहि-तहि विजुरि-तरग ॥४॥
कि हेरल अपरुब गोरि । पइठल हिय मधि मोरि ॥६॥
जहाँ-जहाँ नयन बिकास । तहि-तहि कमल-प्रकास ॥८॥
जहाँ लहु हास सँचार । तहि-तहि अमिय-बिकार ॥१०॥
जहाँ जहाँ कुटिल कटाख । ततहि मदन-सर लाख ॥१२॥
हेरइत से धनि थोर । अब तिन भुवन अगोर । १४॥
पुनु किए दरसन पाब । अब मोहे इत दुख जाब ॥१६॥
बिद्यापति कह जानि । तुअ गुन देहब आनि ॥१८॥

१, २—पग जुग = दोनो पैर । धरई = धरती है, रखती है। तँहि = वहां । सरोरुह = कमल । झरई = झडते है । ३, ४—झलकत = झलकते है, चमकते हैं । अंग = शरीर । बिजुरि-तरंग = बिजली का चंचल प्रकाश । ५, ६—कि = क्या । हेरल = देखा । गोरि = गौर-वदना, सुन्दरी । पइठल = पैठ गई, घुस गई । हिय-मधि = हृदय में । मोरि = मेरे । ९, १०—लहु = लघु, मद । हास = हँसी । अमिय = अमृत । ११, १२—कुटील = टेढे । कटाख = कटाक्ष । ततहि = वहाँ ही । मदन = कामदेव । सर = वाण । १३, १४—हेरइत = देखते ही । से = वह । धनि = बाला, सुन्दरी । अगोर = प्रतीक्षा करना । १५, १६—पुनु = पुनः । किए = क्या । १६—अब मैं इसी दुख से मरूँगा । १८— तुअ = तुम्हारे । देहब आनि = ला दूँगा ।

राधा का प्रेम

(३६)

ए सखि पेखलि एक अपरूप।
सुनइत मानबि सपन-सरूप ॥ २ ॥
कमल जुगल पर चाँद क माला।
तापर उपजल तरुन तमाला ॥ ४ ॥
तापर वेढ़लि विजुरी-लता।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥ ६ ॥
साखा-सिखर सुधाकर पाँति।
ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति ॥ ८ ॥
विमल विम्बफल जुगल विकास।
तापर कीर थीर करु वास ॥ १० ॥
तापर चंचल खंजन-जोर।
तापर साँपिनि झाँपल मोर ॥ १२ ॥
ए सखि रंगिनि कहल निसान।
हेरइत पुनि मोर हरल गिआन ॥ १४ ॥
कवि विद्यापति एह रस भान।
सुपुरुख मरम तुहू भल जान ॥ १६ ॥

३—कमल जुगल= दो पैर। चाँद क माला=नखों की पंक्ति। ४—तरुन तमाल=काला शरीर। ५—वेढ़लि=लिपटी हुई। विजुरी-लता=पीताम्बर। ७—साखा-सिखर=तमालरूपी शरीर की शाखा-रूपी बाहुओं के अग्र भाग में। सुधाकर-पाँति=नखों की पंक्ति। ८—नव पल्लव=हथेली। अरुनक भाँति लाल।

[३७]

की लागि कौतुक देखलो सखि
निमिष लोचन आध
मोर मन-मृग मरम वेधल
विषम बान बेआध ॥२॥
गोरस बिरस बासी बिसेखल
छिकहु छाड़ल गेह।
मुरली धुनि सुनि मो मन मोहल
विकहु भेल सन्देह ॥४॥
तीर तरगिनि कदम्ब - कानन
निकट जमुना घाट।
उलटि हेरइत उलटि परलओ
चरन चीरल काँट ॥६॥
सुकृति सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गुपाल सुन्दर
मिलल नन्दकुमार ॥८॥

९—बिम्बफल = ओष्ठ। १०—गीर = नाक। ११—खजन जोर = आंखो का जोडा। साँपिनि = केश। मोर— मोर मुकुट।

१—की लागि = किसलिये। निमिष = एक क्षण। लोचन आध = आधी आँखो से, कनखियो से। २—मरम = हृदय का भीतरी भाग। विषम = कठोर। ३—विरस = रसहीन। बासी विसेखल = विशेषतः बासी। छिकहु = छींकने पर भी। ५—तरंगिनि = नदी।

[३८]

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ
बारल लोचन - चोर।
पिया मुख - रुचि पिबए धाओल
जनि से चाँद चकोर ॥२॥
ततहु सयँ हठ हटि मो मानल
धएल चरनन राखि।
मधुप मातल उड़ए न पारए
तइअओ पसारए पाँखि ॥४॥

१, २ अवनत = नीचे। आनन = मुख। बारल = निवारण किया। रोक रक्खा। मुख-रुचि = मुख की शोभा। पिबए = पीने के लिये। धाओल = दौड पडा। जनि = मानो। से = वह। मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन-रूपी चोरों को (उनकी ओर जाने से) रोक दिया, किन्तु प्रीतम के मुख की शोभा का पान करने के लिये वे दौड़ पडे, जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौडते हैं। ३, ४ | ततहु = वहाँ। सयँ = से। हटि = हटाकर। मो = मैं। आनल = लाया। धएल राखि = धर रक्खा। मधुप = भौरा। मातल = मस्त बना, पागल। उड़ए न पारए = नहीं उड़ सकता। तइअओ = तो भी। पसारए = पसारता है। वहाँ से—मुख की ओर से—मै (आंखो को) हठ पूर्वक रोककर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रक्खा—नीचे की ओर देखने लगी। (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा नहीं उड

माधव [1]बोलल मधुर वानी
से सुनि मुँदु मोयँ कान।
ताहि अवसर ठाम बाम भेल
धरि धनू पँचवान ॥६॥
तनु पसेब पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चूनि भए काँचुअ फाटलि
बाहु वलआ भाँगु ॥८॥
भन विद्यापति कम्पित कर हो
बोलल बोल न जाय
राजा सिबसिंघ रूपनरायन
साम सुन्दर काय ॥१०॥

सकता तोभी पंख पसारता है उसी तरह मेरी आँखें बराबर उस ओर जाने लगीं) १—मुँदु=मूँद लिया। ठाम=जगह। बाम भेल=विरुद्ध हुआ, वैरी हुआ। पंचवान=कामदेव। ६—उसी समय उसी जगह कामदेव धनुष धारण कर मेरा वैरी हुआ—मुझपर बाणों की बौछार करने लगा। ७—पसेव=पसीना। पसाहनि=प्रसाधनी, ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि=दह गया, धो गया। पुलक= रोमाञ्च। तइसन=उसी प्रकार। ८—चूनि चूनि भए=खंड-खंड होकर, चिथडे-चिथडे होकर। काँचुअ=कंचुकी, चोली। वलआ= चूडी। भाँगु—फूट गई। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा, जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गईं।] ९—कम्पित कर हो=हाथ कांप रहे है। बोलल बोल न जय=बात कही नहीं जाती।

[३९]

सामर सुन्दर ए बाट आएत
तें मोरि लागलि आँखि।
आरति आँचर साजि न भेले
सब सखीजन साखि ॥२॥
कहहि मो सखि कहहि मो
कत तकर अधिवास।
दूरहु दूगुन एड़ि मैं आवओ
पुनू दरसन आस ॥४॥
कि मोरा जीवन कि मोरा जौवन
कि मोरा चतुरपने।

१—ए बाट = इस रास्ते। तें = इसी कारण। २—आरति = आर्त्तावस्था से, व्याकुलता से। साखि = साक्षी, गवाह। व्याकुलता से—प्रेमावेश से—मैं आंचल को सँभाल भी न सकी-अपने कुचों को भली-भांति ढक भी न सकी, इस बात को गवाह सभी सखियां हैं। ३, ४—मो = मझसे। कत = कहाँ। तकर = उसका। अधिवास = निवास-स्थान। दूरहु दूगुन = दुगुनी दूरी। एड़ि = अतिक्रमण कर। आवओ = आती हूँ। पुनू = पुन। कहो, ऐ मेरी सखी, कहो, उसका निवास-स्थान कहाँ है? दुगुनी दूरी। (होने पर भी उसे) अतिक्रम कर मैं पुन दर्शन पाने की आशा मे यहाँ आती हूँ। ५, ६—मरुछलि = मूर्च्छित। अछओ = हूँ। मेरी जिन्दगी क्या, जवानी क्या और चतुराई क्या—वे सब मिथ्या हैं। काम के बाणों से मैं मूर्च्छित हूँ और

मदन-वान मुरुछलि अछओ
सहओ जीव अपने ॥६॥
आध पद धरइत मोए देखल
नागर-जन समाज
कठिन हिरदय भेदि न भेले
जाओ रसातल लाज ॥८॥
सुरपति-पाए लोचन मागओ
गरुड़ मागओ पाँखि।
नन्द क नन्दन हौं देखि आवओ
मध मनोरथ राखि ॥१०॥

(उसकी मार्मिक पीड़ा) अपने प्राणों मे सह रही हूँ। ७.८—नागर जन=चतुर लोग। भेदि=छेदना, विदीर्ण होना। कृष्ण की ओर आधा पग रखते—प्रेमावेश में उनकी ओर एक पैर बढाते ही—मुझे समाज के चतुर लोगो ने देख लिया। पर, मेरा कठिन हृदय फट नहीं गया, लज्जा पाताल मे धंस गई। ९—सुरपति=इन्द्र। पाए=चरण मे। पाँखि=पख। इन्द्र के चरणो मे मैं उनसे सहस्र लोचन माँगता हूँ, गरुड़ से पख माँगता हूँ। १०—देखि अवओ=देख आऊँ।

Poetry is that, which lifts the veil from the hidden beauty of the world. —*Shelly.*

(४०)

कानु हेरब छल मन बड़ साध।
कानु हेरइत भेल अत परमाद ॥२॥

तबधरि अबुधि मुगुधि हम नारि।
कि कहि कि सुनि किछु बुझिए न पारि ॥४॥

साओन-घन सम झर दु नयान।
अबिरत धस धस करए परान ॥६॥

की लागि सजनी दरसन भेल।
रभसे अपन जिउ पर हथ देल ॥८॥

ना जानू किए करु मोहन-चोर।
हेरइत प्रान हरि लेई गेल मोर ॥१०॥

अत सब आदर गेल दरसाइ।
जत बिसरिए तत बिसर न जाइ ॥१२॥

विद्यापति कह सुन वर नारि।
धैरज धरु चित मिलब मुरारि ॥१४॥

१—कानु = कृष्ण। हेरब = देखना। छल = था। साध = इच्छा। २—अत = इतना। परमाद = प्रमाद, आपत्ति। ३—तबधरि = तबसे। मुगुधि = मुग्धा। ४—कि = क्या। बुझिए न पारि = नहीं समझ सकती। ५—साओन घन = श्रावण का मेघ। नयान = नयन, आँख। ६—अबिरत = हरदम। धस धस करए = धक-धक करता ८—रभसे = कौतुक में ही। पर हथ = दूसरे के हाथ में। ९—किय = क्या। ११—गेल दरसाइ = दिखला गया, बतला गया। १२—जत = जितना। बिसरिए = भूलिये। बिसर न जाइ = नहीं भूलता।

[४१]

कि कहव हे सखि इह दुख ओर।
बाँसि-निसास-गरल तनु भोर ।४॥

हठ सयँ पइसए स्रवनक माझ
ताहि खन विगलित तन मन लाज ॥४॥

विपुल पुलक परिपूरए देह ।
नयन न हेरि हेरए जनु केह ॥६॥

गुरु-जन समुखहि भाव तरंग ।
जतनहि वसन झाँपि सब अंग ॥८॥

लहु-लहु चरण चलिए गृह माझ।
आजु दइव विहि राखल लाज ॥१०॥

तनु मन विवस खसए निवि-बंध।
कि कहव विद्यापति रहु धन्द ॥१२॥

१—कि=क्या। २—बाँसि निसास-गरल=वंशी के निःश्वास के विष से—वंशी की आवाज की मादकता से। तनु भोर=शरीर बेसुध है। ३—हठ सँय=हठपूर्वक। पइसए=पैठता है। स्रवनक=कानों के। माझ=मध्य, में। ४—ताहि खन=उसी समय। विग-लित=दूर हुई, जाती रही। ५—बिपुल=अधिक, असख्य। पुलक=रोमाच। ६—आंखों से उस ओर—कृष्ण की ओर—नहीं देखती हूँ कि कहीं कोई ऐसा करते देख न ले। ७—गुरुजन—अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति। भाव तरंग=भावना की लहर। ९—लहु-लहु=धीरे धीरे। दइव बिहि=दैव ब्रह्मा। ११—खसए=गिर पड़ता है। १२—धन्द—फिक्र।

[४२]

कत न वेदन मोहि देसि मदना।
हर नहि वला मोहि जुवति जना ॥२॥
विभुति-भूषन नहि चानन क रेनू।
बघछाल नहि मोरा नेतक वसनू ॥४॥
नहि मोरा जटाभार चिकुर क वेनी।
सुरसरि नहि मोरा कुसुम क स्रेनी ॥६॥
चाँद क बिन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा।
ललाट पावक नहि सिन्दुर क फोटा। ८।
नहि मोरा कालकूट मृगमद चारु
फनपति नहि मोरा मुकुता हारु ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन देव कामा।
एक पए दूखन नाम मोरा बामा ॥१२॥

अरे कामदेव ! मुझे इतनी वेदना मत दो, मैं महादेव नहीं वरन् युवती हूँ। (शरीर में लगे) ये विभूति के भूषण (लेप) नहीं, वरन् चन्दन के रेणु हैं, यह बाघछाला नहीं, वरन् मेरी चुनरी (नेतक बसनू) है (सिर पर) यह जटा का भार नहीं, वरन् केशों की गुथी हुई वेणी है। गङ्गा नहीं, वरन् वेणी में गूथे गये (उजले) फूलों की कतार है। (कपाल पर) चन्दन की वेंदी अथवा माँगटीका है। द्वितीया का चन्द्रमा (इन्दु छोटा नहीं। ललाट में (तृतीय नेत्र की) अग्नि नहीं, सिंदूर का टीका है। यह विष नहीं, चिबुक पर सुन्दर (काला) मृगमद है। (गले में) अजगर नहीं, किन्तु मेरी मुक्ताओं की माला है। विद्यापति कहते हैं,

(४३)

मनमथ तोहे की कहब अनेक।
दिठि अपराध परान पए पीड़सि
ते तुश्र कौन विवेक।२॥
दाहिनि नयन पिसुन गन बारल
परिजन वामहि आध।
आध नयन-कोने जब हरि पेखल
तैं भेल अत परमाद।४॥
पुर-बाहिर पथ करत गतागत
के नहि हेरत कान।
तोहर कुसुम-सर कतहु न संचर
हमर हृदय पँचवान।६॥

हे कामदेव, सुनो, मुझमें दोष है तो केवल एक यही, कि मेरा नाम 'वामा' (रमणी) है [जो महादेव के 'वामदेव' नाम से मिलता है]

१,२. मनमथ = कामदेव। दिठि = दृष्टि, नजर। पीड़सि = पीडा देते हो। ३,४–पिसुन = दुष्ट। बारल = मना किया। परिजन = घर के लोग परमाद = प्रमाद, झंझट। दहिने नेत्र को दुष्टो के कारण मना करना पडा—दहिने नेत्र से दुष्टो के डर से नहीं देखती - परिवार वालो के कारण बायें नेत्र के आधे को निवारण किया। रह गया बायें नेत्र का आधा भाग-सो आधे नेत्र से ही—बायें नेत्र के कटाक्ष से ही—जब कृष्ण को देखा तो इतना पागलपन मुझमे आ गया। ५-पथ = राह। करत गतागत = आते-जाते। कान = कृष्ण। ६-कुसुम सर = फूलो के बाण। पँचबान = कामदेव के पांच शर।

(४४)

एक दिन हेरि हेरि हँसि हँसि जाय ।
अरु दिन नाम धए मुरलि बजाय ॥२॥

आजु अति नियरे करल परिहास ।
न जानिए गोकुल ककर विलास ॥४॥

साजनि ओ नागर-सामराज ।
मूल बिनु परधन माँग बेआज ॥६॥

परिचय नहि देखि आनक काज ।
न करए संभ्रम न करए लाज ॥८॥

अपन निहारि निहारि तनु मोर ।
देइ आलिंगन भए बिभोर ॥१०॥

खन खन वैदगधि कला अनुपाम ।
अधिक उदार देखिअ परिनाम ॥१२॥

विद्यापति कह आरति ओर ।
बुझिओ न बूझए इए रस भोर ॥१४॥

२—अरु=और, अन्य ।। ३-नियरे=निकट । परिहास=हँसी, मजाक । ककर=किसका । ५,६—नागर सामराज =चतुरों का सम्राट् । मूल=मूलधन । सखि, वह चतुरों का बादशाह है, देखो तो, दूसरे की सम्पत्ति पर बिना मूल-धन के सूद माँगता है (एक तो धन दूसरे का, उसमें भी मूल धन गायब, फिर सूद कैसे !) ७—दूसरे का काम देखकर भी नहीं परिचय करता—नहीं समझता ८-संभ्रम=डर । ११—प्रति-क्षण अनुपम विदग्धतापूर्ण कला (दिखाता है) १४—यह रस में बेसुध (कृष्ण) समझकर भी नहीं समझता ।

दूती

कृष्ण की दूती

(४५)

धनि धनि रमनि जनम धनि तोर ।
सब जन कान्हु कान्हु करि झूरए
से तुअ भव विभोर ॥ २ ॥
चातक चाहि तिआसल अम्बुद
चकोर चाहि रहु चन्दा ।
तरु लतिका अवलम्बन करिए
मझु मन लागल धन्दा ॥ ॥
केस पसारि जवे तुहुँ राखलि
उर पर अम्बर आधा ।

१—धनि = धन्य । रमनि = रमणी, स्त्री । तोर = तुम्हारा । २-जन = आदमी । कान्हु = कृष्ण । झूरए = जलते, व्याकुलहोते । से = वह । तुअ = तुम्हारे । विभोर=बेसुध । ३,४—चातक=पपीहा । चाहि=देखना । तिआसल = तृषित,प्यासा । अम्बुद = बादल । तरु = वृक्ष । लतिका = लता । करिए = कर रहा है । मझू = मेरे । लागल = लगा धन्दा=सन्देह । (कैसी विचित्रता है !) तृषित मेघ आज पपीहे की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है, (इन विरोधी बातो को देख) मेरे मन में संशय हो रहा है । [कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिये थी, वह श्रीकृष्ण में है ।] ५ पसारि=पसारकर, खोलकर । राखलि=रक्खा ।

से सब सुमिरि धान्हु भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ॥६॥
हँसइत कब तुहु दसन देखाएल
करे कर जोरहि मोर।
अलखित दिठि कअ हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि ,कर कोर ॥८॥
एतहु निदेस कहल तोहे सुन्दरि
जानि तोहे करह बिधान।
हृदय-पुतलि तुहु से सून कलेवर
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

उर = छाती, वक्ष स्थल। अम्बर = वस्त्र, अचल। ६–से = वह। भेल = हुआ। इथे = इसका। धनि = बाले। समाधा = निवारण। ७,८–दसन = दाँत करे कर जोरहि मोर = हाथ से हाथ जोडकर मुडती हुई। अलखिते = अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुन = पुनः। हेर = देखकर। कर कोर = कोर कर = कोड़ में करना–रखना, आलिंगन करना। हाथ से हाथ जोड कर (अंगडाइयाँ लेती हुई) कब तुमने पीछे की ओर मुड-कर, हँसती हुई, थ' ने दाँतो की छटा दिखाई, एवम् अलक्ष्य दृष्टि से कब उनके हृदय को प्रसारित कर, पुनः उनकी ओर देखकर, सखी का आलिंगन किया। ९—एतहु = इतना। निदेस = इसारा। कहल = (मैंने) कहा। तोहे = तुम्हे। जानि = जानकर। करह = करो। बिधान = उपचार। १०—हृदय-पुतलि = हृदय की पुतली, प्राण। से = वह (कृष्ण)। सून = शून्य। कलेवर = शरीर। भान = कहता है।

[४६]

सुन सुन ए सखि कहए न होए।
राहि राहि कए तन मन खोए॥ २॥
कहइत नाम पेम भए भोर।
पुलक कम्प तनु घरमहि नोर॥ ४॥
गद-गद भाखि कहए वर-कान।
राहि दरस बिनु निकस परान। ६॥
जब नहि हेरब तकर से मुख।
तब जिउ-भार धरब कोन सुख॥ ८॥
तुहु बिनु आन इथे नहि कोइ।
बिसरए चाह बिसरि नहि होइ॥ १०॥
भनइ विद्यापति नाहि बिबाद।
पूरब तोहर सब मन साध॥ १२॥

१-कहए न होय=कहा नहीं जाता। २-राहि=राधा। कए=करके कहकर। खोए=खोना, भुला देना। ३--पेम=प्रेम। भोर=बेसुध। ४-पुलक=रोमाच। घरमहि=पसीना भी। नोर=आंसू। शरीर रोमाच होकर कांपने लगता है, पसीना होता है और आंसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५--गदगद=रुंधे हुए कंठ से। भाखि=कहना। कान=कृष्ण। ६-निकसे=निकलता है। ७-तकर=उसका। से=वह। ८-धरब=धरूंगा ९-आन=दूसरा। इथे=यहाँ, तुम्हारे सिवा यहाँ दूसरा कोई नहीं—तुम्हें छोड़कर कृष्ण अन्य किसी को प्यार नहीं करते। १०—बिसरए=विस्मरण होना, भूल जाना। ११-बिबाद=कलह। १२-पूरब पूरी होगी। मन साध=मनःकामना।

[४७]

कंकट माझ कुसुम परगास।
भमर विकल नहि पावए पास ॥ २ ॥
भमरा भेल घुरए सबे ठाम।
तोहे विनु मालति नहि बिसराम ॥ ४ ॥
रसमति मालति पुन पुन देखि।
पिबए चाह मधु जीव उपेखि ॥ ६ ॥
ओ मधुजीवी तोंहे मधुरासि।
साँचि धरसि मधुमने न लजासि ॥ ८ ॥
अपनेहु मने गुनि बुझ अवगाहि।
तसु दूषन बध लागत काहि ॥ १० ॥
भनहि विद्यापति तौं पय जीव।
अधर सुधारस जौं पय पीब ॥ १२ ॥

१—परगास = प्रकाश। २—पावए = पाता है, जा सकता है ३ भमरा (माधव) ४—मालति (राधा) ६—जीव उपेखि—जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीवेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके। ८—साँचि धरसि—संचित करके रखा है। ९—अवगाहि = डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भली भाँति सोचो समझो। ११—तौं पय जीव = तब जी सकता है। १२—जौं पय पीब = यदि वह पी सके।

(४८)

आजु हम पेखल कालिन्दी कूले।
तुअ विनु माधव विलुठए धूले ॥२॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने।
किए विष दाह-समय जल दाने ॥४॥
मदन-भुजंगम दंसल कान।
विनहि अमिय-रस कि करब आन ॥६॥
कुलवति धरम काँच समतूल।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥८॥
आनल वेचि नीलमनि हार।
से तुहु पहिरवि करि अभिसार ॥१०॥
नील निचोल झाँपवि निज देह।
जनि घन भीतर दामिनि-रेह ॥१२॥
चौदिक चतुर सखी चलु संग।
आजु निकुंज करह रस-रग ॥१४॥

१–पेखल = देखा। कालिन्दी = यमुना। कूले = किनारे में २-बिलुठए = लोट रहे हैं। ३-कत = कितने। सत = सौ। आने = लाता है ४-विष की ज्वाला के समय जल के दान से क्या — विष की ज्वाला कहीं पानी से शान्त होती है ? ५–भुजगम = सर्प। दंसल = काटा। कान = कृष्ण। ६–अमिय = अमृत। कि करब = क्या करेगा। आन = अन्य। ८-समतूल = समान। १० से = वह। अभिसार = गुप्त मिलन, प्रियतम के पास गमन। ११-निचोल = चोली। १२–घन = मेघ। दामिनि = बिजली। रेह–रेखा। चौदिक = चारों ओर।

(४९)

आज पेखल नन्द-किसोर।
केलि-विलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहत विभोर॥२॥
जब धरि चकित विलोकि विपिन-तट
पलटि आओति मुख मोरि।
तबधरि मदन मोहन तरु कानन
लुटइ धीरज पुनि छोरि।४॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरबि
पाओब चेतन नाह।
भुजंगिनि दसि पुनहि जदि दंसए
तबहि समय विष जाह।६॥
अब सुभ खन धनि मनिमय भूषन
भूषित तनु अनुपाम।
अभिसरु बल्लभ हृदय बिराजहु
जनि मनि काचन-दाम।८॥

२-अह निसि = दिन-रात। विभोर = बेसुध। ३-जब धरि = जबसे। ४-तब धरि = तबसे। लुटइ = लोटते है। ४--पाओब चेतन = चेतना पायेंगे, सुध में आयेंगे। नाह = नाथ (कृष्ण)। ६--भुजंगिनि = साँपिन। दसि = काटकर। तबहि समय = उसी समय--उसी हालत मे। जाह = जाता है। ८ अभिसरु = अभिसार करो--गुप्त मिलन स्थान में जा मिलो। बल्लभ = प्यारा, विद्यापति का उपनाम। जनि मनि काचन-दाम = जैसे सोने के धागे में मणियों की माला पिरोई गई हो।

(५०)

प्रथम सिरिफल गरब गमओलह
जौं गुन-गाहक आवे।
गेल जौवन पुनु पलटि न आवए
केवल रह पछतावे ॥ २ ॥
सुन्दरि, बचन करह समधाने।
तोहि सनि नारि दिबस दस अछलिहुँ
ऐसन उपजु मोहि भाने ॥४॥
जौवन रूप तावेधरि छाजत
जावे मदन अधिकारी।
दिन दस गेले सखि सेहओ पराएत
सकल जगत परिचारी ॥६॥
विद्यापति कह जुवति लाख लह
पड़ल पयोधर-तूले।
दिन दिन आगे सखि ऐसनि होएबह
घोसिनि घोर क मूले ॥ ८ ॥

१—सिरिफल=श्रीफल, बेल(कुच)। गमओलह=गँवा दिया, खो दिया। २—जौं=जबतक। आवे=आता है। ३—करह समधाने=सावधान करो, विचार करो। ४—सनि=समान। अछलिहु=मैं भी थी। भाने=अनुमान। ५—छाजत=शोभता है। ६—गेले=जाने पर। सेहओ=वह भी। पराएत=भागेगा। ७—पयोधर-तूले=कुच तराजू पर है। ८—आगे सखि=अरी सखि। होएब=हो जाओगी। घोसिनि=ग्वालिन। घोरक=मट्ठा। मूले—मूल्य की।

(५१)

ए धनि कमलिनि सुन हितबानि।
प्रेम करबि जब सुपुरुष जानि॥ २॥
सुजन क प्रेम हेम समतूल।
दहइत कनक द्विगुन होय मूल॥ ४॥
टुटइत नहि टुट प्रेम अद्भुत।
जइसन बढ़ए मृनाल क सूत॥ ६॥
सबहु मतंगज मोति नहिं मानि।
सकल कंठ नहिं कोइल-बानि॥ ८॥
सकल समय नहिं रीतु बसन्त।
सकल पुरुष-नारि नहि गुनवन्त॥ १०॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
प्रेम क रीत अब बुझह विचारि॥ १२॥

१—धनि=बाला। कमलिनी=पद्मिनी जाति की स्त्री। बानि=वाणी, बात। २—जब प्रेम करो तो सुपात्र ही जानकर। ३—सुजन क=सज्जन का। हेम=सोना। समतूल=समान। ४—दहइत=जलने पर। कनक=सोना। द्विगुन=दो गुणा। मूल=मूल्य। ६—जइसन=जिस प्रकार बढ़ए=बढ़ता है। मृनाल का=मृणाल का, कमल की डंटी का। सूत=सूत्र, धागा, भीतर का रेशा। ७—मतंगज=हाथी। मोति—मुक्ता। ८—कोइल बानि=कोयल की काकली। १०—सभी स्त्रियाँ और पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते। 'घाघ' की एक कहावत इसी भाव की है—

सदा न बागा बुलबुल बोलें, सदा न बाग बहारा।
सदा न जवानी रहती यारों, सदा न सुहबत यारा॥

(५२)

राधा की दूती

सुनु मनमोहन कि कहब तोय।
मुगुधिनि रमनी तुअ लागि रोय ॥२॥
निसि-दिन जागि जपय तुअ नाम।
थर-थर काँपि पड़ए सोइ ठाम ॥४॥
जामिनि आध अधिक जब होइ।
बिगलित लाज उठए तब रोइ ॥६॥
सखिगन जत परबोधय जाय।
तापिनि ताप ततहिं तत ताय ॥८॥
कह कविसेखर ताक उपाय।
रचइत तअइ रयनि बहि जाय ॥१०॥

१—कि=क्या। कहब=कहूँ। तोय=तुम्हे।२—मुगुधिनि=मुग्धा, प्रेमासक्ता। रमनि=रमणी, स्त्री। तुअ लागि=तेरे लिये रोय=रोती है।४—पडए=(गिर) पड़ती है। ठाम=जगह।५—जब रात आधी से अधिक बीत जाती है।६—बिगलित लाज=लाज से रहित होकर। उठए तब रोइ=तब रो उठती है।७—जत=जितनी। परबोधए=प्रबोध करती है, समझाती है।८—तापिनि=ज्वाला से जली हुई। ताप=ज्वाला से। ततहि तत=उतना-ही-उतना। ताय=जलती है। (वह बिरह-ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है।९—ताक=उसका।१०—बहि जाय=बह जाती है, बीत जाती है।

(५३)

माधव ! कि कहब से बिपरीत ।
तनु भेल जरजर भामिनी अन्तर
चित बाढ़ल तसु प्रीत ॥२।
निरस कमल-मुख कर अवलम्बइ
सखि माझ बइसलि गोइ ।
नयन क नीर थीर नहि बाँधइ
पक कयल महि रोइ ॥४॥
मरम क बोल, बयन नहि बोलय
तनु भेल कुहु-ससि खीना ।
अवनि उपर धनि उठए न पारइ
धएलि भुजा धरि दीना ।६॥
तपत कनक जानि काजर भेल तनु
अनि भेल बिरह-हुतासे ।
कवि विद्यापति मन अभिलासन
कान्हु चलइ तसु पासे ॥८।

२--जरजर = जर्जर, अत्यन्त क्षीण । भामिनी = स्त्री। अन्तर = भीतर । बढ़ल = बढ़ गया । तसु = उसी प्रकार । ३—निरस = रसहीन, उदास । कर = हाथ । अवलम्बइ = अवलम्बन करके ।माझ = मध्य । बइसलि = बैठी । गोइ = छिपाकर । ४—नयन क नीर = आँसू । थीर = स्थिरता । ५—मरम क बोल = मर्म कथा, हृदय के भाव । कुहु-ससि = अमावास्या का चंद्र ।६-उठए न पारइ = उठ नहीं सकती । पृथ्वी पर वह नारी स्वयं उठ नहीं सकती, (सखियाँ) उस दीना को भुजा पकड़कर (धरती पर से)

(५४)

लोटइ धरनि, धरनि धरि सोइ।
खने खन साँस खने खन रोइ ॥३॥
खने खन मुरछइ कंठ परान।
इथि पर की रति दैव से जान ॥४॥
हे हरि पेखलौं से वर नारि।
न जीवइ विनु कर-परस तोहारि ॥६॥
केओ केओ जपय वेद दिठि जानि।
केओ नव ग्रह पुज जोतिष आनि ॥८॥
केओकेओ कर धरि धातु विचारि।
विरह-विखिन कोइ लखए न पारि ॥१०॥

उठाती है। ७—तप्त = तप्त, तपाये हुए। कनक = सोना। जनि = समान। हुतासे = अग्नि। ८—तनु = उसके।

१—लोटइ = लोटती है। धरनि = पृथ्वी। सोइ = वह, ३—खने-खन = क्षण-क्षण में। साँस = उससे लेती है। रोइ = रोती है। ३—क्षण-क्षण में वह मूर्छित हो जाती है और प्राण कंठ तक चले आते हैं (मृतप्राय हो जाती है)। ४-इथि = इसके। पर = बाद। की = क्या। से = वह। ५ पेखलौं = (मैंने) देखा। ६-जीवइ = जीयेगी। करपरस = हाथ का स्पर्श। ७-केओ = कोई। दिठि = नजर लगना। ८-पुज = पूजता है। जोतिष = ज्योतिषि। आनि = ले आकर, बुलाकर। ९-धातु = नाड़ी। १०-विरह-विखिन = विरह विक्षीण, विरह से क्षीण हुई। लखए न पारि = लख नहीं सकता।

(७५)

अविरल नयन गरए जल-धार
नव-जल बिंदु सहए के पार ॥२॥
कि कहब सजनी तकर कहिनी।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥४॥
कुच-जुग ऊपर आनन हेरू।
चाँद राहु डरु चढ़ल सुमेरु ॥६॥
अनिल अनल बम मलयज बीख।
जेहु छल सीतल सेहु भेल तीख ॥८॥
चाँद सतावए सविता हु जीनि
नहि जीवन एकमत भेल तीनि ॥१०॥
किछु उपचार मान नहि आन।
ताहि बेआधि भेषज पँचबान ॥१२॥
तुअ दरसन बिनु तिलओ न जीव।
जइओ कलामति पीउख पीव ॥१४॥

१—अविरल = लगातार। गरए—गिरता है। २–नव-जल बिन्दु = नवीन जल के कण, आँसू। ३—तकर = उसका। कहिनी = कहानी। ४–जहिनी = जैसी। ५—आनन = मुख। ७—अनिल = वायु। अनल = आग। बम = वमन करता है, उगलता है। मलयज = चन्दन। बीख = विष। ८-छल = था। तीख = तीक्ष्ण। ९–सविताहु = सूर्य से भी। जीनि जैसे, जीतकर, बढ़कर। १०—एकमत भेल तीनि = तीनों (वायु, चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए। ११—उपचार = औषधादि। १२—भेषज = दवा। पँचबान = कामदेव। १३—तिलओ = तिलमात्र भी, एक क्षण भी।

(५६)

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुवति कत न लेख।
सब फूल मधु मधुर नहीं
फूलहु फूल विसेख ॥२॥
जे फुल भमर निन्दहु सुमर
बासि न बिसरए पार।
जाहि मधुकर उड़ि उड़ि पड़,
सेहे संसार क सार ॥४॥
सुन्दरि, अवहु वचन सुन।
सबे परिहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पुन ॥६॥

जीव=जीयेगो। १४—पीयूख=पीयूष=अमृत

१, २—तरुअर=तरुवर, वृक्षश्रेष्ठ। कत=कितना। न लेख=संख्या नहीं, असंख्य। मधु=पुष्परस। मधुर=मीठा। लाखों पेड़ हैं, करोड़ो लताएँ हैं, (यों ही) कितनी युवतियाँ हैं (जिनकी) गिनती नहीं। किन्तु सभी फूलों का रस मीठा नहीं होता—फूलों में भी कोई विशेष फूल होते हैं। ३—जे=जिन। भमर=भौंरा। निन्दहु=नींद में भी। सुमर=स्मरण करता है। बासि=गंध। न बिसरए पार=नहीं विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता ४—मधुकर=भौंरा। पर=पड़ना, बैठना। से हे=वही। जिसपर भौंरा उड़ उड़कर बैठे वही (फूल) संसार का सार है—संसार में खिलना उसी का सार्थक है।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहु हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव।८।
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि बिनु सुन कोर
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर।१०।
राहि राही जाहि मुँह सुनि
ततहि अप्पए कान।
सिरि सिवसिंघ इ रस जानए
कवि विद्यापति भान।१२।

५—सुन = सुनो। ६—अवे = अबको। परिहरि = छोड़कर। इछ = इच्छा करता है। आप = अपना। सराहहि = सराहना करो। पुन = पुण्य। ७—तोहरे = तुम्हारा। सेजहु = शय्या पर भी। चाव = चाहना। ८-सपनहु = सपने में भी। पुन पुन कए = बारम्बार। लए उठए = ले उठते हैं। नाव = नाम। दए = देते हैं। पाछु = पीछे। निहारए = देखते हैं। सुन = शून्य, खाली। कोर = गोद। १०—अकथ = न कहने योग्य। आपु = अपनी। अवथा = अवस्था। नोर = आँसू। ११—राहि = राधा। अप्पए = अर्पण करते हैं। १२—भान = कहते हैं

"A poet is a painter of soul."

(५७)

आसायें मन्दिर निसि गमाबए
सुख न सूत सँयान ।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि भान ॥२॥
मालति ? सफल जीवन तोर ।
तोर विरहे भुअन भम्मए
भेल मधुकर भोर ॥४॥
जातकि केतकि कत न अछए
सबहि रस समान ।
सपनहु नहि ताहि निहारए
मधू कि करत पान॥६॥
बन उपबन कुंज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप ।

१—आसायें=आशा में । गमावए=बिताता है । सूत=सोता है । सँयान=शयन पर, बिछावन । २-जखन=जब । जतए=जहाँ । जाहि=जिसे । निहारए=देखता है । जब जहाँ जिसे देखता है, उसे उसे ही तुम्हें भान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है ।४—भुअन=भुवन, संसार । भम्मए=भ्रमण करते । मधुकर=भौंरा । भोर=विभोर, व्याकुल या प्रातःकाल । ५—जातकि=पारिजात । कत=कितना । अछए=है । ६—स्वप्न में भी उन्हें देखता तक नहीं, फिर उनका मधु क्यों पान करने चला । ७—सबहि=सभी स्थानों में । निरूप=निरूपण करता है ।

तोहि बिनु पुनु पुनु मुरुछाए
अइसन प्रेम सरूप ।८॥
साहर नवइ सउरभ न सहइ
गुजरि गीत न गाव ।
चेतन पापु चिन्ताए आकुल
हरख सबे सोहाव ॥१०॥
जकर हिरदय जतहि रतल
से धसि ततही जाए ।
जइओ जतने बाँधि निरोबिअ
निमन नीर थिराए ॥१२॥
ई रस राय शिवसिंघ जानए
कवि विद्यापति भान ।
रानि लखिमा देइ वल्लभ
सकल गुननिधान ॥१४॥

८--पुनु पुनु =पुनः पुनः बारंबार । मुरुछाए=मूर्छित होना है । अइसन=इस प्रकार का । ९--साहर=सहकार, आम नवइ=नया, नव कुसुमित फूल । सउरभ=सौरभ सुगंध । गुजरि=गुंजार करके । गाव=गाता हूं । १०--चेतन=चैतन्य, जीव । पापु=पापी चिन्ताए=चिन्ता से । हरख सबे सोहाव=आनन्द में ही सब कुछ सुहाता है । ११--जकर=जिसका । ततहि--वहीं । रतल=अनुरक्त हुआ । से=वह- । धसि=घुसकर । ततहि=वहीं ही । १२--जइओ=यद्यपि । निरोबिअ=रोक रखिये । निमन=नीची जगह । नीर=पानी । थिराए=स्थिर होता है ।

नोक-झोंक

(५८)

कर धरू करु म हे, पारे
देय में अपरुब हारे, कन्हैया ॥ २॥
सखि सब तेजि चलि गेली ।
न जानू कोन पथ भेली, कन्हैया ॥ ॥
हम न जाएब तुअ पासे ।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥३॥
विद्यापति एहो भाने ।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया । ८ ।

१—कर=हाथ । धर=धरकर । करु=करो । पारे=उस पार २—देब=दूंगी । मे=मैं । हारे=माला । ३-तेजि=छोड़कर । चलि गेली=चली गई । ४-न जानू=न मालूम । कोन पथ भेली=किस रास्ते गई ? ५—जाएब=जाउंगी । तुअ=तेरे । पासे=निकट । ६—औघट घाटे=जिस घाट से कोई आता जाता न हो । ७ एहो=यह । भाने=कहते हैं ८—गूजरि=ग्वाला, गोपी ।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है । जहाँ एक ओर कहती है-'हम न जाएब तुअ पासे' तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है-'जाएब औघट घाटे'-अर्थात् जा रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही अर्थात् चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें । यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बात का भाव विद्यमान है । रसिक पाठक गौर करें ।

Poetry has something divine in it.—*Bacon.*

(५६)

कुंज-भवन सयँ निकसलि रे,
रोकल गिरिधारी।
एकहि नगर बस माधव हे
जनि कर बटमारी ॥२॥
छाड़ु कन्हैया मोर आँचर रे
फाटत नव-सारी।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी ॥४॥
संग क सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी।
दामिनि आए तुलाएल हे
एक राति अँधारी ॥६॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी।
हरि क संग किछु डर नहि हे
तोहे परम गमारी ॥८॥

१—सयँ=से । निकसलि=निकली। रोकल=रोकदिया ।२—बस=रहते हो । जनि=मत । बटमारी=डकैती, राहजनी ३—नव-सारी=नवीन साड़ी । उघारी=नग्न । ५—संग क=साथ की। अगुआइलि=आगे गई । एकसरि=अकेली । ६—दामिनि आए तुलाएल=बिजली भी चमकने लगी—मेघ छा गया । अंधारी=अंधेरी, कृष्ण-पक्ष की । ८-हरि क=श्रीकृष्ण के। गमारी =गँवारी, बेवकूफ ।

(६०)

तुम गुन गौरव सील सोभाव।
सुनि कए चढ़लिहुँ तोहरि नाव ॥२॥
हठ न करिअ कान्हु कर मोहि पार।
सब तहँ बड़ थिक पर-उपकार ॥४॥
आइलि सखि सब साथ हमार।
से सब भेलि निकहि विधि पार॥६॥
हमरा भेल कान्हु तोहरोअ आस।
जे अँगिरिअ ता न होइअ उदास ॥८॥
भल मन्द जानि करिअ परिनाम।
जस अपजस दुइ रहत ए ठाम ॥१०॥
हम अबला कत कहब अनेक।
आइति पड़ले बुझिअ विवेक ॥१२॥
ताहँ पर नागर हम पर नारि।
काँप हृदय तुअ प्रकृति विचारि ॥१४॥
भनइ विद्यापति गावे।
राज शिवसिंघ रुपनरायन इ रस सकल से पावे ॥१६॥

२—सुनिकए=सुनकर। ४—सब तहँ=सबसे। थिक=है। ६—भेलि=हुई। निकहि विधि=अच्छी तरह से। ८-जे=जो कुछ। अँगिरिअ=अंगीकार करना। त=उससे। होइअ उदास=उदासीन होना, मुकरना। ११—कत=कितना। १२—आइत पड़ले=आ पड़ने पर ही, अवसर आने पर ही। बुझिअ विवेक=ज्ञान की परख होती है। १३—पर नागर=अन्य पुरुष। १४—प्रकृति=स्वभाव।

(६१)

नाव डोलाय अहीरे
जिबइत न पाओब तीरे
खर नीरे लो।

खेवा न लेअए मोले
हँसि हँसि की वहु बोले
जिव डोले लो॥२॥

किए बिके ऐलिहु आपे
वेढ़लिहु मोहि बड़ सापे
मोरे पापे लो।

करितहूँ पर-उपहासे
परिलिहुँ तन्हि विधि-फांसे
नहि आवे लो॥४॥

न बूझसि अबुझ गोआरी
भजि रहु देव मुरारी
नहि गारी लो।

कवि विद्यापति भाने
नृप सिवसिंघ रस जाने
नव कान्हे लो॥६॥

१—जिबइत=जीती हुई। खर नीरे= तीक्ष्ण धारा। २—मोले= मूल्य में, रुपये पैसे में। की वहु=न जाने क्या ३—किए=क्या। ऐलिहु= मैं आई। वेढलिहु=आ घेरा। ४—तन्हि=उसी से। ५—गोआरि=ग्वालिन। गारी=गाली। ६—नव=नवीन, युवक।

सखी-शिक्षा

राधा को शिक्षा

(६२)

प्रथमहि अलक तिलक लेव साजि ।
चंचल लोचन काजर आँजि ॥ २ ॥

जाएव वसन आँग लेव गोए ।
दूरहि रहब तें अरथित होए ॥ ४ ॥

मोरि बोलब सखि रहब लजाए ।
कुटिल नयन देब मदन जगाए ॥ ६ ॥

झाँपब कुच दरसाओब आध ।
खन खन सुदृढ़ करब निवि-बाँध ॥ ८ ॥

मान करए किछु दरसब भाव ।
रस राखब तें पुनु पुनु आव ॥ १० ॥

हम कि सिखाओबि अओ रस-रंग ।
अपनहि गुरु भए कहत अनंग ॥१२॥

भनइ विद्यापति ई रस गाव ।
नागरि कामिनि भाव बुझाव ॥१४॥

१-अलक=केश । तिलक=टीका; वेंदी । लेब=लेना । २-आँजि=लगा देना । ३—वसन=कपड़ा । आँग—अंग । लेव गोए=छिपा लेना । ४—तें=इससे । अरथित=अर्थित, चाहक । ५-मुख मोड़कर बातें करना और बार-बार लज्जित होना । ५—कुटिल=टेढ़े । झाँपब=ढँकना । निबि-बंध नीवी का बन्धन । ९—मान करने के कुछ भाव प्रकट करना । १ —अओ=और । १२-अनंग=कामदेव । १४—नागरि-कामिनि=सुचतुरा स्त्री ।

(६३)

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख।
जिब जोखे नागर दे दस लाख ॥ २ ॥

केओ दे हास सुधा सम नीक।
जइसन परहोक तइसन बीक ॥ ४ ॥

सुनु सुन्दरि नव मदन-पसार।
जनि गोपह आओब बनिजार ॥ ६ ॥

रोस दरस रस राखब गोए।
धएले रतन अधिक मूल होए ॥ ८ ॥

भलहि न हृदय बुझाओब नाहीं।
आरति गाहक महँग बेसाइ ॥ १० ॥

भनइ विद्यापति सुनहु सयानि।
सुहित बचन राखब हिय आनि ॥ १२ ॥

१, २—जोखे=तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाक्ष करना। जिसके (मूल-रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—केओ=कोई। हास=हँसी। नीक=अच्छा। ४—परहोक=जोहनी। बीक=बिक्री होती है। ५—मदन-पसार=कामदेव की दूकान। ६—गोपह=छिपाओ। बनिजार=व्यापारी। ७ ८—रोष प्रकटकर प्रेम छिपाये रखना, क्योंकि धरे हुए रत्न की कीमत अधिक होती है। ९—भलहि=अच्छी तरह। १०=आरति=आर्त्त, आग्रहपूर्ण। महँग=महँगा। बेसाह=खरीद करता है। ११—सुहित=सुहृद, मित्र। हिय- हृदय।

(६४)

सुनु सुनु ए सखि वचन विसेस ।
आजु हम देब तोहे उपदेस ॥२॥
पहिलहि बैठबि सयनक-सीम ।
हेरइत पिया मुख मोड़बि गीम ॥४॥
परसइत दुहु कर वारबि पानि ।
मौन रहबि पहु करइत बानि ॥६॥
जब हम सोंपब करे कर आपि ।
साधस धरबि उलटि मोहे कोंपि ॥८॥
विद्यापति कह इह रस ठाठ ।
भए गुरु काम सिखाओब पाठ ॥१०॥

३—सयनक-सीम=शय्या की एक ओर। ४—गीम=ग्रीवा, गरदन। जब प्रीतम मुख देखने लगें तब अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना ५—परसइत=स्पर्श करते। कर=हाथ। बारबि=वारण करना, मना करना। पानि=हाथ। जब वे अंग-स्पर्श करने लगें तब दोनों हाथों से उनके हाथ को रोकना। ६—पहु=प्रभु प्रीतम। करइत बानि=बातचीत करते समय। ७=८—करे=हाथ में। कर=हाथ। आपि=अर्पण कर। साधस=भय। जब मैं उसके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौंपूँगी, तो तुम सभ्रम उलटकर काँपते हुए मुझे पकड़ना ९—रस-ठाठ=रस की रीति। १०—भए=होकर।

"रसात्मकं वाक्यं काव्यम्"—साहित्यदर्पण

(६५)

परिहर, ए सखी, तोहे परनाम,
हम नहि जाएब से पिआ-ठाम ॥२॥
वचन-चातुरि हम किछु नहि जान।
इंगित न बूझिए न जानिए मान ॥४॥
सहचरि मिली बनाबए भेस।
बाँधए न जानिए अपन केस ॥६॥
कभु नहि सुनिए सुरत क बात।
कइसे मिलब हम माधव साथ ॥८॥
से बर नागर रसिक सुजान।
हम अबला अति अलप गेआन ॥१०॥
बिद्यापति कह कि बोलब तोए।
आजुक मीलल समुचित होए ॥१२॥

१—ए सखि, (इन बातों को) छोड़ो, मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ। २—ठाम=स्थान। ४—इंगित=इशारा। न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ। ५—सहचरि=पखियां। बनाबए भेस=भेष बनाती हैं—मेरा शृंगार कर देती हैं। ६—अपन=अपना। ७—सुरत क बात=काम-क्रीडा की बातें। ८—कइसे=किस प्रकार। ९—नागर=चतुर। १०—अलप=अल्प थोड़ा। ११—तोए=तुम्हें। १२—आजुक=आज का। मिलल=मिलना।

शेर दर असल है वही हसरत'
सुनते ही दिल में जो उतर जाये।

(६६)

काहे डरसि सखि चलु हम संग।
माधव नहि परसब तुअ अंग ॥२॥
इह रजनी फुल-कानन माझ।
के एक फिरत साजि बहु साज ॥४॥
कुसुम क घोर धनुष धरि पानि।
मारत सर बाला जन-जानि ॥६॥
अतए चलह सखि भीतर कुंज।
जहाँ रह हरी महाबल पुंज ॥८॥
एत कहि आनल धनि हरि पास।
पूरल वल्लभ सुख-अभिलास ॥१०॥

१—काहे=किसलिये । डरसि=डरती है । २—परसब=स्पर्श करेंगे । ३, ६—रजनी=रात । फुल-कानन=पुष्प-वन । माझ=में । के=कौन । एक=अकेले । कुसुम क=फूलों का । धनुष=धनुष । पानि=हाथ । इस रात में, पुष्प वन में, यो नाना प्रकार शृङ्गार करके कौन अकेली घूमती है ? (अरी, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि) फूलों का कठोर धनुष हाथ में धरकर (कामदेव-रूपी तीरन्दाज) बाला स्त्रियों को खोज-खोजकर बाण मारता है ! ७—अतए=अतएव, इसलिये । ८—हरी=श्रीकृष्ण । महाबल पुंज=बड़े बलशाली । 'महाबलपुंज' कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के बाण की चोट से बचायेंगे । ९—एत=इतना । आनल=लाई । धनि=बाला । पास=निकट । १०—पूरल=पूरा हुआ । वल्लभ=विद्यापति का उपनाम ।

(६७)

परिहर मन किछु न कर तरास।
साधस नहिं कर चल पिय पास ॥२॥
दुर कर दुरमति कहइम तोय।
विनु दुख सूख कबहु नहिं होय ॥४॥
तिल आध दूख जनम भरि सूख।
इथे लागि धनि किए होइ विमूख ॥६॥
तिला एक मूनि रहु दु नयान।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥८॥
चल चल सुन्दरि करह सिगार।
विद्यापति कइ एहि से विचार ॥१०॥

१—परिहर=छोड़ो। तरास=त्रास, डर। २—साधस=भय। ३—दुर कर=दूर करो। दुरमति=दुर्बुद्धि। कहइम=मैं कहती हूँ। तोय=तुझे। तिल आध=(मैथिली प्रयोग) एक क्षण के लिये। ६—इथे=इसलिये। किए=क्यों। होइ=होती हो। विमूख=विमुख, विपक्ष। ७—मूनि रहु=मूँद रक्खो। दु=दो। नयान=आँखे ८—जइसे=जिस प्रकार। पान=पीना। करह=करो। १०-एहि से=यह हो।

A poet is not only a dreamer of dreams, his heart is the mirror of the world's emotions, his songs of gladness are the echoes of the world's laughter, his songs of sorrow reflect the tears of humanity.

—*Sarojini*

श्रीकृष्ण को शिक्षा

(६८)

हमे दरसइत कतहुँ वेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप।
सुरत सिंगारि आज धनि आओलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥
सुनु हे कान्हु कहिये अवधारि।
सकल काज हम बुझल बुझाएल
न बुझत अन्तर नारि ॥४॥
अभिनव काम नाम पुनु सुनइत
रोखत गुन दरसाइ।
अरि सम गंजए मन पुनु रंजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥
अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन, तरासे।
कह कवि-शेखर सहज विषय-रत
चिरगाधि केलि विलासे ॥८॥

१—दरसइत=दिखाकरके। कतहुँ=कितना ही। वेस करु=शृंगार करना। हेरइत=देखते। झाँप=ढाँप लेना। २—सुरत=काम-क्रीड़ा। ३—अवधारि=निश्चय करके। ४—बुझल-बुझाएल=समझा बुझा दिया है। अन्तर=हृदय। ५—अभिनव=नवीन। रोखत=रोष प्रकट करती है। गुन दरसाइ=गुण दिखाकर, कला प्रकट करके। चूँकि

(६९)

सुन सुन सुन्दर कन्हाई । तोहे सौंपल धनि राई ॥ २॥
कमलिनि कोमल कलेवर । तुहु से भूखल मधुकर ॥ ४॥
सहज करवि मधु पान । भूलइ जनि पँचवान ॥ ६ ॥
परबोधि पयोधर परसिह । कुंजर जनि सरोरुह ॥ ८ ॥
गनइत मोतिम हारा । छले परसब कुच भारा ॥ १०॥
न बुझए रति-रस-रंग । खन अनुमति खन भंग ॥ १२॥
सिरिस-कुसुम जिनि तनु । थोरि सहब फुल-धनु ॥ १४ ॥
विद्यापति कवि गाव । दूति क मिनति तुए पाव ॥ १६ ॥

बिल्कुल ही नवीना है, अत', कान का नाम सुनते ही कला प्रकट करती हुई क्रोधित हो उठती है। ६—गंजय=गजना करती है। रजए=प्रसन्न करती है। साइ=वह । ८ - हृदय से तो (तुम्हे) प्राणो से अधिक चाहती है, किन्तु बाहर उर से प्रकट नहीं करती ।

२—धनि = बाला । राइ = राधा । ३—कलेवर = शरीर । ४—भूखल = भूखा हुआ । मधुकर = भौंरा । ५—सहज = स्वभाविक ढग से धीरे-धीरे । करव=करना । जनि नहीं । पचबान = कामदेव । ७—परबोधि=प्रबोधकर, समझा बुझाकर । पयोधर=कुच, स्तन । परसिह=स्पर्श करना । ८—कुजर = हाथी । सरोरुह=कमल । जिस प्रकार हाथी कमल को रौंदता है, उस प्रकार नहीं । ९—गनइत = गिनते हुए १०—छले = छल से । १२—अनुमति = राजी होना । १३—सिरिस-कुसुम=एक कोमल फूल । जिनि = ऐसा । १४—फुलधनु=काम, का धनु । १६—मिनती = विनती । पाव=पैर ।

प्रथम समागम भुखल अनङ्ग।
धनि बल जानि करब रतिरङ्ग ॥२॥
हठ करब अति आरति पाए।
बड़हु भुखल नहि दुहु कर खाए ॥४॥
चेतन कान्हु तोहहि मति आथि।
के नहि जान महत नव हाथि ॥६॥
बुझ गुन गन कहि कर अनुबोधि।
पहिलहि सबहि हलति परबोधि ॥८॥
हठ नहि करब रती परिपाटि।
कोमल कामिनि बिघटति साटि ॥१०॥
जाने रभस सह तावे बिलास।
बिमति बुझिअ जयँ न आएत पास ॥१२॥
धसि परिहरि नहि धरबिए बहु।
उगिलल चाँद गिलए जनि राहु ॥१४॥
भनइ विद्यापति कोकिल-काँति।
कोमल सिरिस-सुमन अलि भाँति ॥१६॥

१—अनङ्ग=कामदेव। ३—आरति पाए=व्याकुलता में पाकर। ४—कर=हाथ से। ५—चेतन=चतुर। आथि=अस्ति, हो। ६—महत=महाउत। नव=नया (फँसाया हुआ)। ७—अनुबोधि=समझा बुझाकर। हलति=ढाई। ९—रती परिपाटि—रती-क्रीड़ा के ढंग। १०—बिघटति साटि=शान्ति घटेगी=पीड़ा होगी। ११ रभस=काम क्रीड़ा। सह=सहन करे। १२—बिमति=राजी नहीं। जँय=यदि।

[७१]

बुझब छ्यलपन आज।

राहि मनि रतने आनलि अति जतने

बंचि सब रमनि-समाज ॥२॥

सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमार धनि

आलिगब दृढ़ अनुरागे।

निर्भय करब केलि केइ नहिं बूझे गेलि

भौंर भरे मौंजरि न भांगे ॥४॥

पिरीतिक बोलि नियरे बइसाओब

नख हनि आनब कोल।

नहि नहि कर धनि कपट भुजब जनु

यदि कह कातर बोल ॥६॥

१३—एक बार छोड़कर पुनः धसकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह सत पकड़ना। १४—गिरथ=निगल जाना। १६—जिस प्रकार भौंरा बड़े कौशल से सिरिस के फूल का रस चूसता है, उसी प्रकार।

१—छ्यलपन=रसिकता। २—राहि=राधा। मनि रतने=रत्नों में मणि। आनलि=लाई। बंचि=छल करके। ३—जनि=ऐसा। आलिगब=आलिंगन करना, छाती लगाना। ४—निर्भय होकर केलि करना, यह किसे नहीं मालूम है कि भौंरे के शरीर के भार से कोमल मंजरी नहीं टूटती। ५—नियरे=निकट। नख हनि आनब कोले=नख से हनन कर=नख से कुचों को क्षत विक्षत कर—उसे गोदी में बैठा लेना। ६—नहि नहि कर धनि=वह बाला यदि नहीं नहीं करे। कातर बोल=दीन वचन।

मिलन

सुन्दरि चललिहु पहु-घर ना।
चहुदिश सखि सब कर धर ना ॥२॥
जाइतहु लागु परम डर ना।
जइसे ससि काँप राहु डर ना ॥४॥
जाइतहि हार टुटिए गेल ना।
भूखन बसन मलिन भेल ना ॥६॥
रोए रोए काजर दहाए देल ना।
अदकँहि सिंदुर भेटाए देल ना ॥८॥
भनइ विद्यापति गाओल ना।
दुख सहि सहि सुख पाओल ना ॥१०॥

१--चललिहु=चली। पहु=प्रभु। २--चहुदिस=चारो ओर। कर=हाथ। ३--जइतहु=जाने में। ४-ससि=चन्द्रमा। ७--रोए=रोकर। दहाए देल=दहा दिया। अदकँहि=आतंक से ही, डर से।

स कवि कथ्यते स्रष्टा रमते यत्र भारती।
रसभावगुणीभूतैरलंकारैर्गुणोदयैः॥

—वेंकटाचार्य।

(७३)

कौतुक चललि, भवन कए सजनि गे
सँग दस चौदिस नारी।
बिच बिच सोभित सुन्दरि सजनि गे
जेहि घर मिलत मुरारी ॥२॥
लए अभरन कए पोड़स सजनि गे
पहिर उतिम रँग चीर।
देखि सकल मन उपजल सजनि गे
मुनिहुक चित रहि थीर ॥४॥
नील वसन तन घेरलि सजनि गे
सिर लेल घोंघट सारि।
लग लग पहु के चलइत सजनि गे
सकुचल अंकम नारि ॥६॥

१—कौतुक=कुतूहल युक्त होकर। चौदिस=चारो ओर। २—बिच बिच=मध्य भाग में। ३—अभरन=आभरण, गहने। कए—षोड़स=सोलह शृंगार करके। उतिम रग=अच्छे रग को। चो=साड़ी। ४-उपजल=(काम) उत्पन्न हुआ। मुनिहुक=ऋषि का भी। थी=स्थिर। ५—नील वसन=नील रग कपड़ा। तन घेरलि=शरीर को लपेटे हुई। घोंघट=घूंघट। सारि लेल=सँभार लिया। ६-लग=निकट। पहु=प्रीतम। सकुचल=सकुचा गया। अकम=हृदय। प्रीतम के निकट जाने में बाला का हृदय सकुच गया।

सखि सब देल भवन कए सजनि गे
घुरि आइलि सभ नारि।
कर धए लेल पहु लग कए सजनि गे
हेरए बसन उघारि ॥ ८ ॥
भए वर सनमुख बोलइ सजनि गे
करे लागल सबिलास।
नव रस रीति पिरीति भेल सजनि गे
दुहु मन परम हुलास ॥१०॥
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
ई थिक नव रस रीति।
बयस जुगल समुचित थिक सजनि गे
दुहु मन परम पिरीति ॥१२॥

७—देल भवन कए=भवन कए देल=घर में ला रक्खा। घुरि आइलि=पोट आईं। ८—कर धए=हाथ धरकर। पहु लग कए लेल—प्रीतम के निकट ले आये। हेरए=देखता है। बसन=वस्त्र। (अंचल)। उघारि=उघारकर—(अंचल) हटाकर। ९—भए=होकर। बर=प्रीतम। करे लागल=करने लगा। सबिलास=काम-क्रीड़ा। १०—नव=नवीन। हुलास=आनन्द। ११—ई=यह। थिक=है। १२—बयस=अवस्था। जुगुल=दोनों को। समुचित=योग्य।

"Poetry is the spontaneous 'over-flow of powerful feelings."

(७४)

अहे सखि अहे सखि लए जनि जाह।
हम अति बालिक आकुल नाह॥ २॥
गोट गोट सखि सब गेलि बहराय।
बजर किवाड़ पहु देलन्हि लगाय॥ ४॥
तेहि अवसर पहु जागल कन्त।
चीर सँभारलि जिउ भेल अन्त॥ ६॥
नहि नहि करए नयन ढर नोर।
काँच कमल भमरा झिकझोर॥ ८॥
जइसे डगमग नलिनि क नीर।
तइसे डगमग धनि क सरीर॥ १०॥
भन विद्यापति सुनु कविराज।
आगि जारि पुनि आगि क काज॥१२॥

१—लए जाह=ले जाओ। जनि=मत, नहीं। २—बालिक=बालिका। आकुल=घबराया हुआ। नाह=नाथ, प्रीतम। ३—गोट गोट=एक एक कर। गेलि=गई। बहराय=बाहर होना। ४—बजर=बज्र-तुल्य। पहु=प्रभु, प्रीतम। देलन्हि=दिया। ५—पहु=प्रीतम (यहां कामदेव से तात्पर्य है)। ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही' मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये। ७—नोर=आंसू। ८—कांच कमल=अधखिला कमल। भमरा=भौंरा। ९—डगमग=हिलता डुलता। नलनिक नीर=कमल (के पत्ते पर) का पानी॥१०—धनिक=धनि के, बाला के १२—आग जलाई जाती है तो भी तो फिर आग की आवश्यकता होती है।

कत अनुनय अनुगत अनुबोधि ।
पति-गृह सखिन्हि सुताओलि बोधि ॥२॥

विमुखि सुतलि धनि समुखि न होए ।
भागल दल बहुलावए कोए ।४॥

बालमु बेसनि बिलासिनी छोटि ।
मेल न मिलए देलहु हिम कोटि ॥६॥

बसन झपाए बदन धर गोए ।
बादर तर ससि बेकत न होए ॥८॥

भुज-जुग चाँप जीव जौ साँच ।
कुच कञ्चन कोरो फल काँच ॥१०॥

लग नहि सरए, करए कसि कोर ।
करे कर बारि करहि कर जोर ॥१२॥

एत दिन सैसव लाओल साठ ।
अब भए मदन पढ़ाओब पाठ ॥१४॥

गुरुजन परिजन डुअओ नेवार ।
मोहर मुदल अछि मदन-भंडार ॥१६।

भनइ विद्यापति इहो रस भान ।
राए सिवसिंघ लखिमा बिरमान ।१८॥

१—कत = कितना । अनुनय = विनती । अनुगत = खुशामद । अनुबोधि = बुझाना । २—सुताओलि = सुलाई । ३—बिमुखि = दूसरी तरफ मुँह करके । ४—बहुलावए = फेरना । कोए = कौन । ५—बेसनि — व्यसनी, कामी । विलासिनि = विलास करनेवाली (बाला) । ६—हिम = हेम =

(७६)

सखि परबोधि सयन-तल आनि।
पिय हिय हरषि धएल निज पानि ।।२।।
छुबइत बालि मलिन भइ गेलि।
विधु-कर मलिन कमलिनी भेलि।४।
नहि नहि कहइ नयन भर नोर।
सूति रहलि राहि सयनक ओर।।६।
आलिगए नीवि-बँध बिनु छोरि।
कर कुच परम बेढ़ भेल थोरि।८।
आचर लेइ वदन पर झाँप।
थिर नहि होअइ थर थर काँप।।१०।।
भनइ विद्यापति धीरज सार।
दिन दिन मदन क होय अधि ।८ ।१२।

सोना। ७—गोए = छिपाकर। ८—बेकत = व्यक्त प्रगट। ९–१० चोर = दबाकर साँच=संचय करना। कोरी = कोरा अछूता। सोने के समान कुचों को कच्चे और अछूते फल समझकर दोनो हाथों से दबाकर प्राणो के समान छिपाती है। ११—लग=निकट। सरए = आती है। कोर = कोर, गोदी। १२—करे कर बारि अपने हाथ से (नायक) के हाथ निवारण करती है। करइ करजोर = हाथ जोड़ती है, प्रार्थना करती है। सैसव = बचपन। साठ लाओल = सगत निभाई। नेबार = निवारण किया हुआ। मोहर=मुहर देकर।

१—आनि=लाई। २—धएल=रखा। पानि = हाथ। ३—बालि = बाला। ४—विधुकर = चन्द्रमा की किरणों मे। ५—

(७७)

प्रथमहि गेलि धनि प्रीतम पास ।
हृदय अधिक भेल लाज तरास ॥ २ ॥
ठाढ़ि भेलन्हि धनि आगो न डोले ।
हेम-मूरति सयँ मुखहु न बोले ॥ ४ ॥
कर दुहु धए पहु पास बइसाए ।
रुसल छलि धनि बदन मुख ए ॥ ६ ॥
मुख हेरि ताकए भमर झाँपि लेल ।
अकम भरि कँ कमलमुखि लेल । ८ ।
भनइ विद्यापति दह इ सुमति मति ।
रस बूझ हिन्दूपति हिन्दूपति ॥ १० ॥

नोर=आँसू । ६—सूति रहल=सो रहा । राहि=राधा । ओर=सीमा पर (एक ओर) । खोरि=खोलना । ८—सेह=वही ।

१—धनि=नायिका । ३—भेलन्हि=हुई । ५—हेम=सोना । सनि=समान । ।—पहु=प्रभु प्रीतम । बइसाए=बैठाता है । ६—रुसलि छलि=रूठी हुई थी । ७, ८—हेरि ताकए=भली भाँति (निरीक्षण करके) देखना । भमर=भौंरा [कृष्ण] अकम=गोद भरि कँ=भरकर, भौंरा (कृष्ण) उसका मुख भली भाँति-आँखें गड़ाकर-देखता था, अतः नायिका ने उसे ढाँप लिया । किन्तु ज्यों ही उसने अपना मुँह ढाँपा कि मौका पाकर, श्रीकृष्ण ने उसे गोद में ले लिया । ९-दह=दो । विद्यापति कहते हैं कि हे सुमति, अब यह (मति) अनुमति दो—कृष्ण की प्रार्थना स्वीकार करो । हिन्दूपति=राजा शिवसिंह ।

(७८)

जतने आएलि धनि सयन क सीम।
पाँगुर लिखि खिति नत रहु गीम॥ २॥
सखि हे, पिया पास बैठलि रहि।
कुटिल भौंह करि हेरइछि काहि॥ ४॥
नवि वर नारि पहिल पिया मेलि।
अनुनय करइत रात आध गेलि॥ ६॥
कर धरि बालमु बइसाओल कोर।
एक पए कह धनि नहि नहि बोल॥ ८॥
कोर करइत मोड़इ सब अंग।
अबोध न मानु, जनि बाल भुजंग॥ १०॥
भनइ विद्यापति नागरि रामा।
अन्तर दाहिन बाहर बामा॥ १२॥

१—सयन क-सीम शय्या की सीमा में, शय्या के निकट। २—पाँगुर=पदांगुलि, पैर की अंगुली। खिति=पृथ्वी। नत=नीचे किये। गीम=ग्रीवा, गरदन। ३ रहि=राधा। ४—हेरइछि=देखती है। ५—नवि=नवीना। नवीना सुन्दरी नायिका की प्रथम-प्रथम प्रीतम से भेंट हुई। ६—अनुनय=विनय। ७-कर धरि=हाथ धरकर। बइसाओल कोर=गोदी में बिठलाया। ८-बाला बस एक 'नहीं नहीं' का वचन कहती है—सदा नहीं-नहीं बोलती है। ९-गोदी में बिठलाते ही अपने अंगों को ऐंठती है--भावभंगी दिखलाती है। १०--जनि=मानों। बाल भुजंग=बच्चा साँप। १२—अन्तर=हृदय से। दाहिन=अनुकूल। बाहर=बाहर से ऊपर से। बामा=प्रतिकूल।

(७९)

अधर मँगइते अओँध कर माथ।
सहए न पार पयोधर हाथ॥ २॥

विघटल नीबी कर धर जाँति।
अंकुरल मदन, धरए कत भाँति॥ ४॥

कोमल कामिनि नागर नाह।
कओन परि होएत केलि निरबाह॥ ६॥

कुच-कोरक तब कर गहि लेल।
काँच बदरि अरुनिम रुचि भेल॥ ८॥

लावए चाहिअ नखर बिसेख।
भौंहनि आवए चाँद क रेख॥ १०॥

तसु मुख सौं लोभे रहु हेरि।
चाँद झपाव बसन कत बेरि॥ १२॥

१—अओँध कर=नीचे करती है। २—सहएँ न पार=सह नहीं सकती। पयोधर=कुच। ३—विघटल=खुली हुई। नीबी=लोंचा फुफनी। कर धर जाँति=हाथ से दबाकर रखती है। अंकुरल=अंकुरित हुआ, पैदा हुआ। भाँति=रूप, आकार। ४—नागर=चतुर। नाह=नाथ, प्रीतम। ६—कओन परि=किस प्रकार। ७—कुच कोरक=कुच की सीमा। ८—बदरि=बेर (छोटे-छोटे कुचों की उपमा)। अरुनिम रुचि लाल रंग की छटा। ९,१०—नखर=नख की रेखा। बिसेख=उत्तम, सुन्दर। (जब प्रीतम) कुच पर नख रेखा देना चाहता है, तब नायिका की भौंहों पर [चन्द्र की रेखा] टेढ़ापन आ जाता है। ११-तसु=उसका। १२—चाँद=चन्द्रमा (मुख)। बसन=कपड़ा (अंचल)।

(८०)

जखन लेल हरि कँचुअ अछोड़ि।
कत परजुगति कएल अंग मोड़ि॥ २॥
तखनुक कहिनी कहल न जाय।
लाजे सुमुखि धनि रहलि लजाय॥ ४॥
कर न मिझाए दूर जर दीप।
लाजे न मरए नारि कठजीव। ६॥
अंकम कठिन सहए के पार।
कोमल हृदय उखड़ि गेल हार॥ ८॥
भनइ विद्यापति तखनुक भान।
कओन कहल सखि होएत विहान॥ १०॥

१—जखन=जिस समय। कँचुअ=कंचुकी, चोली। अछोड़ि लेल=उतार लिया। २—कत=कितना। परजुगति=प्रयुक्ति, उपाय। ३—कहिनी=कहानी, कथा। ४—लाजे=लाजसे। ५—कर=हाथ। मिझाए=बुझता है। जर=जलता है। दीप=दीपक। दीपक [शय्या से] दूर पर जल रहा है, अतः वह नायिका के हाथ से नहीं बुझता। कवि-कुल गुरु कालिदास के मेघदूत में एक ऐसा ही पद्य है, जिसका अनुवाद यों है—"नीवी ग्रंथी शिथिल करके वस्त्र प्रेमी छुटावे। मुग्धा प्यारी अरुण-अधरा काम क्रीड़ा दिखावे॥ भोरी लज्जाविवश तब हो चूर्ण-मुष्टी चलावे। पै होती है विफल मणि का दीप कैसे बुझावे।" ६—लाजे=लाज से कठजीव=कठोर प्राण। ७—अंकम=आलिंगन। सहए के पार=कौन सह सकता है? उखड़ि गेल=उखड़ गया, निसान पड़ गया।

(८१)

ए हरि बले यदि परसयि मोय।
तिरि-वध-पातक लागए तोय॥ २॥
तुहु रस आगर नागर ढीठ।
हम न बूझिए रस तीत कि मीठ॥ ४॥
रस परसंग उठओ मभु काँप।
बान हरिनि जनि कएलन्हि भाँप॥ ६॥
असमय आस न पुरए काम।
भल जन न कर बिरस परिनाम॥ ८॥
विद्यापति कह बुझलहुँ साँच।
फलहु न मीठ होअए काँच॥ १०॥

तखनुक=उस समय का। १०—बिहान=प्रात काल।

१—बल=बलपूर्वक। परसयि=स्पर्श करना। मोय=मुझे। २—तिरि-वध-पातक=स्त्री के वध का पाप। तोय—तुझे। ३-आगर=अग्रणी, श्रेष्ठ। नागर=चतुर ४-तीत=तिक्त, कड़वा। कि=या। परसंग=चर्चा। ५—मभु=मे। ६—मानो बाण से बेधी जाकर हरिणी उछल उठती हो। ७—कुसमय में करने से न कोई आशा पूरी होती है, और न कोई काम पूरा होता है। ८—भलजन=अच्छे आदमी। न कर=नहीं करते। बिरस=रसहीन, बुरा। परिनाम=अंतिम फल। अच्छे आदमी [ऐसा काम] नहीं करते जिसका परिणाम बुरा हो। बुझलहुँ=मैं समझी। १०—कच्चा फल भी मीठा नहीं होता।

---

(८२)

रति सुविसारद तुहु राख मान।
बाढ़िते जौबन तोहे देब दान ॥ २ ॥
आवे से अलप रस न पूरब आस।
थोर सलिल तुअ न जाय पियास ॥ ४ ॥
अलप अलप रति यहि चाहि नीति।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ॥ ६ ॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि।
न दिह नख-रेख हरि रस जानि ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति कइसन रीति।
काँच दाड़िम प्रति ऐसन प्रीत ॥ १० ॥

१—रति सुविसारद=कामक्रीड़ा में परम चतुर। तुहु=तुम। मान=मर्यादा। २—आव=इस समय से=वह। अलप=थोड़ा पूरव=पुरेगा। ३—सलिल=पानी। तुअ=तेरी। न जाय=नहीं जायगी। ५—६—जिस प्रकार प्रतिपदा से चन्द्रमा थोड़ा-थोड़ा बढ़ता है, । उसी प्रकार रति भी थोड़ी-थोड़ी करके बढ़ानी चाहिये, यही नीति है। ७—थोरि=छोटा। पयोधर=कुच। पानि=हाथ। अभी कुच छोटे हैं, उनसे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे। ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत खकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो। ९—कइसन=किस प्रकार की। १०—दाड़िम=अनार [कुच की उपमा]। ऐसन=इस प्रकार।

——

जहाँ न जाय रवि, तहाँ जाय कवि।"

(८३)

निवि-बंधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ विचारि।
बड़ तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जौं हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
विहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए विलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजए निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति एहो रस जान।
नृप सिवसिंघ लखिमा-विरमान ॥ १४ ॥

१—निवि बंधन=फोंसे का बन्धन। किए=क्यों। २—एहो पए=इससे भी। ३—हेरने=देखने से। ४—बुझप=मैं समझ गई। ५—हेरह=देखो। ६—लहु लहु=धीरे-धीरे। पारब गारि=गाली दूंगी। ७—एकान्त में [चुपचाप] बिहार करो? [विहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार=ऐसा ढंग। १०—काम-क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन=पड़ोसी। तेजब निसास—[केलि-समय में] निःश्वास लेना। १२—रमहु=सभोग करो। पास=निकट। १४—बिरमान=पति।

(८४)

सुन सुन नागर निवि-बंध छोर।
गाँठिने नाहि सुरत-धन मोर ॥ २ ॥
सुरत क नाम सुनल हम आज।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ॥ ४ ॥
सुरत क खोज करब जहाँ पाब।
घर कि अछए नाहि सखिरे सुधाब ॥ ६ ॥
बेरि एक माधव सुन प्रभु बानि।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ॥ ८ ॥
विनति करए धनि माँगे परिहार।
नागरि-चातुरि भन कवि कंठहार ॥ १० ॥

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से, वर्णित है। कृष्ण राधा से 'सुरत, माँग रहे हैं-राधा से काम क्रीडा करने को कह रहे हैं--इसपर राधा कहती है--"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन छोडो इसकी गाँठ में 'सुरत, रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' [कौन है और] क्या काम करता है? हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी। सखियों से पूछूँगी [सखि रे सुधाब] कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव! एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूंगी तो खोज ढूँढ़कर तुम्हें ला दूँगी।" यों नायिका विनती करती और उन्हें मना कर रही है, कवि-कंठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता-पूर्ण) वर्णन करते हैं।

हरि-कर हरिणि-नयनि तन सौपलि
सखिगन गेलि आन ठाम
अवसर पाइ धनि कर धरि नागर
मिनति करए अनुपाम ॥ २ ॥
हरिनि-नयनि धनि रामा ।
कानुक सरस परस सम्भाषन
मेटल लाजक धामा ॥ ४ ॥
सुखद सेजोपरि नागरि नागर
बइसल ः नव रति-साधे
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर-थर काँपए राधे ॥ ६ ॥
मदन-सिंहासन करल अरोहन
मोहन रसिक सुजान ।
भय-गाढ तोड़ल अलप समाधल
राखल सकल समान ॥ ८ ॥
१६ रवि-हेरर गरुआ भूम पर
बरु जल थोर अहार ।
अइसन दुहु मन तनफइ पुन पुन
जानल अरिक बिकार ॥ १० ॥

४—सरस परस=रसमय स्पर्श, आलिंगन ५—सेजोपरि—शय्या के ऊपर । करल अरोहन=आरोहण किया, चढे । ८—अलप समाधल=थोड़े से सन्तुष्ट किया । समान=मान-सहित । ६—गरुअ=अधिक ।

(८६)

सुरत समापि सुतल वर नागर
पानि पयोधर आपी।
कनक सम्भु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥ २ ॥
सखि हे माधव, केलि विलासे
मालति रमि अलि ताहि अगोरसि
पुनु रति-रंग क आसे ॥ ४ ॥
बदन मेराए धएल मुख-मण्डल
कमल मिलल जनि चन्दा।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल
पीबि अमिय-मकरन्दा ॥ ६ ॥
भनइ अमीकर सुनह मधुरपति
राधा-चरित अपारे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सुकवि भनथि कण्ठहारे ॥ ८ ॥

१—सुरत=काम-क्रीडा। समाति=समाप्त कर। सुतल=सो गया। पानि=हाथ। पयोधर=कुच। आपी=अर्पित कर, रख। २—कनक-सम्भु=सोने का महादेव। सरोरुह=कमल। ४—अलि=भौंरा। अगोरसि=अगोरे रहता है। ५ मेराए=मिलाकर धएल=रखा। बदन""मंडल=कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख से सटाकर रखा। ६—दुअओ=दोनों। अरसाएल=अलसा गये। अमीकर=शिवसिंह के मन्त्री। सुकवि-कण्ठहार=विद्यापति।

---

(८७)

हे हरि हे हरि सुनिए स्रवन भरि
अब न विलास क वेरा।
गगन नखत छल से अवेकत भेल
कोकिल करइछ फेरा ॥ २ ॥
चकवा मोर सोर कए चुप भेल
उठिए मलिन भेल चंदा।
नगर क धेनु डगर कए संचर
कुमुदनि वस मकरंदा ॥ ४ ॥
मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अवसर भल नहि मंदा।
विद्यापति भन एहो न निक थिक
जग भरि करइछ निंदा ॥ ६ ॥

१—स्रवन भरि=कान भरकर, अच्छी तरह। विलास क वेरा=केलि का समय। २—गगन=आकाश। नखत=नक्षत्र, तारे। छल=थे। से=वह। अवेकत भेल=अव्यक्त हुए, छिप गये करइछ फेरा=फेरा कर रही है, इधर-उधर पुकार रही है। ३—सोर कए=शोरगुल करके। चुप भेल=चुप हो गये। ४—धेनु=गौ। डगर=राह। संचर=जा रही है। कुमुदिनि वस मकरंदा=कुमुदिनियों से मकरंद (पराग) का झरना (अब) बस (खतम) हो गया अर्थात् ये मुँद गई। मुख केर=मुख का। से हो=वह भी। ५—भल=भला, अच्छा। मन्दा=बुरा। निक=अच्छा, उचित। थिक=है।

---

(८८)

रयनि समापलि फुलल सरोज।
भमि भमि भमरी भमरा खोज ॥ २ ॥
दीप मंद रुचि अम्बर रात।
जुगुतहि जानलि भए गेल परात ॥ ४ ॥
अबहु तेजहु पहु मोहि न सोहाए।
पुनु दरसन होत मदन दोहाए ॥ ६ ॥
नागर राख नारि मान-रंग।
हठ कएले पहु हो रस-भंग ॥ ८ ॥
तत करिअए जत फाबए चोरि।
पर जन रस लए न रह अगोरि ॥ १० ॥

१—रयनि=रात। समापलि=बीत गई। सरोज=कमल। २—भ्रमरी घूम-घूमकर भ्रमर की खोज कर रही है—क्योंकि भ्रमरी को छोड़कर भ्रमर पराग लोभ से रात-भर कमलिनी-कोष में कैद था और अब उसके निकलने का समय आ गया है। ३—दीप=दीपक। मंद-रुचि= क्षीण कान्ति, मलिन। अम्बर=आकाश। रात = लाल हुआ। ४—जुगुतहि=युक्ति से ही। जानलि=जान गई। ५—तेजहु= छोड़ो। पहु=प्रभु, प्रीतम। ६—मदन दोहाए=कामदेव की दुहाई। ७—नागर=चतुर। मान-रंग=आदर और प्रेम। ९—फाबए= सोहे। परजन=परपुरुष।

"The beauty of poetry is to paint the human life truly."

सखी-सम्भाषण

(८९)

आजु बिपरित धनि देखिअ तोय।
बुझए न पारिअ ससय मोय॥ २॥

तुअ मुख-मंडल पुनिम क चाँद।
का लागि भए गेल ऐसन छाँद॥ ४॥

नयन-जुगल भेल काजर बिथार।
अधर निरस कए कओन गमार॥ ६॥

पीनपयोधर नखरेख देल।
कनक-कुंभ जनि भगनहु भेल॥ ८॥

अंग बिलेपन कुकुम भार।
पीताम्बर धरु इथे कि बिचार॥ १०॥

सुजन रमनि तुहु कुलमति-धाद।
का सयँ भुजलि मरम क साध॥ १२॥

कामिनी कहिनी कह सम्बाद।
कह कबि-सेखर नह परमाद॥ १४॥

१—बिपरित=बदली हुई। ३ - पुनिम क=पूर्णिमा का। ४—का लागि=किस लिये। ऐसन छाद=इस आकार का अर्थात् ऐसा मलिन। ५—बिथार=बिस्तार, फैल जाना। ६—अधर=ओष्ठ। ७—पीन-पयोधर=पुष्ट कुच। ८—कनक-कुम्भ=सोने के घड़े (कुच)। भग-नहु=टूट जाना। कुंकुम भार=केशर से भरा हुआ अर्थात् रक्त वर्ण। १०—पीताम्बर धरु=पीताम्बर धारण किये हुई हो—शरीर पीला पड़ गया है। इथे=इसका। कि=क्या। १२ का सयँ=किसके संग। भुंजलि=भोग किया। मरम क साध=हृदय की इच्छा। १४ परमाद=प्रमाद, विकापत

(६०)

आजु देखलिसि कालि देखलिसि
आज कालि कत भेद।
सैसव वापुर सीमा छाड़ल
अऊवन बाँधल फेद ॥ २ ॥
सुन्दर कनककेआ मुति गोरी।
दिन दिन चाँद-कला सयँ बाढ़लि
जऊवन सोभा तोरी ॥ ४ ॥
बाल पयोधर गिरि क सहोदर
अनुपामिए अनुरागे।
कओन पुरुप कर परसए पाओल
जे तनु जितल परागे ॥ ६ ॥
मन्द हास वंकिम कए दरसए
चंगिम भौंह बिभंगे।
लाज देआकुजि सामु न हेरए
काओल नयन - तरंगे ॥ ८ ॥
बिद्यापति कविवर यह गावए
नव जौवन नव कन्ता।
सिवसिंघ राजा एह रस जानए
मधुमति देवि सुकन्ता ॥ १० ॥

२—वापुर=बेचारा। फेद (अस्पष्ट)। ३—कनककेआ = कनकोया, स्वर्ण-निर्मिता। मुति=मुत्ति। ५—बाल पयोधर=छोटे-छोटे कुच। गिरि क सहोदर=पहाड़ के भाई (पहाड़ के ऐसे)।

(६१)

सामरि हे झामरि तोर देह।
की कह के सयँ लाएलि नेह ॥२॥
नींद भरल अछ लोचन तोर।
कोमल वदन कमल-रुचि चोर ॥४॥
निरस धुसर करु अधर पँवार।
कोन कुबुधि लुटु मदन-भंडार ॥६॥
कोन कुमति कुच नख-खत देल।
हा-हा सम्भु भगन भए गेल ॥८॥
दमन-लता सम तनु सुकुमार
फूटल वलय टुटल गृम हार ॥१०॥
केस कुसुम तोर, सिर क सिंदूर।
अलक तिलक हे सेउ गेल दूर ॥१२॥
भनइ विद्यापति रति अवसान।
राजा शिवसिंह ई रस जान ॥१४॥

अनुपामिए=उपमा देते हैं। ६—जितल परागे=पराग को जित लिया—फीका पड़ गया। ७—चंगिम=सुन्दर। सामु=सामने।

१—सामरि=श्यामा, सुंदरी। झामरि=मलिन। २—की=क्या। के सयँ=किससे। लाएलि=लाई। ३-अछ=है। ४—कोमल मुख की कमल-सदृश आभा चोरी चली गई है—वह मंद पड़ गया है। ५—धुसर=धूसर, भूरा। पँवार=प्रवाल मूँगा। ७ खत=क्षत, घाव। दमन लता=द्रोण पुष्प की लता। १०—वलय=हाथ की चूड़ी। गृम=ग्रीवा, गला। ११-कुसुम=फूल। १२—अलक=अलकता, महावर। १४—अवसान=समाप्त।

(९२)

ए धनि ऐसन कहयि मोय।
आजु जे कैअन देखिए तोय ॥२॥
नयन बयन आनहि भांति।
कहइत कहिनि भूलसि पाँति ॥४॥
सुरँग अधर बिरँग भेलि।
का सयँ कामिनि कएल केलि ॥६।
बेकत भए गेल गुपुत काज।
अतए ककर करइ लाज ॥८॥
सघन जघन काँपए तोर।
मदन मथन कएल जोर ॥१०॥
गोर पयोधर रातुल गात।
नखर आँचर झाँपसि हात ॥१२॥
अमिय सागर दुहु से राहि।
मकुंद मातंग विहर ताहि ॥१४
कह कवि सेखर कि कर लाज।
कह न कहिनि सखिन समाज ॥१६॥

३—आनहि=अन्य ही। सुरँग=लाल। बिरंग=मलिन। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ८ अतए=अतएव, यहाँ। ककर=किसकी। ९—सघन=पुष्ट। जघन=जाँघ। १—१२—रातुल=लाल। गोरे=कुचों का रंग लाल हो गया है। नखर=नखों की रेखा १३ अमिअ=अमृत। राहि=राधा। १४—मुकुन्द-मातंग=कृष्ण रूपी हाथी।

(९१)

आजु देखिए सखि बड़ अनमनि सनि
बदन मलिन सन गोरा।
मन्द बचन तोहि कोन कहल अछि
से न कहिए किछु मोरा ॥ २॥
आजुक रयनि सखि कठिन बितल अछि
कान्हु रभस कर मंदा।
गुन-अवगुन पहु एकओ न बुझलनि
राहु गरासल चंदा ॥ ४ ॥
अधर सुखाएल केस अरुझाएल
घाम तिलक बहि गेला
बारि विलासिनि केलि न जानथि
भाल अरुन उड़ि गेला ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
ताहि करब किए बाधे।
जे किछु देल आँचर बाँधि लेल
सखि सभ कर उपहासे ॥ ८ ॥

१—अनमनि=अनमनी, उदासीन। सनि=समान। बदन=मुख। २—मद=बुरा। अछि=है। ३-रयनि=रात। रभस=कामक्रीडा। मंदा=बुरी तरह से। ४-पहु=प्रीतम। ५—अधर=ओष्ठ। घाम=पसीना। तिलक=टीका। ३- बारि=बालिका। भाल अरुन उड़ि गेला=मस्तक का सिंदूर-बिंदु नष्ट हो गया। ७—किए=कैसे। बाधे=बाधा देना, रोकना। ८—उपहासे=निंदा।

(१४)

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध ।
की कहब हमहु तकर परबोध ॥ २ ॥
अलप बयस हम कानु से तरुना ।
अतिहु लाज डर अतिहु करुना ॥ ४ ।
सोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ॥ ६ ॥
हठ भेल रस मोर हरल गेआन ।
निबि-बँध तोड़ल कखन के जान ॥ ८ ॥
देल आलिंगन भुज-जुग चापि ।
तखन हृदय मझु ऊठल काँपि ॥ १० ॥
नयन वारि दरसाओलि रोइ ।
तबहु कान्हु उपसम नहि होइ ॥ १२ ॥
अधर सुरस मझु कएलन्हि मन्द ।
राहु गरासि निबि तेजल चन्द ॥ १४ ॥
कुच-जुग देखन्हि नख-परहार ।
केहरि जनि गज-कुम्भ बिदार ॥१६॥
भनइ बिद्यापति रसवति नारि ।
तुहु बे चेतन लुबुध मुरारि ॥ १८ ।

२—तकर=उसका । ६—जामिनी=रात । जत=जितना ।
८—कखन=कब । ९—भुज जुग=दोनों हाथ । चापि=दबाकर ।
१०—तखन=उस समय । १२—उपसम=शान्त, ठंडा । १३—अधर
=ओष्ठ । १४—तेजल=छोड़ दिया । १५—नख-परहार=नखों को

(९५)

कि कइब हे सखि आजु क विचार।
से सुपुरुष मोहे कएल सिगार॥ २॥
हँसि हँसि पहु आलिगन देल।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल॥ ४॥
आँचर परसि पयोधर हेरु।
जनम पगु जनि भेटल सुमेरु॥ ६॥
जब निवि-बध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान॥ ८॥
रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि।
तोहर पुने जीअलि हम नारि॥ १०॥
कह कवि रंजन सहज मधु राई।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई॥ १२॥

नोट। १६—केहरि=सिंह। गज-कुम्भ=हाथी का मस्तक। बिदार=फाड़ना। १८—चेतन=चतुरा। लुबुध=लोभायमान।

२—कएल=किया। ३—पहु—प्रीतम। ४—मनमथ=कामदेव। कुसुमित=फूला हुआ। कामदेव रूपी अंकुर फूल उठा—काम का पूर्ण विकास हुआ। ५—आँचर=अंचल। पयोधर=कुच। हेरु=देखना। ६—पगु=पगहीन। जनि=मानों। ७—खसाओल=(खोलकर) गिरा दिया। कान=कृष्ण। ९—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़े कठोर-हृदय हैं। १०—पुने=पुण्य से। जीअलि=जीती बची। ११—सहज मधु राई=राई (राधा) स्वभावतः ही मधु (मधुर) हैं। १२—गेल चतुराई=चतुरता खतम हो गई।

(१६)

दृढ परिरम्भन पीड़लि मदने।
उबरि अएलहुँ सखि पुरब पुने ॥ २ ॥
टुटि छिड़िआएल मोतिम हार।
सिदुर लोटाएल सुरंग पँवार ॥ ४ ॥
सुन्दर कुच जुग नख-खत भरी।
जनि गज-कुंभ बिदारल हरी ॥ ६ ॥
अधर दसन देखि जिउ मोरा काँपे।
चाँद-मंडल जनि राहु क झाँपे ॥ ८ ॥
समुद ऐसन निसि न पारिए ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर ॥ १० ॥
मोयँ न जाएब सखि तन्हि पिया-ठाम।
बरु जिव मारि नड़ावथि काम ॥ १२ ॥
भनई विद्यापति तेज भय लाज।
आग जारिये पुनु आगि क काज ॥ १४ ॥

१—परिरम्भन = गाढ आलिंगन। पीडलि = पीडित हुई। मदने = काम-द्वारा। २—उबरि अयलहुं = मैं बच आई। पुने = पुण्य से। ३—छिड़िआएल = बिखर पड़ा। ४—सुरंग = लाल। पँवार = प्रबाल, मूंगा। ५—कुच = स्तन। जुग = दो। नख-खत = नखों द्वारा किये गये घाव। ६—गज कुम्भ = हाथी का मस्तक। बिदारल = विदीर्ण किया चीर-फाड़ डाला। हरि = सिंह। ७—ओष्ठ पर दाँतों का आक्रमण करना देख मेरे प्राण काँप उठे। राहु क झाँपे = राहु का आक्रमण। ९—समुद्र, सागर। ऐसन = समान। ऊर = ओर, सीमा।

(९७)

कि कहब हे सखि रातु क बात।
मानिक पड़ल कुबानिक हात ॥२॥
काँच कंचन न जानए मूल।
गुंजा रतन करए समतूल ॥४॥
जे किछु कभु नहि कला रस जान।
नीर खीर दुहु करए समान ॥६॥
तन्हि सौं कहाँ पिरित रसाल।
बानर-कंठ कि मोतिम माल ॥८॥
भनइ विद्यापति इह रस जान।
बानर-मुँह की सोभए पान ॥१०॥

१०—उगत=उगेगा। सूर=सूर्य। ११—मोंय=में। तन्हि=उस। १२—बरु=भले हो। नड़ावथी=छोड़ दे। १४—आग जलाती है, किन्तु पुनः आग ही की जरूरत होती है।

१ कि कहब=क्या कहूँ। रातु क=रात की। २—मानिक=माणिक्य, मणि। पड़ब=पड़ गया। कुबानिक=अपटु व्यापारी। हात=हाथ। ३—कंचन=सोना। मूल=मूल्य, कीमत। ४—गुंजा=एक प्रकार का लाल फल जो जंगल में विशेष होता है, वनवासी इसकी माला बनाते है, घुंघची। रतन=रत्न, मणि। समतूल=समान। ६—नीर=पानी। खीर=क्षीर=दूध। ७— तन्हि सौं=उनसे। रसाल=रसमय। ८ बानर=बंदर। कि=क्या। ९—इह=यह। १०—की=क्या। सोभए=शोभता है।

(६८)

पहिलुक परिचय पेम क संचय
रजनी आध समाजे।
सकल कला-रस सँभरि न भेले
बैरिन भेलि मोरि लाजे ॥२॥
साए साए अनुसए रहलि बहुते।
तन्हिहि सुबन्धु के कहिए पठाइअ
जौं भमरा होअ दूते ॥४॥
खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच भंगे।
एकलि नारि हम कत अनुरजब
एकहि बेरि सब संगे ॥६॥

१—पहिलुक=प्रथम बार का। परिचय=जान-पहचान। पेम क=प्रेम का। रजनी=रात। पहली बार का परिचय था—प्रथम-प्रथम भेंट हुई थी, अतः प्रेमके संचय में ही—प्रेमोत्पत्ति में ही—आधी रात बीत गई। २—सभरि न भेले=सँभलकर न हुआ—अच्छी तरह नहीं हुआ। भेलि=हुई। ३—साए=सखि। अनुसए=अनुताप, पछतावा। रहलि=रह गया। ४—तन्हिहि=उनके। कहिए पठाइअ=खोल पठाना कहला भेजना। जौं=जिस प्रकार। भमरा=भ्रमर=भौंरा। ५—खनहि=क्षण। चीर=साड़ी। चिकुर=केश। गह=पकड़ना। कुच=भंगे=कुच को विदीर्ण करना। ६—एकलि=अकेली। कत=कितना। अनुरजब—अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी। बेरि=बार।

तखन बिनय जत से सब कहब कत
कहए चाहल कर ओली।
नव रस-रग भंग भए गेल सखि
ओर धरि भेल न बोली॥८॥
भनइ विद्यापति सुनु बरजौवति
पहु अभिमत अभिमाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ बिरमाने॥१०॥

७-तखन = उस समय। जत = जितना। से = वह। कहब= कहूँगी। कत = कितना। कहए चाहल = कहना चाहा। कर-ओली = हाथ जोड़कर। ८—नव = नवीन, नया। भग भए गेल = भग हो गया। ओर=अन्त। ओर धरि भेल न बोली = अन्त तक कह भी न सके—साफ-साफ बात भी नहीं कह सके। ७—८—इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनो हाथ जोडकर उस समय उसकी प्रार्थना करने लगे। यों, ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिये जोडे जाने के कारण रति रंग में भंग हो गया। फिर तो कृष्ण के मुख से बोली तक न निकली। इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे। ६—पहु= प्रभु, प्रीतम। अभिमत = युवितयुक्त। १०—विरमाने = विरमण, प्रीतम, पति।

कौतुक

(६६)

उठ उठ माधव कि सुतसि मंद।
गहन लाग देखु पुनिम क चंद॥२॥
हार-रोमावलि जमुना-गंग।
त्रिवलि-त्रिवेनी विप्र-अनंग॥४॥
सिंदुर-तिलक तरनि सम भास।
धूसर मुख-ससि नहिं परगास॥६॥
एहन समय पूजइ पँचबान।
होअ उगरास देह रतिदान॥८॥
पिक मधुकर पुर कहइत बोल।
अलपओ अवसर दान अतोल॥१०॥
विद्यापति कवि एहो रस भान।
राए सिवसिंघ सब रस क निधान॥१२॥

१—मंद=आलस्य। २—गहन=ग्रहण। ३, ४—रोमावलि=उदर के निकट के केशों की पंक्ति। त्रिवलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। अनंग=कामदेव। हार और रोमावली क्रमशः गंगा और यमुना हैं, त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है। ५—सिंदुर-तिलक=सिंदूर का टीका। तरनि=सूर्य। भास=प्रकाशित। ६—धूसर=धूमिल, प्रभाहीन। परगास=प्रकाश। ७—एहन=ऐसा। पँचबान=कामदेव। ८—होअ उगरास=उगरास होगा, ग्रहण छूटेगा। देह रतिदान=रति का दान दो। ९—पिक=कोयल। मधुकर=भौंरा। पुर कहइत बोल=गाँव में कहता फिरता है। १०—अलपओ=थोड़ा ही। अतोल=अनन्त।

(१८०)

त्रिवलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि
मनमथ पत्र पठाए।
जोवन-दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति दूत बढाऊ ॥२॥
माधव, अब, देखु साजिए बाला।
तसु सैसव तोहें जे संतावल
से सब आओत पाला ॥४॥
कुण्डल चक्र तिलक अङ्कुस कए
चँदन कवच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अरि बामा ॥६॥
सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
विद्यापति कवि भने।
राजा सिवसिंघ रुपनरायन
लखिमा देइ परमाने ॥८॥

१—त्रिवलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। तरंगिनी=नदी। त्रिवली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव-रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २—दलपति=सेनापति। समर लागि=युद्ध के लिये। ऋतुपति=वसंत। ४—तसु=उनको। तोहें=तुमने। संतापल=दुःख दिया। ५—कुंडल चक्र=कुंडल (कर्णफूल) चक्र है। तिलक-अंकुस=टीका ही अंकुश है। चंदन कवच=चंदन का लेप ही शरीर त्राण है। ६—कमान=धनुष। ७—खेत=युद्धभूमि।

(१०१)

अम्बर बदन झपावह गोरी।
राज सुनइ छिअ चाँद क चोरी ॥२॥
घर घर पहरि गेल अछि जोहि।
अबहि दूखन लागत तोहि ॥४॥
कतए नुकाएब चाँद क चोर।
जतहि नुकाएब ततहि उजोर ॥६॥
हास-सुधारस न कर उजोर।
बनिक-धनिक धन बोलब मोर ॥८॥
अधर क सीम दसन कर जोति।
सिंदूर क सीम बैसाओलि मोति ॥१०॥
भनइ विद्यापति होह निरसंक।
चाँदहु काँ थिक भेद कलंक ॥१२

१—अम्बर=वस्त्र। बदन=मुख। झपावह=ढाप लो। २—चाँद क=चन्द्रमा की। ३—पहरि=पहरा पहरुआ। गेल छल जोहि=ढूँढ़ गया है। ४—दूखन=दोष, कलंक। ५—कतए=कहाँ। नुकाएब=छिपेगा। ६—उजोर=प्रकाश। ७,१०—हास=हँसी। सुधारस=अमृत का रस। अधर क सीम=ओष्ठ के निकट। दसन=दाँत। बैसाओलि=बैठाया। हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओष्ठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर-बिन्दु मोती से चमक रहे हैं। ११—होइ=होओ। १२—थिक=है। चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है, क्योंकि उसमें कलंक है।

(१०२)

लोलुअ बदन-सिरी अछि धनि तोरि।
जनु लागिह तोहि चाँद क चोरि ॥२॥
दरसि दलह, जनु होह राहु।
चाँद भरम मुख गरसत राहु ॥४॥
धवल नयन तोर जनि तरुआर।
तीख तरल तेहि कटाख क धार ॥६॥
निरखि निहारि फास गुन जोलि।
बाँधि हलत तोहि खंजन बोलि ॥८॥
सागर-सार चोराओल चन्द।
ता लागि राहु करए बड़ दन्द ॥१०॥
भनइ विद्यापति होउ निसंक।
चाँदहु की किछु लागु कलंक ॥१२॥

लोलुअ=लालायित, चंचल। बदन-सिरी=बदन-श्री, मुख की शोभा। अछि=अस्ति, है। धनि=रमणी। २—जनु=नहीं। ३, ४—दरसि दलह=देखकर (झटपट) छूट जाओ। 'शृंगार तिलक' में यों ही लिखा है—"झटिति प्रविश गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण समय वेला वर्तते शीतरश्मेः। तव मुखमकलङ्कं वीक्ष्य नूनं स राहु। ग्रसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय॥" ५—धवल=उजला। जनि=जैसा। तरुआर=तलवार। ६—तीख=तीक्ष्ण। कटाख क=कटाक्ष की। ७, ८—निरखि=तिरछे की ओर। फास गुन=गुण रूपी फाँस में। जोलि=जोड़कर, बाँधकर। हलत=ले जायगा। बोलि=बुलाकर। ९—सागर-सार=अमृत। १०—दन्द=द्वन्द्व। जोर=जुल्म।

(१०३)

साँझ क बेरि उगल नव ससधर
भरम विदित सबिनाहु ।
कुंडल चक्र तरास नुकाएल
दूर भेल हेरथि राहु ॥२॥
जनु बइसासि रे बदन हाथ लाई ।
तुअ मुख चंगेम अधिक चपल भेल
कति खन धरब नुकाई ॥४॥
रक्तोपल जनि कमल बइसाओल
नील नलिनि दल तहु ।
तिलक कुसुम तहु माझ देखि कहु
भमर आवथि लहु लहु ॥६॥
पानी-पलव-गत अधर बिम्ब-रत
दसन दाड़िम बिज तोरे ।
कीर दूर भेल पास न आएब
भौंह धनुहि के भोरे ॥८॥

१—संध्या के समय नवीन चन्द्र का उदय हुआ, जिससे सूर्य को भी भ्रम हुआ—मतलब यह है, सूर्यास्त हो रहा था, उसी समय नायिका घर से निकली । सूर्य अभी पूर्णतः अस्त नहीं हुए थे, उन्हें आश्चर्य हुआ कि मेरे अस्त होने के पहले ही यह कौन सा नवीन चन्द्रमा उदित हुआ । २ कुंडल-चक्र=कुंडल (कर्णफूल) रूपी चक्र । नुकाएल=छिपा हुआ । ३-बदन हाथ लाई=मुख हाथ पर रखकर । ४—चंगिम=सुन्दर । कति खन=कबतक ।

वइ कौसलि तुअ राधे।
किनल कन्हाई लोचन आधे ॥३॥
ऋतुपति हटवए नहि परमादी।
मनमथ मधथ उचित मूलवादी ॥४॥
द्विज पिक लेखक मसि मकरंदा।
काँप भमर-पद साखी चंदा ॥६॥
वहि रति रग लिखापन माने।
श्री शिवसिंघ सरस-कवि भाने ॥८॥

५—रक्तोपल=लाल कमल (हाथ)। कमल= (मुख)। नील नलिनी=नील कमल (आँखें)। तहु=वहाँ भी। ६—लहु लहु=धीरे धीरे। ७—पानि-पलव गत=हाथ पल्लव के समान है। अधर=ओष्ठ। बिम्ब रत=बिम्ब फल के समान। दाड़िम बिज=अनार के दाने। ८—कीर=सुग्गा। भोरे=भ्रम में।

१—कौसलि=सुचतुरा। किनल=क्रय किया, खरीदा। ३—लोचन आधे=आधी आँख से, एक कटाक्ष से। ऋतुपति=वसन्त। हटवए=व्यापारी। नहि परमादी=प्रमादी नहीं, बुद्धिमान्। ४—मनमथ=कामदेव। मधथ=मध्यस्थ, दलाल। मूल=मूल्य। वादी=कहनेवाला। ५—द्विज-पिक लेखक=कोयल-रूपी ब्राम्हण लेखक है। मसि=रोशनाई। मकरन्दा=पराग। ६—काँप=काँडे का कमल। भमर-पद=भौंरे का पैर। साखी=साक्षी, गवाह। वहि=बही, हिसाब की पुस्तक। रति-रग=काम विलास। लिखापन माने=मान लिखा गया। इस पद्य का

(१०५)

कंचन गढ़ल हृदय-इथिसार।
ते थिर थम्भ पयोधर भार॥२॥
लाल-सिङ्कर धर दृढ़ कए गोए।
आनक वचन हलह जनु कोय॥४॥
दूर कर अगे सखि चिन्ता आन।
जमोवन-हाथि करिय अवधान॥६॥
मनसिज-मदजल जम्यों उमताए।
धरिहसि, पिअतम-आंकुस लाए॥८॥
जावे न सुमन तावे अगोर।
मुसइत मनिहसि मानस-चोर॥१०॥
भन विद्यापति सुनु मतिमान।
हाथी महत नव केनहि जान॥१२॥

संस्कृतानुवाद स्वयं विद्यापति ने यों किया है—"रत्नाकरसुता भार्या यस्य कृष्णस्य राधिके। लोचनार्द्धेन स क्रीतस्त्वया ते कौशलम्महत्॥ हट्टाधिशो वसन्तस्तेऽप्रमादो पिपश्यथ्। योग्यमूल्यार्थवादो च मध्यस्थो मन्मथोऽभवत्। अमरस्व पव कर्पो लेखकः कोकिलो द्विज.। प्रभूत् कृष्ण-रूपे राधे शशीपात्रं मली मधु॥ वहिर्नति रतिक्रीड़ा मानो वेदन लेखक कृष्णस्य शिर्षचिह्नेन वाणी विद्यापतेः कवेः।"

१—कंचन = सोना। हथीसार = हस्तीसाला। २—थिर = स्थिर थम्भ = स्तम्भ खम्भा। पयोधर = कुच। ३—सिकर = शृंखला, जंजीर। = स्तम्भ खम्भा। पयोधर = कुच। ३—सिकर = शृंखला, जंजीर। गोए = छिपाकर। ४—आनक = दूसरे के। हलह जनु कोए = कभी मत खोलदो ६—जवानी को ही हाथी समझ लो।

(१०६)

फउड़ि पठाओले पाव नहि घोर।
घीव ढधार माँग मति भोर॥२॥

वास न पावए माँग उपाधि।
लोभ क राशि पुरुष थीक व्याधि॥४॥

कि कहब आज कि कौतुक भेल।
अपवहि कान्हक गौरव गेल॥६॥

आएल बइसल पाय पोआर।
सेज क कहिनो पूछए विचार॥८॥

ओछाओन खँड़तरि पलिया चाड़।
आओर कहब कत अछिरिनि-लाड॥१०॥

भनइ विद्यापति एहु गुरमत।
सिरि सिवसिंघ लखिमा देइ कंत॥१२॥

७—मनसिज=कामदेव। मदजल=हाथी के मस्तक से चूनेवाला पानी। उमताए=पागल हो। प्रियतम-अंकुश=प्रीतम रूपी अंकुश। ६—सुमत=मत में आ जाय १०—मुचइत=(मूच् धातु) खोलने से। मनिहवि=मना करना। १२—महत=मत, पागल।

१—फउड़ी=कौड़ी (यहाँ मूल्य)। पठाओले=भेजने पर भी। घोर=मट्ठा। २—घीव=घी। मतिभोर=मूर्ख। ३—वास=रहने की जगह। उपाधि=खाद्य-सामग्री। लोभ क राशि=लोभ का खजाना। थिक=है। ६—अपवहि=अस्थान पर, बुरी जगह। ७—पोआर=पुवाल, पुआल। ८—ओधावन=ओछाओन=बिछावन। खँड़तरि=जीर्ण शीर्ण चटाई। मलिया=पलंग।

अभिसार

(१०७)

धनि धनि चलु अभिसार।
सुभ दिन आजु राजपन मनमथ
पाओव कि रीति बिथार ॥२॥
गुरुजन नयन अंध करि आओत
बाधय तिमिर विसेख।
तुअ उर फुरत बाम कुच लोचन
बहु मंगल करि लेख ॥४॥
कुलवति धरम करम भय अब सब
गुरु-मंदिर चलु राखि।
प्रियतम सग रंग करु थिर दिन
फलत मनोरथ साखि ॥६॥
नीरद बिजुरि विजुरि सयँ नीरद
किंकिन गरजन जान।
हरखए बरखए फुल सत्र लाग़ी
सिखि-कुल दुहु गुन गान ॥८॥

१—अभिसार=गुप्त मिलन। २—राजपन मनमथ=काम का राज्य है। बिथार=विस्तार। ३—गुरुजन=बड़े लोग बांधय=बन्धु, मित्र। तिमिर=अन्धकार। ४—फुरत=फड़कना। उर=हृदय। बाम=बायें। लेख=समझो। ६—साखि=शाखी, वृक्ष। ७—नीरद=मेघ। सयँ=संग में। मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ)। ८—सिकुखिल=मोर।

(१०८)

कइ कह सुन्दरि न कर वेआज।
देखिअ आज अपुरुब काज॥२॥

मृगमद पङ्क करसि अगराग।
कोन नागर परिनत होअ भाग॥४॥

पुनु-पुनु उठसि पछिम दिसि हेरि।
कखन जारत दिन कत अछि बेरि॥६॥

नूपुर ऊपर दरसि कसि थीर।
हठ कए पहिरसि तम सम चीर॥८॥

उठसि विहँसि हँसि तेजिए सार।
तोर मन भाव कखन आँधिआर॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनु बर नारि।
धैरज धर मन मिलत मुरारि॥१२॥

१—वेआज=बहाना। २—मृगमद पङ्क=कस्तूरी का लेप (जो काली है)। ४—कोन=कौन। किस नायक का भाग्य परिणत हुआ=किसका भाग्योदय हुआ है। ५—हेरि=देखना। ६—कखन=कब। कत=कितना। अछि—अस्ति=है। बेरि=समय। ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो। ८—तम सम=अन्धकार के समान काला। ९—तेजिए सार=सार त्यागकर, अकारण ही। १०—तोर=तुम्हारे। भाव=अच्छा लगना है। आँधिआर=अन्धकार।

माधव, धनि आएलि कत भाँति।
प्रेम-हेम परखाओल कसौटी
भादव कुहु-तिथि राति ॥ २ ॥
गगन गरज घन तहि न गनल मन
कुलिस न कर मुख बंका।
तिमिर-अजन जलधार घोर जनि
तेँ उपजावति संका ॥ ४ ॥
भाग भुजग सिर कर अभिनय, कर-
झाँपल फनिमनि दीप।
जानि सगर घन से देई चुम्बन
तेँ तुअ मिलन समीप ॥ ६ ॥
नारि-रतन धनि नागर अनुमनि
रस गुन पहिरल हार।
गोविन्द-चरन मन कह कविरंजन
सफल भेल अभिसार ॥ ८ ॥

१—हेम=सोना। कसौटी भादव कुहु-तिथि राति=भादों की अमावस्या की रात की कसौटी पर। ३—गगन=आकाश। कुलिस=वज्र, ठनका। मुख बंका=मुँह टेढ़ा करना, विमुख करना। ४—तिमिर-अजन=अन्धकार का अंजन सा। जनि=नहीं। ५—भागते हुए सर्प के सिर पर मानों नृत्य करती है और सर्प के मणि को हाथ से ढाँप लेती है। ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में भी है—
दिशि रचति चुम्बति जलधर पटलम्, हरिरुपगत इति तिमिर मन-

(११८)

चन्दा जनि उग आजुक राति।
पिआ के लिखिअ पठाओब पाँति॥ २॥
साओन सयँ हम करब पिरीत।
जत अभिमत अभिसार क रीत॥ ४॥
अथवा राहु बुझाएब हँसी।
पिबि जनि उगिलह सीतल ससी॥ ६॥
कोटि रतन जलधर तोहें लेह।
आजुक रयनि घन तम कए देह॥ ८॥
भनइ विद्यापति सुभ अभिसार।
भल जन करथि पर क उपकार॥ १०॥

रूपम्॥ १—धनि=बाला (राधे)। नागर=नायक (कृष्ण)। ८—कवि रंजन=विद्यापति का उपनाम।

१—जनि=नहीं। उग=उदय हो। पठाओब=पठाऊँगी, भेजूँगी। पाँति=पत्र। ३—साओन सयँ=श्रावण मास से। ४—अभिमत=मनोनीत। जो अभिसार करने की निश्चत रीति है—निश्चत काल है। ६—पिबि पीकर। उगिलह=उगल दो। ससी=चन्द्रमा। ७—जलधर=मेघ। लेह=लो। ८—रयनि=रजनी, रात। घन=घना, निबिड। तम=अंधकार। देह=दो। १०—करथि=करते हैं। पर क=दूसरे का।

Poetry is an emotion realized in tranquility.
—Wordsworth

(१११)

आजु मोयँ जाएब हरि-समागम
कत मनोरथ भेल।
घर गुरुजन निंद निरूपइत
चन्द उदय देल ॥२॥
चन्दा भलि नहि तुअ रीति।
एहि मति तोहें कलंक लागल
किछू न गुनइ भीति ॥४॥
जगत नागरि मुख जितल जब
गगन गेला हारि।
तइओ राहु गरास पड़ला
दैव नीक कि गारि ॥६॥
एक मास दिहि तोहि सिरिजए
दए सकलओ बल।
दोसर दिन पुनु पुर न रहसी
एही पाप क फल ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन तोयँ जुवती
न कर चाँद क साति।
दिना सोरह चाँद क आत
ताहि पर भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरूपइत=नींद का निरूपण करते, सोते न सोते। ४—भीति=डर। ५—संसार से जब स्त्रियों ने तुम्हारे मुख को जीत लिया—अपनी सुखों से तुम्हें पराजित किया—तब तुम हारकर

(११२)

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर बलगई ॥२॥
सजनी, आजु दुर्दिन भेल।
कंत हमर नितांत अगुसरि सँकेत-कुंजहि गेल ॥४॥
तरल जलधर बरिख झर झर, गरज घन घनघोर।
साम नागर एकले कइसन पथ हेरए मोर ॥६॥
सुमिरि मझु तनु अबश भेल जनि अथिर थर थर काँप।
ई मझु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहिं झाँप ॥८॥
तुरित चल अब किए विचारह, जीवन मझु अगुसार।
कवीशेखर वचन अभिसार, किय से बिघिन-बिथार ॥१०॥

आकाश में भाग गये। ७—पुर=पूर्ण। ९—साति=शास्ति, निन्दा। १०—आइति=आयत्त, सीमा। ताहि पर=उसके बाद।

१—गगन=आकाश। घन=घना, निविड़। दामिनि=बिजली। २—कुलिस-पातन=वज्र का गिरना, उसके की टनक। खरतर बल गई=अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि=अग्रसर होकर, आगे जाकर। संकेत=गुप्त मिलन-स्थान। ५—तरल=अस्थिर, चलायमान। जलधर=मेघ। बरिख=बरसता है। ६—साम=श्याम, श्रीकृष्ण। एकले=अकेले। ७—मझु=मेरा। अथिर=चंचल। ८—ई=यह। गुरुजन=बड़े लोग, श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहिं=अन्धकार। ९—तुरित=तुरत। किए=क्या। विचारतो=हो। मझु=मध्य, में। अगुसार=अग्रसर होओ, बढ़ो। १०—अभिसर=अभिसार करो। बिथार=बिस्तार।

(११३)

रयनि काजर वम भीम भुजंगम
कुलिस परए दुरवार।
गरज तरज मन रोस बरिस घन
संसअ पड़ अभिसार ॥ २ ॥
सजनी, वचन छड़इत मोहि लाज।
होएत से होओ वरु सब हम अगिकरु
साहस मन देल आज ॥ ४ ॥
अपन अहित लेख कहइत परतेख
हृदय न पारिअ ओर।
चाँद हरिन वह राहु कवल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१—रयनि=रात। वम=वमन करता है। रयनि काजर वम=रात अन्धकारपूर्ण है। भीम=विशाल, भयानक। भुजंगम=सर्प। कुलिस=वज्र, ठनका। दुरवार=जिससे बचना मुश्किल है। २—रोस=रोष, क्रोध। ४—होएत से होओ वरु=जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अगिकरु=अंगीकार करूंगी। ५—अहित=बुराई। लेख=समझना। परतेख=प्रत्यक्ष। थोर=थोड़ा, अल्प। ६—हरिन=चन्द्रमा में जो हरिण के आकार का काला धब्बा है। वह=धारण करता। कवल=कौर, ग्रास। सह=ताप, सहता है। पराभव=हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है, प्रेम में पराजय है ही नहीं—किसी विघ्न-बाधा से प्रेम का

चरन वेढ़ि ज फनि हित मानलि धनि
नेपुर न करए रोर।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेह क कत दुर ओर ॥८॥
ठामहि रहिअ घुमि प स चिन्हिअ भूमि
दिग मग उपजु संदेह।
हरि हरि सिव सिव तावे जाइअ जिउ
जावे न उपजु सिनेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह सुचेतनि
गमन न करह विलम्ब।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सकल कला अवलम्ब ॥११॥

नाश नहीं हो सकता। ७—वेढ़लि=लपटना घेरना। फनि=सर्प। रोर=शब्द झंकार। पैर में सर्प लिपट जाने पर बाला ने उसे अपना हित स (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे। ८—सरुप=सत्य। ओर=अन्त। [illegible]दरी, मैं तुमसे पूछती हूँ, सच-सच बताओ, प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है? ९—दिग=दिशा। घूम घूमकर एक ही स्थान पर चली आती हूँ। स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ती)। दिशा और राह के विषय में सन्देह है। मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है, जिससे मैं राह भूल गई हूँ। १०—तावे=तबतक। जावे=जबतक। ११—सुचेतनी=बुद्धिमती, सुचतुरा। गमन=जाने में।

(११४)

सखि हे, आज जाएब मोहि ।
घर गुरुजन डर न मानब
वचन चूकब नहि ॥ २ ॥
चानन आनि आनि अग लेपब ।
भूषन कए गजमोति ।
अंजन विहुन लोचन - जुगल
धरत धवल जोति ॥ ४ ॥
धवल वसन तनु झपाएब
गमन करब मदा ।
जइओ सगर गगन उगत
रहस सहस चदा ॥ ६ ॥
न हम काहुक डीठि निवारबि
न हमँ करब ओत ।
अधिक चोरी पर सयँ करिअ
एहे सिनेह क सोत ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनइ जुवती
साहस सफल काज ।
बूझ सिवसिंघ इ रस रसमय
सोरम देवि समाज ॥ १० ॥

३—चानन = चन्दन । आनि = लाकर । ४—विहुन = रहित । धवल-उजला ५—मदा = धीरे-धीरे । ६—सगर = समग्र = समूचे । गगन = आकाश । ७-निवारबि = बचा दूँगी । ओत = ओट । ८—सोन = स्रोत ।

(११५)

प्रथम जउवन नव गरुअ मनोभव
छोटि मधुमास रजनि।
जागे गुरुजन गेह रालए चाह नेह
समअ पड़ल सजनि॥ २॥
नलिनी दल निर चित न रहए थिर
तत घर तत हो बहार।
विहि मोर बड़ मंदा उगि जनु जाए चंदा
सुति उठि गगन निहार॥ ४॥
पथहु पथिक सका पय पय धए पका
कि करति ओ नव तरुनी
चलए चाह धसि पुनु पड़ खसि खसि
जाल क छेकलि हरिनी॥ ६॥
साए साए कओन वेदन तसु जाने।
निकुज बनहि हरि जाइति कओन परि
अनुखन हन पंचवाने॥ ८॥
बिद्यापति भन की करत गुरुजन
नीद निरूपन लागी।
नयन नीर भरि धीर झपावए
रयनि गमावए जागी॥ १०॥

१—मधुमास=चैत्र। २—नलिनी दल निर=कमल के पत्ते पर के पानी के समान। बहार=बाहर। ४—सुति=सोकर। ५ पय=पग। पका=के बड़ ६—जाल क छेकलि—जाल में घिरी हुई। ७ साए=सखी। ८—हन=मारना

अवहु राजपथ पुरजन जागि ।
चाँद-किरन नभमंडल जागि ॥ २ ॥
सहए न पारए नव नव नेह ।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि संदेह ॥ ४ ॥

कामिनि कएल कतहु परकार ।
पुरुष क वेस कएल अभिसार ॥ ६ ॥
धम्मिल लोल झोट कए बंध ।
पहिरल वसन आन करि छन्द ॥ ८ ॥

अम्बर कुच नहि सम्वर भेल ।
बाजन-जंत्र हृदय करि लेल ॥१०॥
अइसए मिललि धनि कुंज क माझ ।
हेरि न चीन्हइ नागर राज ॥१२॥

हेरइत माधव पड़लन्हि धंद ।
परसइत भाँगल हृदय क दंद ॥१४॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि ।
दूध-समुद्र जनि राज-मराालि ॥१६॥

४—सहए न पारए=सह नहीं सकती । नव=नया । ५—परकार=प्रकार, उपाय ७—धम्मिल=केश, वेणी । लोल=चपल । झोट=झोंटा, खोपा, जूड़ा । चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा । ८—आन छन्द करि=दूसरी तरह से । ९—अम्बर=कपड़ा । सम्वर=सँभलना । किन्तु कपड़े से ढके जाने पर भी कुच सँभल न सके—छिप न सके । १०—बाजन-जन्त्र=सितार । हृदय करि

(११७)

चरन नूपुर उपर सारी।
मुखर मेखल कर निवारी ॥ २ ॥
अम्बर सामर देह झपाई।
चलहु तिमिर पथ समाई ॥४॥
समुद कुसुम रभस रसी।
अवहि उगत कुगत ससी ॥६॥
आएल चाहिअ समुखि तोरा।
पिसुन-लोचन भम चकोरा ॥८॥
अलक तिलक न कर राधे।
अंग विलेपन करह बाधे ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि-तीर।
तहाँ चलि आओत गोकुल वीर। १२॥
तयँ अनुरागिनि ओ अनुरागी।
दूषन लागत भूषन लागी ॥१४॥
भनइ विद्यापति सरस कवि।
नृपति-कुल-सरोरुह रवि ॥१६॥

लेल = हृदय पर रख लिया। १३—धंद = संदेह। १४—दन्द = द्वन्द्व, दुविधा। १६—समुथ = समुद्र। राजमरालि—राजहंसिनी।

१, २—पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ा लो, और मुखरा (शब्द करने वाली) करधनी को हाथ से निवारण करो। ३—अम्बर = वस्त्र। तिमिर-पथ = अन्धकार पूर्ण राह। समाई = घुसकर। ५—समुद = समुद्र। कुसुम = फूल। रभस = आनन्द। रसी = रस-युक्त। ३—कुगत = जिसका

(११८)

जागल घर पर नींद भेल भोर।
सेज तेजल उठि नंद-किशोर ॥२॥
सघन गगन हेरि नखतर पाँति।
अवधि न पाओल छूटल राति ॥४॥
जलधर रुचिहर सामर काँति।
जुवति-मोहन-वेस धरु कत भाँति ॥६॥
धनि अनुरागिनि जानि सुजान।
घोर अँधियारे कएल पयान ॥८॥
पर नारी पिरित क ऐसन रीति।
चलल निभृत पथ न मानय भीति ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि-तीर।
तहँ चलि आएल गोकुल बीर ॥१२॥
कविसेखर पथ मीलल जाई।
आएल नागर भेंटल राई ॥१४॥

आगमन अशुभ हो। ससी=चन्द्रमा। ८ पिसुन—दुष्ट। भम=भ्रमण कर रहे हैं। ९—अलक तिलक=महावर और टीका। १०—अंग विलेपन=शरीर में अंगराग लगाना। करहु बाधे=बाधा कर दो, मत लगाओ।

१—घर पर जो जगे थे, सभी सो गये। ३-नखतर=नक्षत्र, तारे। ४—रात कितनी बीती, इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर=मेघ। रुचि-हर शोभा हरनेवाला। ६—जुवति मोहन=युवतियों को मोहनेवाला। १० निभृत=सुनसान पूर्ण, अन्धकार। १४—राई=राधा।

(११९)

तपन क ताप तपत भेल महि तल

तातल वालू दहन समान।

चढ़ल मनो-रथ भामिनि चलु पथ

ताप तपत नहिं जान ॥२॥

प्रेम क गति दुरवार।

नविन जौवनि धनि चरन कमल जिनि

तइओ कएल अभिसार।४॥

कुल-गुन-गौरव सति जस-अपजस

तृन करि न मानए राधे।

मन मधि मदन महोदधि उछलल

बूड़ल कुल-मरजादे।६॥

कत कत विघिन जितल अनुरागिनि

साधल मनमथ-तंत।

गुरुजन-नयन निवारइन सुवदनि

पाठ करए मन मंत।८॥

केलि कलावति कुसुम-सरिस-कुल

कौशल करल पयान।

जत छल मनोरथ पूरज मनमनमथ

इह कविसेखर भान ॥१०॥

१—तपन क=सूर्य की। ताप=गर्मी। तपत=तप्त, जलता हुआ। तातल=गर्म हो गया। दहन=अग्नि। २—मनो-रथ=इच्छा-रूपी रथ। भामिनी=स्त्री। ३—दुरवार=प्रबल। ४—जिनि=

निअ मंदिर सयँ पग दुइ चारि।
घन घन बरिस मही भर वारि ॥ २ ॥
पथ पीछर वड़ गरुअ नितम्ब।
खसु कत बेरि नहीं अवलम्ब ॥ ४ ॥
विजुरि-छटा दरसावए मेघ।
उठए चाह जल धारक थेघ ॥ ६ ॥
एक गुन तिमिर लाख गुन भेल।
उतरहु दखिन भान दुर गेल ॥ ८ ॥
ए हरि जानि करिअ मोयँ रोस।
आजुक विलम्ब दइव निअ दोस ॥१०॥

समान। तइओ=तौ भी। ५—सति=सती स्त्रियों का। ६—नवि=मध्य, में। महोदधि—महा समुद्र। उछलल=उछलने लगा, तरंगित होने लगा। ७—मनमथ=कामदेव। तंत=यन्त्र। ८—निधारइत=रचती हुई। मन्त=मन्त्र। ९—कुसुम=फूल। सरसि=सरसी, तालाब। कुल (कूल)=किनारे। कौसल=छल से। १०—छल=था।

१—निअ=अपना। सयँ=से। पग=डेग। २—घन घन=घने बादल। महि भर वारि=पृथ्वी जल से भर गया। ३—पीछर=जिसपर पैर फिसल जाये। गरुअ=भारी। नितम्ब=चूतड़। ४—खसु कत बेरि=कितनी बार गिर पड़ी। ६—जल धारा बार बार—मूसलधार—बरसना चाहता है। ७—तिमिर=अन्धकार। ८—उत्तर और दक्षिण का ज्ञान दूर ही हो गया दिशा-ज्ञान नहीं रहा।

(१२१)

माधव, करिअ सुमुखि समधाने।
तुअ अभिसार कएलि जत सुन्दरि
कामिनि कए के आने॥ २॥
बरिस पयोधर धरनि वारि भरि
रयनि महा भय भीमा।
तइअओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा॥ ४॥
देखि भवन-भित लिखित भुजॅग-पति
तसु मन परम तरासे।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
विहुसि आएलि तुअ पासे॥ ६॥
निअ पहु परिहरि अइलि कमल-मुखि
परिहरि निअ कुल गारी।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि वर नारी॥ ८॥
ई रस-रसिक बिनोद क बिन्दक
कवि विद्यापति गावे।
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे॥ १०॥

२—के=कौन। ३—आने=दूसरा। ४—पयोधर=बादल। भीमा=डरावनि। ५—भित=दीवाल। भुजंग=सर्प। ७—कर=हाथ। फनिमनि=सर्प के मणि को। ७—पहु=प्रभु, प्रीतम। गारी—

(१२२)

राहु मेघ भए गरसल सूर।
पथ परिचय दिवसहि भेल दूर ॥२॥

नहि वरिसए अवसन नहि होए।
पुर परिजन संचर नहि कोए ॥४॥

चल चल सुन्दरि कर गए साज।
दिवस समागम सपरत आज ॥६॥

गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर ॥८॥

एहे संसार सार वतु एक।
तिला एक संगम, जाव जिव नेह ॥१०॥

भनइ विद्यापति कविकंठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस-अभिसार ॥१२॥

गाली, शिकायत। मेघ—कखने " =कब क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ परिचय=राह की पहचान। दिवसहि=दिन में ही। ३—अवसन=अवसन्न, समाप्त। मेघ न बरसता बरसता है, न खुल जाता है ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज=जाकर साज करो—शृंगार करो। ६—दिवस-समागम=दिन का मिलन। सपरत=सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत= मनोवाञ्छा। ९—सार=तत्त्व, सत्य। वतु=वस्तु। १०—एक क्षण के लिये रति-क्रीडा और जीवन-भर प्रेम करना। ११—कोटिहुँ= करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट=न घट सकता, नहीं सकता।

(१२३)

आज पुनिम तिथि जानि मोयँ अएलिहुँ
उचित तोहर अभिसार।
देह-जोति ससि-किरन समाइति
के बिभिनावए पार॥ २॥
सुन्दरि अपनहु हृदय विचारि।
आँखि पसारि जगत हम देखलि
के जग तुअ सम नारि॥ ४॥
तोहें जनि तिमिर हीत कए मानह
आनन तोर तिमिरारि।
सहज विरोध दूर परिहरि धनि
चलु उठि जतए मुरारि॥ ६॥
दूती वचन हीत कए मानल
चालक भेल पँचबान।
हरि-अभिसार चललि वर कामिनि
विद्यापति कवि भान॥ ८॥

१—पुनिम पूर्णिमा। अएलिहुँ=मैं आई। २—देह-जोति=शरीर की कांति। ससि-किरन—चन्द्रमा की किरण (में)। समाइति=घुल जायगी, मिल जायगी। के=कौन। बिभिनावए पार=विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है। ५—जनि=नहीं। तिमिर=अन्धकार। हीत=मित्र। आनन=मुख। तिमरारि=अन्धकार का शत्रु, चन्द्र। ६—जतए=जहाँ। ७—चालक=प्रेरक पँचबान=काम। हरि-अभिसार=कृष्ण से गुप्त मिलन करने को।

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीप क सिखा मलिन भए गेल ॥२॥
छड तञ माधव जएबा देह।
राखब [illegible]हिअ गुपुत सनेह ॥४॥
दुरजन जागत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान ॥६॥
भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि बेकत करए निअ चोरि ॥८॥
अपनयँ धन हे धनिक धर गोए।
परक रतन परगट कर कोय ॥१०॥
फाव चोरि जौं चेतन चोर।
जागि जाए पुर परिजन मोर ॥१२॥
भनइ विद्यापति सखि यह सार।
से जीवन जे पर उपकार ॥१४॥

१-अरुन किरन=सूर्य की किरण। अम्बर=आकाश। २-सिखा=लौ,टेम। ३--तज छोड़ो। जएबा देह=जाने दो। ४--गुपुत=गुप्त, छिपा हुआ। ६--सगर=सब। मलान=म्लान, मलिन। ७--भमर=भौंरा। रमि=रमण कर, विहार कर। अगोरि=अगोरकर रहना। ८--बेकत=व्यक्त, प्रकट। ९--१०--धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है? ११--फाव=खबरा, शोभना। चेतन=चतुर। १३--सार=तत्व।

(१२५)

दुहु रुप लावनि मनमथ मोहनि
निरखि नयन भुलि जाय।
रजनि-जनित रति बिरम अलापन
अलप रहल दुहु गाय ॥२॥
चाँचर कुन्तल ताहे कुसुम-दल
लोलत आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय बाढ़ए सुख
बोलब भूलत पाँत ॥४॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
विरह-विषानल दुहु तनु जारल
लोचन लागल धन्द ॥६॥
भीतक चीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल विसायक वेला।
प्रेम-पयोनिधि उछलि उछलि पड़
चेतन अचेतन भेला ॥८॥
दुहु जन चोत-रीत हेरि सहचरि
छन छन गगनहि चाय।
रजनि पोहाओल सब जन जागल
से डर अधिक डराय ॥ १० ॥
सेखर बुझि तब करि कत अनुभव
दुहु सँग भंग कराब।
निज निज मन्दिर गमन करल दुहु
गुरुजन भेद न पाव ॥ १२ ॥

छलना

(१२६)

मन्दिर अछलौं सहचरि मेलि।
परसंगे रजनि अधिक भई गेलि ॥ २ ॥
जब सखि चललहु अपन गेह।
तब मझु नींद भरल सब देह ॥ ४ ॥
सूति रहल हम करि एक चीत।
दैव-विपाक भेल विपरीत ॥ ६ ॥
न बोल सजनि सुन सपन-सम्बाद।
हँसइत केहु जनि कर परिवाद ॥ ८ ॥
विषाद पड़ल मझु हृदयक माँझ।
तुरित घोचारलौं नीविक काज ॥१०॥
एक पुरुष पुनु आओल आगे।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे ॥१२॥
से भय चिकुर चीर आनहि गेल।
कपाल काजर मुख सिंदुर भेल ॥ १४ ॥
अतर कइव केह अपजस गाव।
विद्यापति कह के पतिआव ॥ १६ ॥

१—अछलौं = मैं थी। सहचरि = सखी। २—परसंगे = बातचीत में। रजनि = रात। ५—सूति रहल = सो रही। चीत एक करि = चित्त एकाग्र करके। ६—विपाक = फल। ७—सपन = स्वप्न। ८—परिवाद = प्रवाद, शिकायत। १०—घोचारलौं = शिथिल कर दिया। नीविक काज = नीवी का बंधन। १२—अरुन = लाल। अधरक दागे = ओष्ठ पर चिह्न बना दिया।

(१८७)

कुसुम तोरए गेलहुँ जाहाँ।
भमर अधर खंडल ताहाँ॥ २॥
तेँ चलिएलहुँ जमुना तीर।
पवन हरल हृदय चीर॥ ४॥
ए सखि सरुप कहल तोहि।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि॥ ६॥
हार मनोहर बेकत भेल।
उजर बरग सबअ लेल॥ ८॥
तेँ धसि मजूर जोड़ल झाँप।
नखर गाड़ल हृदय काँप॥ १०॥
भन विद्यापति उचित भाग।
बचन पाटव कपट लाग॥ १२॥

१३—ते भय=उस डर से। चिकुर=केश। चीर=साड़ी। आनहि गेल=दूसरे ही ढग का हो गया। १४—कपाल=मस्तक। १५—अंतर=हृदय की बात। १६—पतिआएत=विश्वास करेगा।

१—कुसुम=फल। गेलहुँ=मैं गई। २—भमर=भौंरा अधर=ओष्ठ। ३—तेँ=वहाँ से। ४—हृदय चीर—वक्षःस्थल की साड़ी, अंचल। ५—सरुप=सत्य। आनु=अन्य। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। उजर=उज्ज्वल। बरग=सर्प। ९—झाँप जोड़ल=कपट पड़ा। १०—नखर गाड़ल=नख गड़ा गया। १२—पाटव=पटुता, चतुरता।

(१२८)

सखि हे तोहे हमर बहु सेवा।
ऐसनि बानि कबहु जनि बोलबि
जाति कुल किए मोर लेवा ॥ २ ॥
गोकुल नगर कान्ह रति-लम्पट
जौबन सहज हमारा।
तुहु सखि रभसि मोहे जनि बोलबि
लोक करब पतिआरा ॥४ ॥
केशर कुसुम हेरि हम कौतुक
भुज जुग मेटल ताहि।
दाड़िम भरम पयोधर ऊपर
पड़लहु कीर लोभाहि ॥ ६ ॥
चकित उभय भुज इति उति पेखल
तैं बेम भए गेल आन।
इथे परिबाद कहलि मोहे वैरिनि
इह कबि सेखर भान ॥ ८ ॥

१—हे सखि, मैं तुम्हारी बहुत सेवा करूँगी। २—बानि=बोली। जाति कुल ''=मेरा जाति कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि=दिल्लगी में। पतिआरा—विश्वास। ५—केशर के फूल देखकर, कौतुकवश, उसे दोनो हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगे दीख पड़ते हैं]। ६—अनार समझकर सुग्गे मेरे कुचों पर टूट पड़े। [उनकी चोंचो के आघात से कुछ क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख रेखा समझ रही हो]। ७—उभय=

(१७९)

खरि नरि-वेग भासलि नाई।
धरए न पारथि बाल कन्हाई ॥ २ ॥
ते धसि जमुना भेलहुँ पार।
फाटल वलआ टूटल हार ॥ ४ ॥
ए सखि ए सखि न बोल मंद।
बिरह वचन बढ़ाए दंद ॥ ६ ॥
कुंडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइत पड़लि साँझ ॥ ८ ॥
अलक तिलक तें दूर गेल।
सुध सुधाकर वदन भेल ॥ ११ ॥
नटिनि नट न पाइअ बाट
तें कुच गड़ल कठिन काँट ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति अपसाद।
वचन-कओसल जितिअ वाद ॥ १४ ॥

दोनों। भुज=हाथ। तें=इससे। वेस=रूप—आन=दूसरा।

१—खरि=तीव्र। नरि=नदी। भासलि=बह गई। बह चलि। नाइ=नाव, नौका। ३—धसि=तैरकर। ४—वलआ=चूड़ी। ५—मंद=बुरी बात। ६—बिरह=विरस, कठोर। दंद=झगड़ा। ७—खसल=गिर पड़ा। ८—जोहइत=खोजते से। ९—अलक=आलता, महावर। तिलक=टीका। १०—सुध=शुद्ध, निष्कलंक। सुधाकर=चन्द्रमा। ११—नटिनि=नटी। बाट=राह। १२—गड़ल=गड़ गया। १३—अपसाद=विराग।

ननदी सरुप निरुपह दोसे।
बिनु बिचार बेभिचार बुझओबह
सासू करतन्हि रोसे॥४॥
कौतुक कमल नाल सयँ तोरल
करए चाहल अवतसे।
रोष कोष सयँ मधुकर आओल
तेहि अधर करु दसे॥४॥
सरवर-घाट बाट कंटक-तरु
देखहि न पारल आगू।
साँकरि बाट उबटि कहु चललहु
ते कुच कंटक लागू॥६॥

१४—वचन कओसल = वचन-चातुरी। वाद=तुकबन्दी।

१—सरुप = स्वरूप, आकृति। निरुपह = निरूपण करती हो मेरी ननद, तुम आकृति देखकर उसके दोष लगती हो। २—बेभिचार = व्यभिचार, पाप कर्म। बुझओबह = समझाओगी। रोसे=रोष। ३—नाल सयँ = मृणाल से। अवतंस = सिर का आभूषण। ४—रोष=क्रोधित होकर। कोष=कमल का भीतरी भाग। मधुकर = भौंरा। तेहि=उसीने। दसे करु= काट लिया (जिससे ओठ मलिन हो गए) ५—सरवर = तालाब। बाट = राह। कंटक तरु=काँटों के पेड़। देखहि न पारल=देख न सकी। आगू= आगे। ६—साँकरि=सकीर्ण पतली। ते=इसमें। कुच = स्तन।

गरुअ कुम्भ सिर थिर नहि थाकए
तेँ उधसल केस-पास।
सखि जन सयँ हम पाछे पड़लिहु
तेँ भेल दीघ निसास॥ ८॥
पथ अपवाद पिसुन परचारल
तथिहु उतर हम देला।
अमरख चाहि वैरज नहि रहलेँ
तेँ गदगद सर भेला॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन बर जौवति
ई सभ राखल गोई।
ननदी सयँ रस रीति बढावह
गुपुत बेकत नहि होई॥१२॥

७—गरुअ=भारी। कुम्भ=घड़ा। सिर थिर नहि थाकए=सिर स्थिर नहीं रहता। उधसल=शिथिल हो गया। ८—सयँ=से। पीछे पडिलिहु=पीछे पड़ गई। दीघ भेल=तीव्र हुआ। निश्वास=ऊँची साँस, उच्छ्वास। मैं सखियों के पीछे पड़ गई, अतः दौड़कर उन्हें पाने की चेष्टा करने के कारण साँस जल्दी-जल्दी आ रही है। ९—पथ = राह। अपवाद = शिकायत। पिसुन = दुष्ट। परचारल = प्रचारित किया, फैलाया। तथिहु = वहाँ। उत्तर देला = उत्तर दिया। १०—अमरख चाहि = अमर्ष वश, क्रोध के आवेग से। गदगद सर = भर्राई आवाज। ११—ई सभ=यह सब। गोई = छिपाकर। गुपुत बेकत नहि होई= जो प्रकट है, वह छिप नहीं सकता।

१३१

जाहि लागि गेल हे ताहि कहाँ लइलि हे
ता पति बैरि पितु काहाँ।
अछलि हे दुख सुख कहह अहन मुख
भूषन गमओलह जाहाँ ॥ २ ॥
सुन्दरि, कि कए बुझाओब कंते
जन्हिका जनम होइत तोहे गेलिहु
अइलि हे तन्हिका अंते ॥ ४ ॥
जाहि लागि गेलहु से चलिआएल
तें मोयँ धाएल नुकाई।

१—जाहि लागि=जिसके लिये (जल के लिये)। गेलि=गई। ताहि=उसे। कहाँ लाइलि=कहाँ लाई (नहीं लाई)। ता पति बैरि पितु काहाँ=उसके (जल के) पति=समुद्र, समुद्र का वैरी=अगस्त्य, अगस्त्य का पिता=घट, घड़ा; घड़ा—घड़ा=कहाँ है ? २—अछलि=थी। भूषण=अगराग आदि। गमओलह=खो दिया। जहाँ अगराग आदि। (रति क्रीड़ा की मस्ती में) नष्ट हो गये, वहाँ के सुख-दुख अपने ही मुख से कहो। ३—कि कए=क्या कहकर। बुझाओब=समझाओगी। ४—जन्हिका जनम होइत=जिसका (दिन का) जन्म होते ही—प्रातःकाल हो। अइलि हे तन्हिका अन्ते=उसके (दिन के) अन्त में—संध्या को आई। ५—जिसके लिये (जल के लिये) मैं गई, वह (जल-वृष्टि, वर्षा) चला आई—वर्षा होने लगी, जिससे मुझे दौड़कर छिपना पड़ा।

से चलि गेल ताहि लए चललिहु
तेँ पथ भेल अनेआई ॥ ६ ॥
संकर-वाहन खेड़ि खेलाइत
मेदिनि-वाहन आगे ।
जे सब अछलि सँग से सब चललि भँग
उबरि अएलहुँ अति भागे ॥ ८ ॥
आहि दुइ खोज करइ छथि सासुन्हि
से मिलु अपना सगे ।
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
गुपुत नेह रति रगे ॥ १०॥

६—से=वह (जल वृष्टि) चली गई तब उसे (जल) लेकर चली । तेँ=इस कारण । पथ=राह । अनेआई=अन्याय । ७-संकर-बाहन=बैल । खेड़ि खेलाइति=खेल कर रहा था, आपस में लड़ रहा था । मेदिनि वाहन=सर्प । आगे=आगे था । ८—अछलि=थो । भँग=छिटककर । उबरि अएलहुँ=उबर आई, बच आई । भागे=भाग्य से ही । ९—जिन दोनों (जल और घड़ा) को खोज सासुजी कर रही हैं, वे दोनों अपने साथियों से मिल गये-(वर्षा हो रही थी कि घड़ा फूट गया-घड़े का पानी वर्षा के पानी में मिल गया । और मिट्टी का घड़ा मिट्टी में मिल गया) । १०—जौवति=युवती । गुपुत नेह=गुप्त प्रेम । रति-रगं=रति क्रीडा ।

When passion and philosophy meet in a single individual, we have a great poet —Browning.

मान



खनहि खन महँघि भइ   किछु अरुन नयन कइ
कपट धरि मान सम्मान लेही।
कनक जयँ प्रेम कपि   पुनु पलटि बाँक छवि
आधि सयँ अधर मधु-पान देहि ॥ ॥
अरेरे इन्दुमुखि अइ न कर   पिअ हृदय खेद हर
कुसुम सर रंग ससार सारा ॥ ३ ॥
वचन बस होसि जनु   ससरि भिन्न होइन तनु
सहज वरु छाडि देव सयन सीमा।
प्रथमे रस भंग भेल   लोभे मुल सोभ गेल
दाँधि भुज-पास पिय धरब गीमा ॥५॥
जदि नयन-कमल-कर   मुकुल कल कान्ति वर
खर नखर-घाव कइ सेहे वेला।
परम पद लाभ सम   मोद चिर हृदय रम
नागरि सुरत सुख अमिअ मेला ॥६।
सरसकवि सुरस भल   चारु तर चतुरपन
नारि आराहिअइ पचबान।
सकल जन सुजन गति   राय लखिमाक पति
रूप नारायन सिवसिंघ जाना ॥ ९ ॥

[मान शिक्षा] १—महँघि=महँगा । ३—अइ=हठ । कुसुम-सर=कामदेव । ५—गीमा=ग्रीवा, गरदन । ६—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—आँखें मिचने लगे—तो उस वक्त नख का विकट प्रहार करना।

(१३३)

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥२॥

ततहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥४॥

कुच कुंकुम मालल हिय तोर।
जनि अनुराग रागिकह गोर ॥६॥

आनक भूषण तोर कलङ्क।
बड़ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥८॥

चिट-गुड़ चुपड़लि राड़क पोरि।
लओले लाथ देकल भेल चोरि। १०॥

भनइ विद्यापति वजवहु वाद।
बड़ अपराध मौन पए साव ॥१२॥

१—२—उजागर=जागरण । निवेद=जनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात को अधिक जागरण प्रगट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायित-मलस निमेषम्—गीतगोविन्द।" ३—ततहि जाह=वहीं जाओ। लाथ=बहाना। ५—६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानो अनुराग के रंग में रंगकर (काले वक्ष स्थल को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक =दूसरे का। ८—परसग= प्रसंग, सगधि। ९—चिटि-गुड=गुड चींटी । राड़ =शूद्र की एक उपजाति । पोरि=घर । १०—लाथ लओले=बहाना करने पर । देकल=व्यक्त । १२—वजवहु=बोलना । वाद=व्यर्थ ।

(१५४).

कुकुम लओलह नर-त गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ।२।
तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लाचन अरुन वेकत भेल चोरि।४।।
चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान।।६।।
कानुक प्रकृति बुझओ गुनसीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला।।८।।
वचन नुकावह वेकत मो काज।
तोय हसि हेरह मोय बड़ लाज।।१०।।
अपथहु सपथ बुझावह राये।
कोन परि खेअम रठ अपराधे।।१२।।
भनइ विद्यापति पिआ अपराध।
उगम्ट न कर मनोरथ साध।।१४।।

१—नायिका ने जो अपने नखों से दबोचकर तुम्हारे वक्ष-स्थल पर चिह्न बना दिया था उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक=ओष्ठ का। अएलह =आये हो। ३—छपल=छिपसका। ४—अरुन =लाल। वेकत=व्यक्त, प्रकट। ५—आन=अन्य। ६—परतख=प्रत्यक्ष ७—प्रकृति=स्वभाव। ८—जस=जैसा। मनसिज=कामदेव। ९—नुकावह=छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो, किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु=बुरी राह जाने पर भी। १२—कोन परि=किस प्रकार। खेओन=क्षमा करूँगी। १४—उगम्ट=प्रकाश। साध=इच्छा।

(११५)

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
वचन बोलत आध आधे ।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ॥२॥
माधव, चल चल चलतन्हि ठाम ।
जसु पद-जावक हृदयक भूषन
अबहु जपत तसु नाम ॥४॥
कत चंदन कत मृगमद कुंकुम
तुअ कपोल रहु लागि ।
देखि सौति अनुरुप कएल विहि
अतए मानिए बहु भागि ॥६॥

१—मुदित = मुंदे हुए । २—रति आलस = काम क्रीड़ा-जनित थकावट । सामर = श्यामला । झामर = मलिन । हेरि = देखकर । साधे = हौसला । ३—चल = जाओ । तन्हि ठाम = उसी जगह । ४—जसु = जिसके । पद जावक = पैर का महावर । जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय आभूषण हुआ है, उसीका नाम तुम अब भी जप रहे हो। [अकस्मात् कृष्ण के मुंह से उस नायिका का नाम निकल गया था] । ५—कत = कितना । मृगमद = कस्तूरी । कुंकुम = केशर । कपोल = गाल । ६—अनरूप = समान । ६—मैं तो इसीमें अपना सौभाग्य मानती हूं कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है ।

(१३६)

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥
पुजलौं पसुपति जामिनि जागि।
गमन विलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥
लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ॥६॥
रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥
नवकविसेखर कि कहब तोय।
सपथ करह तब परतीत होय ॥१०॥

१——अवधान=मनोयोग, ध्यान देना। कहसि काहे आन = दूसरी बात क्यों कह रही हो। पसुपति=महादेव। जामिनि=रात। । ४-गमन=आने में, चलने में। तेहि लागि=उसी लिये। ५——६——उचरइत=उच्चारन करते। राग=लालिमा। कस्तुरी और केशर से शिव की पूजा की शरीर पर उन्हीं के चिह्न हैं। बार बार मन्त्र उच्चारण करने के कारण ओष्ठ की ललाई नष्ट हो गई। ७ रजनि=रात। उजागर=जागरण, घोर=भयानक (लाल) ८——इसी लिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९——१०——विद्यापति कहते हैं——तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

---

(१३७)

ए धनि कामिनि करह संजात।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजगिनि
ताक उपर धर हात ॥ २ ॥
तोहे छोड़ि जदि हम परसब कोय।
तुअ हार-नागिनि काटब मोय ॥ ४ ॥
हमर वचन यदि नहि परतीत।
बुझि करह साति जे होय उचीत ॥ ६ ॥
भुज-पास बाँधि जघन-तर तारि।
पयोधर-पाथर हिय दइ भारि ॥ ८ ॥
उर-कारा बाँधि राख दिन-राति।
विद्यापति कह उचित इह साति। १० ॥

१—धनि=बाला। करह संजात=संयत करो, शोक छोड़ो
२—हेम-घट=सोने का घड़ा। भुजंगिनि=सर्पिणी। ताक=उसके
[यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना
प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच रूपी सोने के घड़े तथा हार
रूपी सर्पिणी के ऊपर हाथ रखकर मैं शपथ खाता हूँ। ३—
छोड़ि=छोड़कर। परसब=स्पर्श करूँगा। कोय=किसी को।
६—साति=शास्ति, दण्ड। ७—भुज-पास=भुजा रूपी जंजीर।
जघन तर=जाँघों के बीच में। तारि=ताड़ना करके, खूब ठोक-
पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उर-
कारा=हृदय रूपी जेलखाने में। राख=रक्खो। १०—इह=यह।
साति=शास्ति, दंड।

अरुन पुरब दिसा बितलि सगर निसा
गगन मगन भेला चंदा ।
मूँदि गेलि कुमुदिन तइयो तोहर धनि
मूदल मुख अरविंदा ॥२॥
चाँद बदन कुवलय दुहु लोचन
अधर मधुरि निरमान ।
सगर सरीर कुसुम तोए सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ॥४॥
अस कति करह ककन नहि पहिरह
हार हृदय भेल भार ।
गिरि सम गरुअ मान नहि मुँचसि
अपरुब तुअ बेवहार ॥६॥
अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि बिहान ।
राजा सिवसिंघ रूप नरायण
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—अरुन=लाल । बितलि=बीत गई । सगरि=सारा,

(१३९)

मदन कुञ्ज पर बइसल नागर
वृन्दा सखि मुख चाहि ।
जोड़ि जुगुल कर विनति करए कत
तुरित मिलावह राहि ॥ २ ॥
हम पर रोखि विमुख भइ सुन्दरि
जबहु चललि निज गे ।
मदन हुताशन मझु मन जारल
जीव न बाँचइ थेहा ॥ ४ ॥
तुअ अति चतुर शिरोमनि नागर
तोहे कि सिखाओब वानि ।
तुहु बिनु हमर मरम कोन जानत
कइसे मिलाएब आनि ॥ ६ ॥
चन्दन चाँद पवन भेल रिपु सम
वृन्दावन वन भेल ।
कोकिल मयूर झंकार देत कत
मझु मन मनमथ सेल ॥ ८ ॥
छल छल नयन वयन भरि रोअत
चरन पकड़ि गहि जाव ।
हा हा घे धनि हमए न हेरव
सिंह भूपति रस गाव ॥ १० ॥

१—चाहि=देखना । २—राहि=राधा । ४—मदन-हुताशन=कामदेव रूपी अग्नि । जीव न बाँचइ थेहा=जीव स्थैर्य

माधव, इ नहि उचित विचार।
जनिक एहन धनि काम-कला सनि
से किय करु व्यभिचार ॥ २ ॥
प्रानहु ताहि अधिक कए मानब
हृदयक हार समान।
कोन परजुगति आन के ताकब
की थिक तोहर गेआन ॥ ४ ॥
कृपन पुरुष के केओ नहि निक कह
जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहि उपभोगब
केवल परहिक आस ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
इ थिक अनुचित काज।
मांगि लायब वित से यदि हो नित
अपन करब कोन काज ॥ ८ ॥

नहीं बाँधते, प्राण स्थिर नहीं होते ८—रभस=कामदेव।

२—जनिक=जिसको। एहन=ऐसी। सनि=समान। ४—परजुगति =प्रयुक्ति। आन के ताकब=दूसर को देखना। की=क्या। थिक=है। ५—कृपन=कृपण। निक=नीक, अच्छा। उपहास=हँसी, ६—अछइत=रहते। परहिक=दूसरे की। ८—यदि माँगा हुआ धन स्थिर रहता-यदि माँगनी की चीज से ही काम चल जाता —तो लोग अपने धन के लिये क्यों कष्ट उठाते ?

(१४१)

विरह व्याकुल बकुल तरुतर
पेखल नन्द-कुमार रे।
नील नीरज नयन सयँ सखि
ढरइ नीर अपार रे॥ २॥
पेखि मलयज-पङ्क मृगमद
तामरस घनसार रे।
निज पानि-पल्लव मूँदि लोचन
धरनि पड़ असँभार रे॥ ४॥
वहइ मन्द सुगन्द सीतल
मन्द मलय-समीर रे।
जनि प्रलय कालक प्रबल पावक
दहइ सून सरीर रे॥ ६॥
अधिक वेपथ टूटि पड़ खिति
मसृन मुकुता-माल रे।
अनिल तरल तमाल तरुवर
मुच सुमनस जाल रे॥ ८॥
मान-मनि तजि सुदति चलु जहि
राए रसिक सुजान रे।
सुखद स्तुति अति मरम दरडक
कवि विद्यापति भान रे॥१०॥

१—बकुल=मौलिश्री, गनसरी। २—नीरज=कमल। ३
यज=चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। तामरस=कमल।

रामा, कि अब बोलसि आन।
तोहर चरन सरन से हरि
अबहु मेटह मान ॥ १ ॥
गोबर्धन गिरि वाम कर धरि
कएल गोकुल पार।
बिरह खे खिन करक कंकन
गरुअ मानक भार ॥ ४ ॥
दमन काली कएल जे जन
चरन जुगल-बरे।
अब भुजंगम भरम भूलल
हृदय हार न धरे ॥ ६ ॥
सहज चातक छाड़ए न ब्रत
न बइसे नदी तीर।
नविन जलधर-वारि बिनु
न पिवए तासरि नीर ॥८॥

सार=कपूर। ४—पानि=हाथ। ६-पावक=अग्नि। सून=शून्य। ७-लेपन=चर्चित। क्षिति=पृथ्वी। मसृन=चिकना। ८-पानिल-तरल वायु द्वारा आन्दोलित। गुंज=गिरना। सुमनस=फूल। ९—सुदति=सुन्दरी। १० सुति=सुनने से। दंडक=इस छन्द का नाम दंडक है।

१—रामा=सुन्दरी। आन=अन्य। ४—करक=हाथ का। गरुअ=अधिक, भारी। ६—दमन=दलित, नष्ट। बरे=श्रेष्ठ। भुजंगम=सर्प। ७—बरत=व्रत। बइसे=बैठना। जलधर=बादल।

(१४३)

सखि हे बूझल कान्ह गोआर।
पितरक टाँड़ काज दहु कओन लह
ऊपर चकमक सार ॥ २ ॥
हम ता कएल मन गेलहि होएत भल
हम छलि सुपुरुख भाने।
तोहर वचन सखि कएल आँखि देखि
अमिअ-भरम विष पाने ॥ ४ ॥
पसुक संग हुन जनम गमाओल
से कि बुझथि रतिरंग।
मधु-जामिनि मोर आज विफल गेलि
गोप गमारक संग ॥ ६ ॥
तोहर वचन कूप धसि जाएब
तैं हमे गेलहु अबाट।
चंदन भरम सिमर आलिगल
सालि रहल हिय काँट ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति हरि बहुबल्लभ
कएल बहुत अपमान।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा पति रस जान ॥१०॥

२—पितरक=पीतल का। टाँड=हाथ का एक गहना। ३—गेलहि=जाने से। छलि=थी। मधुजामिन=बसंत की रात। ७—अबाट=कुपथ। ८—सिमर=सेमल। ६-बहुबल्लभ=बहुत स्त्रियो के पति।

मधु सम बचन कुलिस सम मानस
प्रथमहि जान न भेला।
अपन चतुरपन पिसुन हाथ देल
गरुअ गरब दुर गेला ॥ २ ॥
सखि हे, मन्द प्रेम परिनामा।
बड़ कर जीवन कएल अपराधिन
नहि उपचर एक ठामा ॥ ४ ॥
झाँपल कूप दखहि नहि पारल
आरति चललहु धाई।
तखन लघु गुरु किछु नहि गूनल
अब पछतावक जाई ॥ ६ ॥
एक दिन अइलहु आन भान हम
अब बूझल अवगाहि।
अपन मूँड अपने हम चाँछल
दोख देब गए काहि ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
चित्त गनब तहि आने।
पेमक कारन जीउ उपेखिए
जग जन के नहि जाने ॥१०॥

---

१ — कुलिस=वज्र। ३—पिसुन=दुष्ट। ४-उपचर=शान्ति। ५—आरति=शीघ्रता में। ६—गूनल=समझा। ७ — आन भान=आसमझ। अवगाहि=अन्त प्रवेश करके। ८—चाँछल=छील लिया। १०—उपेखिए=उपेक्षा करो।

(१४५),

माधव, दुर्जय मानिन-मानि ।
विपरित चरित्रा पेखि चकरित भेल
न पुछल आधहु वानि ॥ २ ॥
तुअ रूप साम अखर नहि सुनए
तुअ रूप रिपु सम मानि ।
तुअ जन सयँ सम्भास न करई
कइसे मिलाएब आनि ॥ ४ ॥
नील वसन वर, काँचन चुरि कर
पौतिक माल उतारि ।
करि-रद चुरि कर मोति माल वर
पहिरल अरुनिम सारि ॥ ६ ॥
असित चित्र उर पर छल, मेटल
मलयज देह लगाइ ।
मृगमद तिलक धोइ दृगंचल, कच
सयँ मुख सए छपाइ ॥ ८ ॥

२—विपरित=उलटा। चकरित=चकित। ३—साम=श्याम (कृष्ण)। अखर=अक्षर। ४—सयँ=से। सम्भास=बातचीत। काँचन चुरि कर=हाथों की काँचन की चूड़ी। पौतिक=फिरोजा, नील मणि। ६—करि रद-चुडी=हाथी के दाँत की चूड़ी। अरुनिम=लाल। सारि=साड़ी। —असित चित्र काला गोदना। छल=था। मलयज=चंदन। ८—मृगमद=कस्तूरी (काली होती है) दृगंचल=आंख के कोने। कच=केश। ९—तील=तिल, तिलक।

एक तील छल चारु चिबुक पर
निन्दि मधुप-सुत सामा।
तृन-अग्रें करि मलयज रजल
ताहि छपाओल रामा ॥१०॥
जलधर देखि चन्द्रातप झाँपल
सामरि सखि नहि पास।
तमाल तरु गन चुना लेपल
शिखि पिक दूरि निवास ॥१२॥
मधुकर डर धनि चम्पक-तरु तल
लोचन जल भरिपूर।
सामर चिकुर हेरि मुकुर पटकल
टूटि भए गेल सत चूर ॥१४॥
तुअ गुन-गाम कहए सुक पंडित
सुनतहि उठल रोसाइ।
पिंजर झटकि फटकि पर पटकल
धाए चपल तहि जाइ ॥१६॥
मेरु सम मान सुमेरु दीप सम
देखि भेल रेनु समान।
विद्यापति कह राहि मनावए
आपु सिधारह कान ॥१८॥

चिबुक = ठुड्डी। निन्दि -- -- = जो भौंरे के बच्चे की श्यामता को भी लज्जित करता था। १०—घास के नोक से चन्दन लगाकर उस सुन्दर ने उसे मिटा दिया। ११—जलधर = मेघ। चन्द्रातप =

(१४६)

मानिनि हम कहिए तुम लागी। १
नाह निकट पाइ जे जन वंचए
तेकर बढ़हि अभागी ॥ २ ॥
दिनकर-बन्धु कमल सब जानए
जल तेहि जीवन होई।
पङ्क बिहिन तनु भानु सुखावए
जल पटाव बरु कोई ॥ ४ ॥
नाह समीप सुखद जत वैभव
अनुकुल होएत जोई।
तेकर विरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोई ॥ ६ ॥
तुहु धनि गुनमति बूझ करह रति
परिजन ऐसन भास।
सुनइत राहि हृदय भेल गदगद
अनुमति कएल प्रगास ॥ ८ ॥

खोवा। १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर तथा कोयल को खदेड दिया। १३—चिकुर=केश। मुकुर—आईना। १४—सत खूर=सौ टुकडे। १५—गाम=समूह। सुक=सुगा। रोसाइ=क्रोधित होकर। फटिक=स्फटिक पत्थर। १७—रेनु=धूल।

१—तुम लागी=तुम्हारे लिये। २-नाह=पति। ३-दिनकर=सूर्य। ४—बिहिन=हीन। भानु=सूर्य। पटाव=छिडकना। ६-दगधए=जलाता है।

(१४७)

मानिनि मान उचित नहि माने
एखनुक रंग एहन सन लगइछ
जागल पए पँचबान ॥ २ ॥
जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनि
एहन समय नहि आन ।
एहि अवसर पिय-मिलन जेहन सुख
जकरहि होए से जान ॥ ४ ॥
रभसि-रभसि अलि बिलसि बिलसि करि
करए मधुर मधु पान ।
अपन अपन पहु सबहु जेमाओलि
भूखल तुअ जजमान ॥ ६ ॥
त्रिवलि तरंग सितासित संगम
उरज सम्भु निरमान ।
आरति पति मँगइछ परतिग्रह
करु धनि सरबस दान ॥ ८ ॥
दीपक-दिप सम थिर न रहय मन
दृढ़ करु अपन गेआन ।
संचित मदन वेदन अति दारुन
विद्यापति कवि भान ॥ १० ॥

२—इस समय का समा (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है, मानो कामदेव सोते से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि=शीतल। ४—जेहन=जैसा। जकरहि=जिसको। ६—रभसि=उमंग में आकर।

(१४८)

अखिल लोचन तम-ताप-बिमोचन
उदयति आनन्दकन्दे।
एक नलिनि-मुख मलिन करए जदि
इथे लागि निन्दह चन्दे॥ २॥

सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति।
गुन गन तेजि दोष एक घोषसि
अन्त अहीरनि जाति॥ ४॥

सकल जीव-जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुसीते।
दीपक-जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते॥ ६॥

अलि = भौंरा। ६—पहु = प्रीतम। जेमाओलि = खिलाया। ७—त्रिवली की तरंग में गंगा यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच रूपी शिव की भी स्थापना है। ८—आरति = आर्त, व्याकुल। परतिग्रह = प्रतिग्रह = दान। ९—दीपक-सिख = दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन = कामदेव।

१—अखिल = समूचा (संसार)। तम = अंधकार। ताप = गर्मी, ज्वाला। विमोचन = नाश करनेवाला। उदयति = उगता है। कंद = मूल, जड़। २—नलि = कमलिनी। इथे = इसलिये। निन्दह = निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति = बुद्धि। ४—घोषसि = बार-बार कहना। ५—जीव-जन = प्राणी। जीव = प्राण। समीरन = वायु। ६—परस = स्पर्श। नीन्द = निन्दा। करना। मारुते = पवन को।

स्थावर जगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥८॥
खन-खन सकल कुसुम मन तोषए
निसि रहु कमलिनि सगे।
चम्पक एक जइओं नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ॥१०॥
पाँच पाँच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे।
विद्यापति कान्हु आकुल तो बिनु
विषाद न पावसि लाजे ॥१२॥

७—स्थावर=वृक्ष आदि अचल जीव। जगम=मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट=कीड़े। पतंगम=फतिंगे आदि। ८—कागद पत्र=कागज के पन्ने। परस=स्पर्श। जओ=यदि। नीर=पानी। ९—खन=क्षण। कुसुम=फूल। तोषए=संतुष्ट करता है। निसि=रात। १०—चम्पक=चम्पा। जइओ=यदि। भृंग=भौंरे को। ११—(५×५×१०×४×८×२)=१६००० सखियों के मध्य में। १२—कान्हु=श्रीकृष्ण। विषाद=दुःख। पावसि=पाती हो।

'सा वनिता सा वनिता दस्या चन्दोरिव दर्शनेनापि।
यस्याः [illegible] तरल तरल च [illegible] भवन्ति॥"

(१४६)

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरत सब मनकाम।
कंटक दरस परम भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥२॥
एकहि नगर बसु माधव सजनी
पर-भामिनि बस भेल।
हम धनि पहन कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥४॥
अभिनव एक कमल फुल सजनी
दौना नीमक डार।
सेहो फुल ओतहि सुखायल छथि सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥६॥
विधि वस आज आएल सजनी
एत दिन ओतहि गमाय।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआय ॥८॥
भनई विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनगाइ।
उठ बधाव करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन=चंदन। भरम=भ्रम से। सेवलि=सेवा की। २—कंटक=काँटा। सीमर=सेमल। ३—पर-भामिनि=

सजनी अपद न मोहि परबोध ।
तोड़ि जोड़िअ जहाँ गाँठ पड़ए तहाँ
तेज तम परम विरोध ॥ २ ॥
सलिल सनेह सहज थिक सीतल
ई जानए सब कोई ।
से जदि तपत कए जतने जुड़ाइअ
तइओ विरत रस होई ॥ ४ ॥
गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग ।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पड़ए हुतास पतंग ॥ ६ ॥

दूसरे की स्त्री । ४—एहनी=ऐसी । दुर गेल=दूर हो गया । ५—एक नये कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया, वह वहाँ सूख गया, और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला । ७—छथि=है । ओतहि=वहीं । ८-समागम=भेंट । १०-आओत-आवेगा ।

१ - अपद=अस्थान अनुचित रूप से । परबोध=समझाओ । २—सहज सीतल थिक =स्वभावत ही ठंढा है । ४—तपत कए गर्म करके । जतने=यत्नपूर्वक । जुड़ाइअ=ठंढा कीजिये । तइओ=तोभी । विरत रस=रसहीन । ५—कुल-रूपी चंद्रमा में नीला धब्बा रह जाने पर तथा कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है । ६—अनुभवि=अनुभव करके । पुनु=पुनः । अनुभवए=अनुभव करता है । हुतास=अग्नि ।

(२५१)

कबहु रसिक सयँ दरसन होए जनु
दरसन होए जनु नेह।
नेह विछोह जनु काहुक उपजए
विछोह धरए जनु देह ॥ २ ॥
सजनी दुर करु ओ परसंग।
पहिलहि उपजइत प्रेमक अकुर
दारुन विधि देल भंग ॥ ४ ॥
दैवक दोष प्रेम जदि उपजए
रसिक सयँ जनु होय।
कान्ह से गुपुत नेह करि अब एक
सबहु सिखाओल मोय ॥ ६ ॥
एहन औषध सखि कहिं नहि पाइअ
जनि जौवन जरि जाव।
असमंजस रस सहए न पारिअ
इह कवि सेखर गाव ॥ ८ ॥

सयँ=से । जनु=नहीं । २—विछोह=जुदाई । काहुक=किसीको । ३—दुर करु=अलग करो, बंद करो । परसग=विषय, बातचीत । ४—दारुन = कठोर । भग देल = तोड़ डाला, कुचल डाला । ५—दैवक दोष = विधि विडम्बना से । ६—कृष्ण से गुप्त प्रेम करके मैं यही एक शिक्षा लोगों को देती हूँ । ७—ऐसी दवा में कहीं भी नहीं पाती, जिसके खाने से यह जवानी जल जाती । ८—असमजस=दुविधा । सहए न पारिअ=सहा नहीं जाता ।

जनम होअए जनु, जौं पुनि होई
जुवती भए जनमए जनु कोई ॥ २ ॥
होई जुवति जनु हो रसमंति।
रसओ वुझए जनु हो कुलमंति ॥ ४ ॥
इ धन माँगओं विहि एक पए तोहि।
थिरता दिहह अवसानहु मोहि ॥ ६ ॥
मिलि सामी नागर रसधार।
परवस जनु होए हमर पिआर ॥ ८ ॥
होए परवस कुछ वुझए विचारि।
पाए विचार हार कआन नारि। १०।
भनइ विद्यापति अछ परकार।
दद-समुद हीअ जीव दए पार ॥१२॥

१—जौं=यदि। जनु=नहीं। २—जुवती=नौजवान स्त्री। ३, ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो। ५-इ=यह। धन=(यहाँ) वरदान। विहि=ब्रह्मा। एक पए=एक ही। ६-थिरता=स्थिरता। दिहह=देना। अवसानहु=अन्तिम अवस्था में भी। ७—सामी=स्वामी, पति। नागर=चतुर। रसधार=रसिक। ८—परवस=दूसरे के वश। ९—१०—यदि परवश भी हो जाय तो कुछ समझ बूझ रखले, क्योंकि समझ बूझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है। ११—अछ=है। परकार=उपाय। दद=कलह। समुद=समुद्र। प्राण देकर कलह रूपी समुद्र से पार हो जाओ।

(१५३)

चरन-नखर मनि-रंजन छांद ।
धरनि लोटायत गोकुलचांद ॥ ४ ॥
ढरकि ढरकि परु लोचन नोर ।
कतरुप मिनति कएल पहु मोर ॥ ४ ॥
लागल कुदिन कएल हम मान ।
अवहु न निकसए कठिन परान ॥ ६ ॥
रोस तिमिर अत वेरि किए जान ।
रतनक भए गेल गौरिक भान ॥८॥
नारि जनम हम न कएल भागि ।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥१०॥
विद्यापति कह सुनु धनि राइ ।
रोअसि काहे कह भल समुझाइ ॥१२॥

१, २—मेरे चरण के नख रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुलचन्द (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया। ३—नोर =आंसू। ४—कतरुप=कितने प्रकार से। मिनति=बिनय। पहु=प्रीतम। ६—निकसए=निकलता है। ७, ८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई, रत्न को मैंने गेरू मिट्टी समझा। ९—भागि=भाग्य। १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। ११—राइ=राधा। १२—रोअसि=रोती है। काहे=किसलिये। भल समुझाइ=अच्छी तरह समझाकर।

(१५४)

धनि भलि मालिनि सखि गन मॉफ ।
अनुनय करइत उपजए लाज ।। २ ।।
पिरितक आरति विरति न सहई ।
इंगित भंगिय दुहु सब कहई ।। ४ ।।
राहि सुचेतनि कान्हु सयान ।
मनहि समाधल मन अभिमान ।। ६ ।।
अधर मुरलि जौं धएल मुरारि ।
फोइ कवरि धरि बांधि समारि ।। ८ ।।
जौं निज पुर-पथ धएल मुरारि ।
सखि लखि अनतए चलु वर नारि ।।१०।।
हरि जब छाया कर धनि पाय ।
धनि संभ्रम वइसलि कर लाय ।।१२।।
कह कवि सेखर वुझय सयान ।
इंगित रस पसारल पंचवान ।।१४।।

१—धनि=बाला । ३—आरति=आतुरता, शीघ्रता। प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं सहती। ४—इंगित भंगिए=इशारे से। ५—राहि=राधा, सुचेतनि=सुचतुरा। ६—समाधल=समाधान किया। ८—फोइ=खुले हुए, कवरि=केश, धनि=बाला। समारि=सँभालकर। ९—पुर-पथ=गाँव का रास्ता। १०—अनतए=अन्यत्र। सखियों को ओर देखकर (वह चतुर स्त्री) दूसरी ओर चली। ११—जब श्रीकृष्ण (रास्ते में) राधा को पाकर उनपर छाया की तब राधा लजाकर उनका हाथ पकड़ बैठ गई।

(१५५)

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधव रतनहि मंदिर
निवसय सयनक सूख।
रस रस दारुन दंद उपजल
कान्ह चलल तब रूस॥ २॥
नागर अचल कर धरि नागरि
हँसि मिनती करु आधा।
नागर-हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा॥ ४॥
देख सखि झूटक मान।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तब काहे रोखल कान॥ ६॥
रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मंमथ पंचबान।
अवसर जानि मनावथि राधा
कवि विद्यापति मान॥ ८॥

१—रतनहि=रत्न का बना। निवसय=निवास करते हैं। सयनक सुख=शय्या के सुख में—मिलनानन्द में। २—रस-रस=धीरे धीरे। दारुन=कठोर। दंद=कलह। रूस=रूठकर। ३—अंचल=चादर की खूँट। कर=हाथ। ४—पाँचसर=कामदेव। हनलक=मारा। उरज=कुच। दरसि=देखकर। मन-बाधा=मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा। ६—रोखल=क्रुद्ध

(१५६)

एत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे॥ २॥
एकहि वचन बीच भेल रे।
हँसि पहु उतरो न देल रे॥ ४॥
एकहि पलँग पर कान रे।
मोर लेख दूर देस भान रे॥ ६॥
जाहि वन केओ नहि डोल रे।
ताहि वन पिया हँसि बोल रे॥ ८॥
धरब योगिनिया के भेस रे।
करब में पहुक उदेस रे॥ १०॥
भनइ विद्यापति भान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे॥ १२॥

हुआ। ७--समाधि=समाप्त कर। रहस पसारब=काम क्रीडा में लगा। मधथ=मध्यस्थ, पञ्च। ८--सब समय जानकर राधा मानवती बन गई। भान=कहते है।

१--एत=इतने। छलि=थी। नव=नवीन। २--मीन=मछली। जेहन=जैसा। ३--बीच भेल=अन्तर पड गया। ४--पहु=प्रीतम। उतरो=उत्तर भी। ५--कान=कन्हैया, कृष्ण। ६--मोर लेख=मेरे लिये। भान=मालूम होता है। ७--केओ=कोई। डोल=आता जाता है। ९--धरब=रहूँगी। जोगिनीया=योगिनि। १०--पहुक=प्रीतम का। उदेस=तलाश। ११--निदान=अंत।

---

(१५७)

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त।
पुन कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥ २॥
सबतहु सुनिये अइसन बेवहार।
पुनु टूटए पुनु गाँथिए हार ॥ ४॥
ए कन्हु, कन्हु तोहहि सयान।
बिसरिय कोप करए समधान ॥ ६॥
प्रमक अंकुर तोहे जल देल।
दिन दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥ ८॥
तुअ गुन न गुनल सउतिन आछ।
रोपि न काटिए बिषहुक गाछ ॥ १०॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
जगत विदित भेल तोह हम नेह।
एक परान कएल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास।
बड़क वचन करिए विसवास ॥१६॥

१,—२— जहाँ प्रेम-रस है, वहीं दौरात्म्य कलह भी है। अतः गुणवान् एक बार टूटने पर पुन प्रीति करते हैं। ३—सबतहु= सर्वत्र ही। ६—समधान=समाधान। ७—तोहे=तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन कर लाये। १०—बिषहुक गाछ=विष का भी वृक्ष। ११—प्राणक ओल=प्राणों की ओर, अन्तस्तल में। १२—दुर=दूर, भिन्न। १३—तोह हम—तुम्हारा और मेरा।

(१५८)

की हम साँझक एकसरि तारा
भादव चौठिक ससी।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हसी। २॥
साए साए कहह कहह कन्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे॥
न मोयँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ
बचन न बोलल मंदा।
सामि समाज प्रेम अनुरंजिए
कुमुदिनि सन्निधि चंदा॥ ५॥
भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति
मेदिनि मदन समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देवि रमाने॥ ७॥

१—२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँ (जिसे लोग देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अचरज तक है!) ३—साए=सखि। कहह=कहो। कन्हु=श्रीकृष्ण। ४—अनुगति=पीछे जाना—आज्ञा मानना। सामि=स्वामी, पति। अनुरंजिए=अनुरंजन किया, निभाया। सन्निधि=निकट। ५—मेदिनि-मदन=पृथ्वी में कामदेव-स्वरूप।

(१५७)

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त।
पुन कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥ २ ॥
सबतहु सुनिये अइसन बेवहार।
पुनु टूटए पुनु गाँथिए हार ॥ ४ ॥
ए कन्हु, कन्हु तोहहि सयान।
बिसरिय कोप करए समधान ॥ ६ ॥
प्रमक अंकुर तोहे जल देल।
दिन-दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥ ८ ॥
तुअ गुन न गुनल सउतिन आछ।
रोपि न काटिए बिषहुक गाछ ॥ १० ॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
समत विदित भेल तोह हम नेह।
एक परान कपल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास।
बड़क वचन करिए बिसवास ॥१६॥

१,—२— जहाँ प्रेम-रस है, वहीं दौरात्म्य कलह भी है। अतः गुणवान् एक बार टूटने पर पुनः प्रीति करते हैं। ३—सबतहु= सर्वत्र ही। ६—समधान=समाधान। ७—तोहे=तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन कर लाये। १०—बिषहुक गाछ=विष का भी वृक्ष। ११—प्राणक ओल=प्राणों की ओर, अन्तस्तल में। १२—दुर=दूर, भिन्न। १३—तोह हम—तुम्हारा और मेरा।

(१५८)

की हम साँझक एकसरि तारा

भादव चौठिक ससी।

इथि दुहु माझ कओन मोर आनन

जे पहु हेरसि न हसी। २॥

साए साए कहह कहह कन्हु कपट करह जनु

कि मोरा भेल अपराधे॥

न मोयँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ

बचन न बोलल मंदा।

सामि समाज प्रेम अनुरंजिए

कुमुदिनि सन्निधि चंदा॥ ५॥

भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति

मेदिनि मदन समाने।

राजा सिवसिंघ रूपनरायन

लखिमा देवि रमाने॥ ७॥

१—२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँ (जिसे लोग देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है!) ३—साए=सखि। कहह=कहो। कन्हु=श्रीकृष्ण। ४—अनुगति=पीछे जाना—आज्ञा मानना। सामि=स्वामी, पति। अनुरंजिए=अनुरंजन किया, निभाया। सन्निधि=निकट। ५—मेदिनि-मदन=पृथ्वी में कामदेव-स्वरूप।

(१५९)

करतल कमल नयन ढर नीर।
न चेतए समरन कुंतल चीर ॥ २ ॥
तुअ पथ हेरि-हेरि चित नहिं थीर।
सुमिरि पुरुष नेह दगध सरीर ॥४॥
कत परि माधव साधव मान।
बिरही जुबति माँग दरसन दान ॥ ६ ॥
जल-मध कमल गगन-मध सूर
आँतर चान कुमुद कत दूर ॥ ८ ॥
गगन गरज मेघ सिखर मयूर।
कत जन जानसि नेह कत दूर ॥ १०॥
भनइ विद्यापति बिपरित मान।
राधा बचन लजाएल कान ॥१२॥

१—करतल=हथेली। कमल= (मुख)। नीर=आँसू। २—चेतय=संभालती है। समरन=आभरण, गहने। कुन्तल=केश। चीर=वस्त्र। ३—तुअ पथ=तेरी राह। हेरि हेरि=देख देख कर। थीर=स्थिर। ४—पुरुष=पहला। दगध=जलता है। ५—कत परि=कब तक। साधव मान=मान किये रहोगे। ७—मध=मध्य। सूर = सूर्य। = आँतर=अन्तर, बीच। चान = चन्द्रमा कुमुद = कोई। कत=कितना। ९—गरज = गरजता है। सिखर = पहाड़ की चोटी। १०—जन = आदमी। जानसि = जानते हैं। ११-१२— यह विपरीत मान कैसा? [मान स्त्रियाँ करती हैं, पुरुष नहीं] राधा का यह बचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

(१६०)

बड़ई चतुर मोर कान।
साधन बिनहि भॉगल मझु मान॥ २॥
जोगी वेस धरि आओल आज।
के इह समुझव अपरुब काज॥ ४॥

सास वचन हम भीख लइ गेल।
मझु मुख हेरइत गदगद भेल॥ ६॥
कह तव—'मान-रतन दह मोह।'
समझल तव हम सुकपट सोय॥ ८॥

जे किछु कहल तव कहइत लाज।
कोई न जानल नागर-राज॥ १०॥
विद्यापति कह सुन्दरि राई।
किए तुहु समुझबि से चतुराई॥ १२॥

२—भॉगल=तोड़ा। मझु=मेरा। ३—आओल=आया। ४—के=कौन। अपरुब=अपूर्व। ५—सास वचन=सास के कहने से। लइ गेल=ले गई। ६—हेरइत=देखते। ७—तव कहा—'मुझे मान रूपी रत्न दो।' ८—सोय=वह। १०—जानल=जाना। नागर-राज=चतुरों का बादशाह। ११—राई=राधा। १२—किए=कैसे।

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
मनो न भिद्यते यस्य स योगीह्यथवा पशुः॥"

(१६१)

जटिला सास फुकरि तहि बोलल
बहुरि बेरि काहे ठाढ़ि।
ललिता कहल अमंगल सूनल
सति पतिभय अवगाढ़ि ॥२॥

सुनि कह जटिला घटल की अकुसल
घर सयँ बाहर होय।
बहुरिक पानि धरि हेरह जोगी
किये अकुसल कह मोहि ॥४॥

जोगेस्वर फेरि बहुरिक पानि धरि
कुसल करब बनदेव।
इहे एक अंक बंक बिसंकओ
बन मधि पसुपति सेब ॥६॥

१—फुकरि=चिल्ला कर। बहुरिया, पतोहू। बेरि=विलम्ब,। २—अवगाढि=निश्चय। जटिला सास चिल्लाकर बोली बहुरिया, उतनी देर से वहाँ क्यों खड़ी हो? ललिता ने कहा—कुछ अमंगल सुना जा रहा है। सती को पति-भय निश्चित है। ३—घटल की अकुसल=कौन-सा अमंगल घटा है। ४—बहुरिक पानी=बहुरिया के हाथ। हेरह=देखो। ५ ६—अंक=रेखा। बंक=टेढ़ा। बिसंकओ=शंकायुक्त। मधि=में। तब योगश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर—वन-देवता कुशल करें यही हाथ की एक रेखा कुछ टेढी है, जिससे अकुशल की आशंका है। इसके निवारण के लिये वन में पशुपति की सेवा करनी होगी।

पुजनक तंत्र-मंत्र बहु आछए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओव
तुहु बीज कर इह दान ॥८॥

एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन भेल एक ठाम।
मनमथ मंत्र पढ़ाओल दुहू जन
पूरल दुहू मनकाम ॥१०॥

पुनु दुहु जन मंदिर सयँ निकसल
जटिला सयँ कह भाखी।
जव इह गौरि अराधन जाओव
विधवा जन घर राखी ॥१२॥

एत कहि सबहु चललि निज मंदिर
जोगी चरन प्रणाम।
विद्यपति कह नटबर सेखर
साधि चलल मन काम ॥१४॥

७,८—पूजा के बहुत से मन्त्र-तन्त्र हैं, हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा – तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा—तुम इसे बीजमात्र दो--झाड़-फूँक कर दो। ९—पइसल = प्रवेश किया। ११—सयँ = से। १२--जब यह गौरी की अराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख लेना—विधवा इसके साथ न जाय। [बेचारी सास विधवा थी, अत. बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा। होगी] १४—मनकाम = मन.कामना, इच्छा।

(१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरपि ऐसे पुकारि।
अरुन बसन पेन्हि जटिल वेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ॥ २ ॥

सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर वधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मंदिर लइ गेल ॥ ४ ॥

देवदेयासिनि कान।
जटिला वचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ वयान ॥ ६ ॥

कह तब अतनु देव इथे पाओल
हृदि-मधि पइसल काल।

१—देवदेयासिनि = वह स्त्री जो झाड-फूँक करती है। आओल=आई। नगरहि = नगर में। २—अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिल = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकते = आश्चर्यित। ४—वधुक = वधू की, पतोहू की। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही तरह की। लइ गेल = (श्री कृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि = चन्द्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट हो। एक-दीठि = एकटक। वयान=मुख। ७—अतनु देव = कामदेव। इथे = इसे। हृदि-मधि = हृदय में। पइसल=प्रवेश किया।

निरजन होइ मंत्र जत्र झाड़िए
तब इह होएब भाल ॥८॥
एत सुनि जटिला घर दोहे लेअत्र
निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल वाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ॥१०॥
बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब से हो देवा।
देवदेवासिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझब केबा ॥१२॥
जटिला बहुत भकति करि हरखित
कतक भीख आनि देल।
कह कविसेखर भीख लिए तब
से हो देयासिनो गेल ॥१४॥

८—निरजन=एकान्त में। झाड़िये=झाड-फूंक करूँ। इह=यह। भाल=अच्छी, ६—एत=सा। जटिला=सास। घर दोहे लेअब=दोनो को घर में ले आई। ठाम=जगह। ११—निकसल=निकल गई। बइसउ=बैठी। मनकाम=मनःकामना, इच्छा ११—भागल=भाग गया। से हो=वह। १२ केबा=किसने अर्थात् किसीने नहीं। १३—भकति=भक्ति। कतक=कितना (बहुत)। आनि देल=ला दिया। १४—गेल=गई।

''कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता है।'

(१६३)

वर नागर साजइ नागरि वेसा।

मुकुट उतारि सीमंत सँवारल

वेनी विरचित केसा ॥ २ ॥

चंदन धोइ सिंदुर भाल रंजल

लोचन अंजन अंका।

कुंडल खोलि कर्नफूल पहिरल

भरि तनु केसर-पंका ॥ ४ ॥

वेसर खचित सतेसरि पहिरल

चूरि कनक कर कंजे।

चरन-कमल पास जावक रंजन

तापर मंजिर गंजे ॥ ६ ॥

कुंचुकि मोंभि कदम्ब-कुसुम भरि

आरम्भन कुच आभा।

अरुनाम्बर वर सारी पहिरल

वस्त्र बिलोकन सोभा ॥ ८ ॥

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे हैं। २—सीमंत= माँग। विरचित=बनाया। ३—रंजल=अनुरंजित करते हैं, लगाते हैं। अंका=रेखा। ४—केसर पंका=केशर का लेप। —चूरि कनक कर कंजे=कमल-रूपी हाथ में सोने की चूड़ी। —जावक=महावर। गंजे=गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर आभायुक्त उभड़ते हुए कुच बनाये। ८—अरुना म्बर=लाल कपड़ा।

धरि परिबादिन स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने।
पहिलहि बाम चरण तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन भाने ॥१०॥
ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठारि।
कर धरि यंत्र तंत्र सँवारत
को इह लखइ न पारि ॥१२॥
राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भइ गेल साधा।
ए नव यौवनि नबिन बिदेसिनि
आओ पुकारइ राधा ॥१४॥
सुनइत स्याम हरखि चित आओल
रठि धनि आदर देल।
बाँह पकड़ि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ॥१६॥

—परिबादिनि=वीणा। पयान=जाना। १०—पहले बायाँ पैर बढ़ाना क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है। ११—एकलि=अकेली। १२—कर=हाथ। यंत्र=वीणा। तंत्र=तार। को इह=कोई भी। लखइ न पारि=देख नहीं सकती। १३—राइक=राधा के। साधा=इच्छा। १५—धनि=वाला। १६—बाँह=हाथ। कत कत=कितना।

× × ×

जबहि बजाओल बीन सुमाधुरि
रीझि देहल मनि-माल।
अइसे बजावए हमर जतरिया
मोहन जंत्र रसाल ॥२०॥

नाम गाम कह कुल अवलम्बन
व्रज आगम किए काजा।
सुखमइ नाम, मथुरापुर जदुकुल
गुनीजन पीड़इ राजा ॥२२॥

धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
मॉगह मानस जोय।
मनोरथ कमें जाँचलि जदि सुन्दरि
मान रतन देह मोय ॥२४॥

हॅसि मुख मोड़ि पीठि देइ बइसल
कान्ह कपल धनि कोर।
टूटल मन बढ़ल कत कौतुक
भूपति के करु ओर ॥२६॥

१६—देहल=दिया। २०—बजावए=बजाता है। जंतरिया=वीणा बजानेवाला। यंत्र=वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयी है, गाव मथुरा, कुल यदुवश, वहां के राजा गुणियो को पीड़ा देते हैं, इसलिये आई हूं। २३—मानस=हृदय। —मान रतन=मान रूपी रत्न। देह=दो। २५—कोर=गोद। २६—भूपति=शिवसिंह।

विदग्ध-विलास

(१६४)

आजुक लाज तोहे कि कहब माई।
जल देह धोइ जदि तबहु न जाई ॥ २ ॥

नहाइ उठल हम कालिंदी तीर।
अगहि लागल पातल चीर ॥ ४ ॥

तै वेकत भेल सकल सरीर
तहि उपनीत समुख जदुबीर ॥ ६ ॥

विपुल नितम्ब अति वेकत भेल।
पालटि तापर कुंतल देल ॥ ८ ॥

उरज उपर जब देहल दीठ।
उर मोरि बैसल हरि करि पीठ ॥१०॥

हँसि मुख मोड़ए ढीठ कन्हाई।
तनु-तनु झँपइते झाँपल न जाई ॥१२॥

विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
पुनु काहे पलटि न पैसलि पानि ॥१४।

१— आजुक=आज का। माई=अरी दैया २—जल देइ=जल से। ३—नहाइ=स्नान कर। ४—पतली सारी शरीर से सट गई। ५—तै=इससे रोकत=व्यक्त, प्रकट। ६—तहि=वहीं। उपनीत=बैठा हुआ। जदुबीर=कृष्ण ७,८ पालटि=उलट-कर। तापर=उसपर। कुंतल=केश। ९—देहल दीठ=(श्रीकृष्ण ने) दृष्टि डाली। १०—मोरि=मुडकर। बइसइ =मैं बैठ गई। हरि पीठ करि=कृष्ण की ओर पीठ करके १२—तनु तनु=अग। अग। १४—पुन लौटकर पानी में क्यों न पैठ गई ?

(१६५)

हम अबला सखि किये गुन जान ।

से रसमय तनु रसिक सुजान ॥ २ ॥

कतहु जतन मोर कोर वइसाई ।

बाँधल वेनि से कबरि खसाई ॥ ४ ॥

कंचुक देल हृदय पर मोर ।

परसि पयोधर भै गेल भोर ॥ ६ ॥

कंठ पहिराओल मनिमय हार ।

अंग बिलेपल कुंकुम भार ॥ ८ ॥

वसन पेन्हाओल कए कत छंद ।

किंकिन जालहि नीवि निबंध ॥१०॥

निज कर-पल्लव मकु मुख माज ।

नयनहि कएल सु काजर साज ॥१२॥

अलक तिलक दए चोलि निहारि ।

कह कविसेखर जाँओ बलिहारि ॥१४॥

१—किये गुन जान=क्या गुन जानने वई । से=वह । ३—कतहु=कितने । मोर=मुझे । कोर वइसाइ=गोद में बिठला कर । ४—कवरि=केश । खसाई=खोलकर । ५ कंचुक=चोली । ६—परसि—स्पर्शकर, छूकर । पयोधर=कुच । भोर=बेसुध । ८—विलेपल=लेप किया । कुंकुम=केसर । ९—पेन्हाओल=पहनाया । कए कत छंद=कितने छल करके । १०—किंकिनि जाल=करधनी । नीवि निबंध=नीवी को बांधा । १२ माज=माँजना। पोछना । १३—अलक तिलक=महावर और टीका । चोली,=कंचुकी ।

(१६६)

ए धनि रंगिनि कि कहब तोय।
आ क कौतुक कहल न होय ॥२॥
एक ल सुतल छलि कुसुम सयान।
मनमथ कर-धनुवान ॥४॥
नूपुर झुन-झुन आओल कान।
कौतुक मुँदि हम रहल नयान ॥६॥
आओल कान्हु बइसल मझुपास।
पास मोड़ि हम लुका-ओल हास ॥८॥
कुतल कुसुमदाम हरि लेल।
वरिहा माल पुनहि मोहि देल ॥१०॥
नासा मोतिम गोमक हार।
जतने उतारल कत परकार ॥१२॥
कुंचुकि फुगइत पहु भेल भोर।
जागल मनमथ बांधल चोर ॥१४॥
कवि विद्यापति एह रस भान।
तुहु रसिका पहु रसिक सुजान ॥१६॥

१—रगिनि=सुरसिका। ३—एकली=अकेली। सुतल छलि=सोई थी। कुसुम सयान=पुष्पशय्या पर। ४—मनमथ=कामदेव। कर=हाथ। ५—आओल=आया। ७—बइसल=बैठा। मझु=मेरे। ८—मुँह फेरकर मैंने अपनी हँसी छिपाई। कुतल=केश। कुसुमदाम=फूल की माला। हरि लेल=हर लिया, उतार लिया। १०—बरिहा=मयूर की पूँछ। ११—गोमक=गले

(१६७)

हरि धरि हार चऔंकि परु राधा।
आध माधव कर गिम रहु आधा॥२॥
कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी।
हरि हँसि रहल वदन-विधु हेरी॥४॥
मधुरिम हास गुपुत नहि भेला।
तखने सुमुखि-मुख चुम्बन देला॥६॥
करु धरु कुच, आकुल भेलि नारी।
निरखि अधर-मधु पिबए मुरारी॥८॥
चिकुर-चमर झरु कुसुमक धारा।
पिबि कहु तम जनि वम नव तारा॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि वानी।
हरि हँसि मिलति राधिका रानी॥१२॥

का। १३—फुगइत=खोलते। पहु=प्रीतम। भोर=बेसुध। १५—भान=कहते हैं।

१, २—राधिका सोई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया। राधिका चौंक पड़ी। हार टूट गया। आधा हार कृष्ण के हाथ मे रहा और आधा राधिका के गले में। ३—कपट कोप=झूठमूठ का क्रोध। दिठि धरु फेरी=आँखें फेर लीं। ४—वदन विधु=मुखचन्द्र। हेरी=देखना। ५, ६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया। ८—अधर=नीचे का ओष्ठ। ९—चिकुर=केश। १०—मानों अंधकार तारे को निगलकर पुन उसे उगल रहा हो।

(१६८)

सासु सुतल छलि कोर अगोर ।

तहि अति ढीठ पीठ रहु चोर ॥ २ ॥

कत कर आखर कहब बुझाई ।

आजुक चातुरि कहल कि जाई ॥ ४ ॥

नहि कर आरति ए अबुझ नाह ।

अब नहि होएत वचन निरबाह ॥ ६ ॥

पीठ आलिंगन कत सुख पाब ।

पानिक पियास दूध किए जाब ॥ ८ ॥

कत मुख मोरि अधर रसलेल ।

कत निसबद कए कुच कर देल ॥१०॥

समुख न जाए सघन निसोआस ।

किए कारन भेल दसन विकास ॥१२॥

जागल सास चलल तब कान ।

न पूरल आस विद्यापति भान ॥१४॥

१--सुतल छलि=सोई थी। कोर अगोर=अपनी गोद में लेकर। २--तहि=वहाँ भी। ३--शब्दों में इसे कहाँ तक समझा कर कहूं। ४--कहब की जाई=क्या कहा जाता है? ५--आरति=आतुरता, शीघ्रता। नाह=प्रीतम। ७, ८--मेरी पीठ के आलिंगन से उन्हें क्या सुख मिला--पानी की प्यास कहीं दूध से जाती है। ९--मोरि=मोड़कर। १०--निसबद कए=निःशब्द होकर, चुपचाप। ११--निसोआस=निश्वास, सांस। ऊँची सांस सम्मुख नहीं छोड़ता कि कहीं उस सांस के स्पर्श से मेरी सास न

(१६६)

कि कहब हे सखि आजुक रंग ।
सपन हि सूतल कुपुरुष सग ॥ २ ॥
बड़ सुपुरुष बलि आओल धाई ।
सूति रहल ऑचर झँपाई ॥ ४ ॥
कॉचलि खोलि आलिगन देल ।
मोहे जगाए आपु निद गेल ॥ ६ ॥
हे बिहि हे बिहि बड़ दुख देल ।
से दुख रे सखि अबहु न गेल ॥ ८ ॥
भनए विद्यापति इस रस बंद ।
भेक कि जान कुसुम-मकरंद ॥१०॥

जग जाय। १२—न मालूम क्यों, उसी समय दांत चमक उठे
१३—कान=कृष्ण। १३—न पूरल आस = आशा नहीं पूरी हुई।

१—रग=रस वार्त्ता। २—आज मैं स्वप्न में—भ्रम आकर—कुपुरुष के साथ सोई। ३—बलि=समझकर। आओल धाइ—दौड़कर आई ऑचर झँपाई=अंचल से ढककर। ५—काँचलि=चोली। आलिगन देल=छाती से लगाया। ६—मुझे जगाकर पुनः आप सो रहा। ७—बिहि=ब्रह्मा। ६—रस बद=रस की विचित्रता। १०—भेक=मेढक, बेंग। कि=क्या। कुसुम-मकरद=फूल का पराग।

———

"भ्रमरहिता सा कचवत्स्त्रीणा कुचवच्च सरसहिता।
लसदक्षरपीयुषाधरवरकविता महात्मना जीयात॥"

(१७०)

आकुल चिकुर वेढ़लि मुख सोभ।
राहु कपल ससि मडल लोभ ॥२॥
वड़ अपरुव दुइ चेतन मिलि।
विपरित रति कामिनि कर केलि ॥४॥
कुच विपरीत विलम्बित हार।
कनक कलस वम दूधक धार ॥६॥
पिय मुख सुमुखि चूम तजि ओज।
चाँद अधोमुख पिवए सरोज ॥८॥
किंकिन रटत नितम्बिनि छाज।
मदन-महारथ बाजन बाज ॥१०॥
फूजल चिकुर माल धरु रग।
जनि जमुना मिलु गंगतरग ॥१२॥
वदन सोहाओन स्रम-जल विन्दु।
मदन मोति लए पूजल इन्दु ॥१४॥
भनइ विद्यापति रसमय वानी।
नागरि रम पिय-अभिमत जानी ॥१६॥

१—आकुल=व्यग्र, चंचल, छिटके हुए। चिकुर=केश। वेढलि=घेर लिया। ३—दुइ चेतन=दो चतुर (राधा-कृष्ण)। ५—विलम्बित=लटका हुआ। ६—वम=वमन करता है, उगलता है। ७—ओज = (यहाँ) लाज। ६—रटत=बजती हुई। नितम्बिनि=स्त्री। छाज=शोभती है। ११—फूजल=खुले हुए। १६ रम=रमती है। अभिमत=इच्छा।

(१७१)

विगलित चिकुर मिलित मुखमण्डल
चाँद बेढ़ल घनमाला ।
मनिमय कुंडल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक बहि गेला ॥२॥
सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल-दाता ।
रति-बिपरीत समर जदि राखवि
कि करब हरि हर-धाता ॥४॥
किंकिन किनिकिनि कंकन कनकन
घनघन नूपुर बाजे ।
रति-रन मदन पराभव मानल
जय-जय डिमडिम बाजे ॥६॥
तिल एक जघन सघन रव करइत
होअल सैनक भंग ।
विद्यापति कबि इ रस गाअए
जामुन मिलली गंग ॥८॥

१--विगलित=बिखरे हुए। घनमाल=मेघसमूह। २--स्रवन=कान। दुलित=डोलता हुआ। ४—समर युद्ध। राखवि=रक्षा करोगो। धाता=ब्रह्मा। ६ – आज रति। युद्ध में कामदेव हार गया है, उसीकी-जय भेरी बज रही है। ७—तिल एक=एक क्षण के लिये सघन जघन=पुष्ट जांघ। रव=शब्द। होअल=हो गया ८ — जामुन=जमुना।

(१७२)

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर।
सपन कि परतेख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥ २ ॥
तड़ित-लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ु तारा।४॥
अम्बर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले।
खरतर वेग समीरन संचरु
चंचरिगन करु रोले ॥ ६ ॥
प्रलय पयोधि-जले तन झाँपल
इ नहि जुग अवसान।
के विपरीत कथा पतिआयत
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—किछु नहि फूर=कहने की स्फूर्ति नहीं होती। २—परतेख=प्रत्यक्ष। किए=क्या। नियरे=निकट। ३—तडित लता=बिजुली (राधा)। तल=नीचे। जलद=मेघ (कृष्ण)। आँतर=बीच में। सुरसरि धारा=गंगा (हार)। ४—तरल तिमिर=चपल अंधकार (केश)। ससि=चंद्रमा (मुख)। सूर=सूर्य (सिन्दूर-बिन्दु)। खसि=पड़ु=गिर पड़े। तारा=नक्षत्र (माथे पर के फूल)। ५—अम्बर=(१) आकाश (२) वस्त्र।

(१७३)

दुहुक संजुत चिकुर फूजल।
दुहुक दुहू बलाबल बूझल ॥ २ ॥
दुहुक अधर दसन लागल।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥ ४ ॥
दुअओ अधर करए पान।
दुहुक कंठ आलिंगन दान ॥६॥
दुअओ केलि सयँ मयँ भेलि।
सुरत सुखे त्रिभावरि गेलि। ८ ॥
दुअओ सअन चेत न चीर।
दुअओ पियासल पीबए नीर ॥ १० ॥
भन विद्यापति संसय गेल।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

धराधर=(१) पर्वत (२) कुच। उलटल=उलट पड़ा। धरनी=(१) पृथ्वी (२) नितम्ब। ६—खरतर=तीव्र। समीरण=(१) हवा (२) निश्वास। चचरिगन=(१) भ्रमर (२) किंकिणी आदि। रोले=शोर। ७—प्रनय-पयोधि=प्रेम का समुद्र। जुग अवसान=युग का अंत विपरीत रति का वर्णन है।

१—संजुत=साथ ही साथ। चिकुर=केश। फूजल=खुल गया। २—बलाबल=ताकत और कमजोरी। ३—अधर=नीचे का ओष्ठ। दसन=दाँत। ७—केलि=कामक्रीड। सयँ सयँ = साथ ही साथ। ८—विभावरि=रात। ९—दोनों ही शय्या पर अपने अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते। १०—पियासल=प्यासा।

वसंत

(१७४)

माघ मास सिरि पंचमी गॅजाइलि
नवम मास पंचम हरुआई।
अति घन पीड़ा दुख बड़ पाओल
वनसपति भेलि धाई हे ॥ २॥
सुभ खन वेरा सुकुल पक्ख हे
दिनकर उदित-समाई।
सोरह सम्पुन बतिस लखन सह
जनम लेल ऋतुराई हे ॥ ४॥
नाचए जुवतिजना हरखित मन
जनमल बाल मधाई हे।
मधुर महारस मङ्गल गाबए
मानिनि मान उड़ाई हे ॥ ६॥

१—सिरिपचमी=माघ शुक्ल पंचमी। गॅजाइलि=पूर्णगर्भा हुई। नवम मास=वैसाख में वसत का अंत होता है, ज्येष्ठ से माघ तक नौ महीने हुए। पंचम हरुआई=पाँचवाँ दिन होने पर। (वैद्यक के अनुसार नौ महीने पाँच दिन पर पुष्ट बालक पैदा होता है)। २—घन=अधिक। ३—खन=क्षण। वेरा=वेला, समय। सुकुल पक्ख=शुक्लपक्ष। दिनकर=सूर्य। उदित समाई=उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन=सोलह अंगों से सम्पूर्ण। वतिस लखन=बत्तिस लक्षण। ऋतुराई=वसन्त। ५—जनमल=जन्म लिया। मधाई=माधव (वसत)। ६—उड़ाई=उड़ा ले गया, नष्ट किया।

वह मलयानिल ओत उचित हे
नव घन भओ उजियारा।
माधवि फूल भेल मुकुता तुल
ते देल बन्दनवारा ॥ ८ ॥

पीअरि पाँडरि महुअरि गाबए
काहरकार धतूरा।
नागेसर--क सख धूनि पूर
तकर तान समतूरा ॥ १० ॥

मधु लए मधुकर बालक दएहलु
कमल-पंखरी-लाई।
पओनार तोरि सूत बाँधल कटि
केसर बएलि बघनाई ॥ १२ ॥

नव नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदम्बक माला।
बैसलि भमरी हरउद गाबए
चक्का चन्द निहारा ॥ १४ ॥

७—मलय पवन वह रहा है, उससे ओट करना उचित (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है ; अत नवीन मेघ छा गये। ८—मुकुता तुल=मुक्ता के समान। पीअरि पाँडरि=फूल विशेष। महुअरि=गीत विशेष। काहरकार=तुरही। तकर=उसका। समतूरा=समान। ११—(जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दएहलु=ला दिया। १२—पओनार=कमनाल। कटि=कमर में। [लड़के की कमर में सूत बाँधा जाता है]। बघनाई=

कनअ केसुअ सुति-पत्र लिखिए हलु
रासि नछत कए लोला ।
कोकिल गनित-गुनित भल जानए
रितु वसत नाम थोला ॥१६॥

× × × ×

वाल वसत तरुन भए धाओल
वढ़ए सकल ससारा ॥ १८ ॥
दखिन पवन घन अंग उगारए
किसलय कुसुम-परागे ।
सुललित हार मजरि, घन कज्जल
अखितौं अंजन लागे ॥ २० ॥
नव वसंत रितु अगुसर जौवति
विद्यापति कवि गावे ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
सकल कला मनभावे ॥ २२ ।

बाघनख (लड़के को कमर में पहनाया जाता है) । १३-ओछाओल = विछाया । सिर = कदम्ब की माला सिरहाने (तकिये के रूप में) रक्खो । १४-हरउव = रचने का गीत । भमरी = भ्रमरी । १५--कनअ = सोना । केसुअ = पलाश । सुति-पत्र = जन्मपत्र । नक्षत = नक्षत्र । १६--कोकिल गणित की गणना खूब जानती थी, उसीने वसत नाम रक्खा । १८--बीच की एक पंक्ति गायब है । १९, २०-दक्षिण पवन किसलय और पुष्प-पराग लेकर उस शरीर में उबटन लगाता है । मंजरी को सुन्दर हार गूंथे हैं, मेघ ने उसकी आँखों में काजल लगा दिया ।

(१७५)

आएल रितुपति राज वसंत।
धाओल अलिकुल माधवि-पथ ॥ २ ॥
दिनकर-किरन भेल पौगंड।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ॥ ४ ॥
नृप-आसन नव पीठल पात।
कांचन कुसुम छत्र धरु माथ ॥ ६ ॥
मौलि रसाल-मुकुल भेल ताय।
समुख हि कोकिल पञ्चम गाय ॥ ८ ॥
सिखिकुल नाचत अलिकुल यंत्र।
द्विजकुल आन पढ़ आसिख मंत्र ॥ १० ॥
चन्द्रातप उडे कुसुम पराग।
मलय पवन सह भेल अनुराग ॥ १२ ॥

१—आएल = आया। २—धाओल = दौड़ा। अलिकुल = भ्रमर-समूह। माधवि-पंथ = माधवी की ओर। ३—दिनकर = सूर्य। भेल = हुआ। पौगंड = किशोरावस्था, कुछ-कुछ तीव्र। हेमदंड = सोने का डंडा, आभा। "मदन महीपति कनकदंड रुचि केसर-कुसुमविकास—गीतगोविन्द।" ५—पीठल = वृक्ष-विशेष, पिठवा। पात = पत्ता। कांचनकुसुम = चम्पा। ७—मौलि = किरीट। रसाल मुकुल = आम की मंजरी। ताय = उसके। ९—सिखि = मोर। अलिकुल यंत्र = भौंरे बाजा बजा रहे हैं। १०—द्विजकुल = (१) पक्षी (२) ब्राह्मण (पक्षी को द्विज इसलिये कहा जाता है कि उसका भी जन्म दो बार होता है, एक बार अंडे के रूप में, पुन

कुदवल्ली तरु धएल निसान ।
पाटलतून असोक-दलवान ॥१४॥

किसुक लवँग लता एक संग ।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥१६॥

सैन साजल मधु-मखिका कूल ।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥ १८ ॥

उधारल सरसिज पाओल प्रान ।
निज नव दल करु आसन दान ॥२०॥

नव वृन्दावन राज विहार ।
विद्यापति कह समयक सार ॥२१॥

पक्षी के रूप में ।)प्रान=प्राकर । आसिख मन्त्र=प्राशीर्वादात्मक श्लोक । ११—चंद्रातप=चँदोवा । फूलों के पराग ही चँदोवे से उड रहे है । १२—मलय पवन=मलयाचल से आनेवाली हवा, दक्षिण पवन । सह=साथ । कुंदवल्ली=वृक्ष विशेष । निशान=पताका । पाटल तून=पाटल के पत्ते ही तूण (तरकश] है । अशोक दलवान=अशोक के पत्ते बाण है । १५—किसुक=पलास । [धनुष के समान] लवँगलता [ताँत के समान । १६—आगे दल भंग=पहले ही सैन्य भंग हो गया । १७—कूल=कुल । १६—उधारल=उद्धार किया । पाओल=पाया । २०—दल=पत्ता ।

अर्थो गिरामपिहित: पिहितश्च कश्चित् ।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभ ॥
नान्ध्रीपयोधरइवातितरां प्रकाशो ।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढ ॥

(१७६)

नव वृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव विकसित फूल।
नवल वसंत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कूल॥ २॥
विहरइ नवलकिसोर।
कालिंदी-पुलिन कुंज वन सोभन
नव नव प्रेम-विभोर॥ ४॥
नवल रसाल-मुकुल-मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय।
नवयुवती गन चित उमताअई
नव रस कानन धाय॥ ६॥
नव जुवराज नवल वर नागरि
मीलए नव नव भाँति।
निति निति ऐसन नव नव खेलन
विद्यापति मति माति॥ ८॥

१—नव=नवीन। विकसित=खिले हुए। २—मलयानिल=मलय-पवन। मातल=पागल बना। अलिकूल=भौरे। ३—विहरइ=विहार करता है। नवल किसोर=युवक कृष्ण। ४—कालिंदी=यमुना। पुलिन=किनारे। सोभन=सुशोभित। प्रेम विभोर=प्रेम में विसुध। ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी नई कोयल गा रही है ६—उमताअई=उन्मत्त हो जाता है। ८—ऐसन=इस प्रकार का। खेलन=क्रीडा। मति=मत्त बनी।

(१७७)

लता तरुअर मंडप जीति ।
निरमल ससधर धवलिए भीति ॥ २ ॥
पउँअ नाल अइपन भल भेल ।
रात परीहन पल्लव देल ॥ ४ ॥
देखह माइ हे मन चित लाय ।
वसन्त-बिवाहा कानन-थलि आय ॥ ६ ॥
मधुकरि-रमनी मंगल गाव ।
दुजबर कोकिल मत्र पढाव ॥ ८ ॥
करु मकरंद हथोदक नीर ।
विधु वरआती धीर समीर ॥ १० ॥
कनअ किसुक सुति तोरन तूल ।
लावा बिथरल बेलिक फूल ॥ १२ ॥
केसर कुसुम करु सिंदूर दान ।
जओतुक पाओल मानिन मान ॥ १४ ॥
खेलए कौतुक नव पँचबान ।
विद्यापति कवि दृढ़ कए भान ॥ १६ ॥

१—लता ओर वृक्ष ने मानो मंडप को जीत लिया—लता और वृक्ष ही मंडप है । २—निरमल = स्वच्छ । ससधर—चद्रमा । धवलिए = उज्जवल कर दिया (चूना पोत दिया) । भीति—दीवार । ३—पउँअ नाल=पद्मनाल, कमल का नाल । अइपन=अरिपन (जमीन पर का मांगलिक चित्र) । ४—रात=लाल । परीहन=परिधान, वस्त्र । ५-माइ हे = अरी मैया । ६-कानन थलि=वनस्थली । ७-मधुकरि-रमनी=

(१७८)

नाचहु रे तरुनी तजहु लाज।
आएल वसन्त रितु वनिक राज॥ २॥
हस्तिनि, चित्रिनि, पदुमिनि नारि।
गोरी सामरी एक बूढ़ि बारि॥ ४॥
विविध भाँति कएलन्हि सिगार।
पहिरल पटोर गृम भूल हार॥ ६॥
केओ अगर चंदन घसि भट कटोर।
ककरहु खोइँछा करपुर तमोर॥ ८॥
केओ कुमकुम मरदाव आँग।
ककरहु मोतिअ भल छाज माँग॥ १०॥

गौरी रूप स्त्री। ८—दुजबर=द्विज, श्रेष्ठ। ६—हथोदक=हस्तोदक, जो पानी हाथ में लेकर विवाह का संकल्प पढ़ा जाता है। १०—शिव= चद्रमा। समीर=पवन। ११—कनग्र=सोना। तोरन तुन=तोरन के समान। १२—लावा=शादी के समय धान का लावा (खील) छीटा जाता है। —१४जओतुक=दहेज।

२—वनिक-राज=व्यापारी-श्रेष्ठ। ४— बारि=बाला, नवयुवती। ६—पटोर=रेशमी वस्त्र। गृम=गले में ७—घसि=घिसकर। ८—ककरहु=किसी के। करपुर=कपूर। तमोर=पान। ६— कुमकुम=केशर। मरदाव=मर्दन कराती है। मलवाती है। १०— मोतिय=मोती। छाज=शोभता है। माँग=सीँय, सीमत।

Poets are long-lived race than heroes; they breathe more of the air of immortality-Hazlitt

(१७६)

अभिनव पल्लव बइसक देल।
धवल कमल फुल पुरहर भेल ॥२॥
करु मकरंद मंदाकिनि पानि।
अरुन असोग दीप दहु आनि ॥४॥
माइ हे आज दिवस पुनमंत।
करिए चुमाओन राय वसत ॥६॥
सपुन सुधानिधि दधि भल गेल।
भमि भमि भमरि हँकारइ देल ॥८॥
टेसु कुसुम सिंदुर सम भास।
केतिक-धुलि विथरहु पटवास ॥१०॥
भनइ विद्यापति कविकंठहार
रस वुझ सिवसिंघ सिव अवतार ॥१२॥

१—अभिनव=नवीन। बइसक=बैठने के लिये। २—धवल=स्वच्छ। पुरहर=व्याह की डाली, मांगलिक कलश जो चूने से पुता रहता है। ३—मकरंद=पुष्परस। मंदाकिनी-पानि=गंगा का पानी। ४—अरुण=लाल। असोग=अशोक। दीप=दीपक। दहु आनि=ला दिया। ५—पुनमं=पुण्यमय शुभ। ६—वसंत रूपी दुलहे का चुमाओन करो, चूमो। ७—सपुन=सम्पूर्ण, पूर्ण। सुधानिधि=चंद्र। दधि भेल=दही बना। ८—भमि=भ्रमण कर। भमरि=भ्रमरी, भौंरी। हँकारइ देल=बुलावा दे आई। ९—टेसू=पलास। कुसुम=फूल। भास=मालूम होता है। १०—धूल=पराग। वियरहु=बिखेर दिया है। पटवास=रेशमी वस्त्र। मांगलिक धागा।

दखिन पवन वह दस दिस रोल ।
से जनि वादी भाषा बोल ॥२॥
मनमथ कों साधन नहि आन ।
निरसाएल से मानिनि मान ॥४॥
माइ हे सीत-वसंत विवाद ।
कओन विचारब जय-अवसाद ॥६॥
दुहु दिस मधथ दिवाकर भेल ।
दुजवर कोकिल साखी देल ॥७॥
नव पल्लव जयपत्रक भाँति ।
मधुकर माला आखर-पाँति ॥१०॥
बादी तह प्रतिवादी भीत ।
सिसिर-बिन्दु हो अन्तर सीव ॥१२॥
कुंद कुसुम अनुपम विकसल ।
सतत जीत वेकताओ बसत ॥१४॥
विद्यापति कवि एहो रस भाव ।
राजा सिवसिंघ एहो रस जान ॥१६॥

१—रोल=शोर करता हुआ । ४—निरसाएल=नीरस कर दिया । ६—जय अवसाद=जीत और हार । ७—मधथ=मध्यस्थ । ८—दुजवर=(१) द्विज श्रेष्ठ (२) पक्षी श्रेष्ठ ६, १०—नये पल्लव जय-
त्र (जिस पर फैसला लिखा जाय) है और भौंरो के समूह अक्षरो की
ंतियाँ है । ११,१२—मुद्दई (वसत) से मुद्दालह डर गया और शीत
ग शिर की ओस-बूँद मे जा रहा । १४—वेकत ओ=प्रकट किया ।

(१८१)

अभिनव कोमल सुन्दर पात।
सबारे बने जनि पहिरल रात ॥२॥
मलय-पवन डोलय बहु भाँति।
अपन कुसुम रस अपने माति ॥४॥
देखि देखि माधव मन हुलसंत।
बिरिदावन भेल बेकत बसंत ॥६॥
कोकिल बोलय साहर भार।
मदन पाओल जग नव अधिकार ॥८॥
पाइक मधुकर कर मधु पान।
भमि-भमि जोहए मानिनि-मान ॥१०॥
दिसि दिसि से भमि विपिन निहारि।
रास बुझाबए मुदित मुरारि ॥१२॥
भनइ विद्यापति ई रस गाव।
राधा-माधव अभिनव भाव ॥१४॥

१—अभिनव=नवीन । पात=पत्ते । २—सबारे=सम्पूर्ण। रात=लाल (वस्त्र)। मानो समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया हो। ३—डोलए=वह रहा है। ४—माति=मत्त होकर। फूल अपने रस में आप ही पागल हैं। ५—हुलसंत=हुलसित हुआ। ६—बेकत भेल=प्रकट हुआ। ७—साहर=आम्रमंजरी। ८—मदन=कामदेव। ९—पाइक=पायक, दूत। मधुकर=भौंरा। १०—भमि-भमि=भ्रमण कर। जोहए=खोजता है। ११—विपिन=वन। निहारि=देखकर। १२—प्रसन्नचित्त कृष्ण रासलीला कर रहे हैं।

(१८२)

चल देखए जाऊ रितु वसंत।
जहां कुंद-कुसुम केतकि हसत॥ २॥

जहां चंदा निरमल भमर कार।
जहां रयनि उजागर दिन अँधार॥ ४॥

जहां मुगुधलि मानिनि करए मान।
परिपंथिहि पेखए पंचबान॥ ६॥

भनइ सरस कवि-कंठ-हार।
मधुसूदन राधा वन विहार॥ ८॥

(१८३)

मधुरितु मधुकर पाँति। मधुर कुसुम मधुमाति॥
मधुर वृंदावन मांझ। मधुर मधुर रसराज॥
मधुर जुवति जन संग। मधुर मधुर रसरंग॥
मधुर मृदंग रसाल। मधुर मधुर करताल॥
मधुर नटन-गति भंग। मधुर नटनी नट संग॥
मधुर मधुर रस गान। मधुर विद्यापति भान॥

३—निरमल=स्वच्छ। भमर=भ्रमर, भौंरा। कार=काला। ४—जहाँ रात उजली-प्रकाशमय (फूलों और चन्द्र के कारण) औरदिन अंधकार पूर्ण (भौंरों और गुल्म-लताओं के कारण)। ६—परिपंथिहि=पथिकों को, विरोधियों को। पेखय=देखता है। पंचवान=कामदेव।

मधुरितु=वसंत। मधुकर=भौंरा। मधुमाति=मधु से मत्त। माझ=में। रसराज=शृंगार। मधुर नृत्य का गति-भंग (भावभंगी) और मधुर नाचनेवाली के साथ (मधुर) नट का (मधुर) संग।

(१८४)

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति कलावति माति श्याम संग
कर करताल प्रबन्धक ध्वनिया ॥२॥

डम डम डफ डिमिक डिम मादल
रुनु झुनु मंजीर बोल।
किंकिनि रनरनि वलआ कनकनि
निधुवन रास तुमुल उतरोल ॥४॥

वीन, रवाब, मुरज स्वरमंडल
सा रि ग म प ध नि सा बहु निधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदंग गरजनि
चचल स्वरमंडल करु राव ॥६॥

स्रम भर गलित लुलित कवरीयुत
मालति माल बिथारल मोति।
समय वसंत रास-रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ॥८॥

२—नटति=नाच रही है। माति=मत्त होकर। ध्वनिया=आवाज। ३—मादल=एक बाजा। ४—वलआ=कंगना। निधुवन""=निधवन में रासलीला जोश के साथ हो रही है। ५—रबाब=सारंगी के ढंग का एक बाजा। स्वरमंडल=वीणा का एक भेद। ६—राव=स्वर। ७—परिश्रम के कारण पसीना चल रहा है, केश चचल हो इधर-उधर छिटके हैं और मालती की माला मोती बिखेर रही है। ८—छोभित=क्षोभित, चंचल।

(१८५)

रितुपति-राति रसिक रसराज ।
रसमय रास रभस रस माँझ ॥२॥
रसमति रमनि-रतन धनि राहि ।
रास रसिक सह रस अवगाहि ॥४॥
रंगिनि गन सब रंगहि नटई ।
रनरनि कंकन किंकिन रटई ॥६॥
रहि-रहि राग रचय रसवंत ।
रतिरत रागिनि रमन बसंत ॥८॥
रटति रबाब महतिक पिनास ।
राधारमन करु मुरलि बिलास ॥१०॥
रसमय विद्यापति कवि भान ।
रूपनारायन भूपति जान ॥१२॥

(१८६)

मलय पवन बह । बसंत बिजय कह ॥
भमर करइ रोर । परिमल नहि ओर ॥
रितुपति रँग देला । हृदय रभस भेला ॥
अनंग मंगल मेलि । कामिनि करथु केलि ॥
तरुन तरुनि संगे । रयनि खेपवि रगे ॥
विहरि विपदि लागि । केसु उपजल आगि ॥
कवि विद्यापति भान । मानिनी जीवन जान ॥
नृप रुद्रसिंह बरु । मेदिनि कलपतरु ॥

महतिक = बड़ी वीणा । पिनास = एक वाद्ययंत्र । खेपवि = बितायेगा ।

विरह

(१८७)

सखि हे बालम जितब बिदेस।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेस ॥ २॥
ई न बिदेसक वेलि।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तें तोहे पिया लग मेलि ॥४॥
किछु दिन करथु निबास।
हम पूजल जे सेहे पए भुंजब
राखथु पर उपहास ॥६॥
होयताह किए वध-भागी।
जेहि खन हुन मन जाएब चितब
हमहु मरब धसि आगी ॥८॥
विद्यपति कवि भान।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥१०॥

१—जितब=जीतगे। (अपशकुन समझकर 'जायेंगे' ऐसा नहीं कहती)। २—तोहहुं=तुम भी। हुनि=उनको) ३—वेलि=वेला, समय। ४—अनुमापब=समझेंगे। तें ताहे पिया लग मेलि=इसी लिये तुम्हें प्रीतम के निकट भेज रही हूं। ५—करथु=करे। ६—जैसी पूजा (काम) की होगी, वैसा फल मैं भ गूंगी, वे मुझे केवल-दूसरे की निंदा से बचा लें। ७—होएताह=होवेंगे। किये=क्यों। वध भागी=हत्या का भागी ८—जाएब चितव= जाने की सोचेंगे।

(१८८)

माधव, तोहें जनु जाह विदेस।
हमरा रंग रभस लए जएबह
लएबह कोन सँदेस ॥२॥
बनहि गमन करु होएति दोसर मति
बिसरि जाएब पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब
फेरि माँगब पहु तोरा ॥४॥
जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा।
एकहि नगर बसि पहु भेल परबस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥
पहु सँग कामिनि बहुत सोहागिनि
चंद्र निकट जइसे तारा।
भनइ बिद्यापति सुनु बर जौबति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाहु=मत जाओ। २—रंग रभस=आमोद प्रमोद। ३—मोरा बिसरि जायब=मुझे भूल जाओगे। ५—नीर=आँसू। पहु ओरा=प्रीतम की ओर। ६—पुरत=पूरा होगा। ८—सारा=(यहाँ) धैर्य।

"सत्सूत्रसविधान सदलंकार सुवृत्तमच्छिद्रम्।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्य माल्यमर्घ्यं च॥"

(१८९)

कालि कहल पिया ए साँझहि रे
जाएब मोयँ मारुअ देस।
मोयँ अभागलि नहि जानलि रे
सँग जइतओं जोगिन बेस ॥२॥
हृदय मोर बड़ दारुन रे
पिया बिनु बिहरि न जाए ॥३॥

× × × ×

एक सयन सखि सूतल रे
आछल बालम निसि मोर।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
बिछुरल चकेवा जोर ॥५॥
सून सेज हिय सालए रे
पिया बिनु घर मोयँ आजि।
विनति करओं सहलोलिनि रे
मोहि देह अगिहर साजि ॥७॥
विद्यापति कवि गाओल रे
आवि मिलत पिय तोर।
लखिमा देइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहिं भोर ॥८॥

१—मारुअ = मथुरा। २—जइतओ = जाती। ३—दारुन = कठोर। विहरि = फट, जाना। ४—अछल = था। जोर = जोड़ा। ६—सालए = पीड़ा देती है। ७—सहलोलिनि = सहेली। मोहि ... = मुझे अग्निचिता साज दो, जिसमें जल जाऊँ।

(१९०)

मधुपुर मोहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती ।
गोपी सकल बिसरलनि रे
जत छल अहिवाती ।।२।।
सूतलि छलहुँ अपन गृह रे
निन्दइ गेलउँ सपनाई ।
करसौं छुटल परसमनि रे
कोन गेल अपनाइ ।।४।।
कत कहवो कत सुमिरब रे
हम भरिए गरानि ।
आनक धन सों धनवंती रे
कुबजा भेल रानि ।।६।।

१—मधुपुर=मथुरा । गेल=गया । मोरा=मेरा । बिहरत=फटती है । २—बिसरलनि—विस्मरण हो गये, भूल गये । जत=जितनी । छल=थीं । अहिवाती=सौभाग्यवती । ३—सूतलि=सोई । छलहुँ=(मैं) थी । अपन=अपने । निन्दइ गेलउँ सपनाइ=नींद में स्वप्न देखने लगी । ४—कर=हाथ छूटल=छूट गया । परसमनि=स्पर्शमणि, पारस । कोन—कौन । गेल अपनाइ=अपना गया । ५—कत=कितना । कहवो=कहूँगी । सुमिरब=स्मरण करूँगी । भरिए गरानि=ग्लानि से भर गई हूँ । ६—आनक=दूसरे का । सो=से । भेल=हुई ।

गोकुल चान चकोरल रे
चोरी गेल चंदा।
बिछुड़ि चललि दुहु जोड़ी रे
जीब दइ गेल धंदा ॥८॥
काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड भोजन देव रे
भरि कनक कटोरा ॥१२॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धर नारी।
गोकुल होयत सोहाओन रे
फेरि मिलत मुरारी ॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर वन गया-जो यहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार-हजार गोपियां चकोरी की तरह देखती थीं-वही आज स्वयं चकोर बनकर दूसरी को—कुब्जा को देख रहा है। हा! मेरा चन्द्र चोरी चला गया। ८—विछुड़ि=बिछुड़कर। चललि=चली। दुहु जोडी=दोनों (राधा-कृष्ण) की जोडी। जीव दइ गेल धंदा=प्राणों में सन्देह दे गया। ६ काक=काग, कौआ। भाख=बोली। भाखह=बोलो। पहु=प्रीतम। आओत=आयेगा। १०—खीर=दूध। देव=दूँगी। कनक=सोना। १२—सोहाओन=शोभायमान।

"सुधासितरसास्वादवद्धरोमाञ्चकञ्चुका।
विनापि कामिनीसंगं कथय: सुखमाप्यते॥"

(१९१)

सरसिज बिनु सर सर बिनु सरसिज
की सरसिज बिनु सूरे।
जौवन बिनु तन तन बिनु जौवन
की जौवन पिय दूरे ॥२॥
सखि हे मोर बड़ दैव विरोधी।
मदन वेदन दइ पिया मोर बोलछड़
अबहु देहे परबोधी ॥ ४ ॥
चौदिस भमर भम कुसुम-कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीवइ।
मद पवन चल पिक कुहु-कुहु कह
सुनि बिरहिनि कइसे जीवइ ॥६॥
सिनेह अछल जत हम भेव न टूटत
बड़ बोल जत सब थीर।
अइसन के बोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिध नीर ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुनगाहक पिया तोरा।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सहजे एको नहि भोरा ॥ १० ॥

१—की=क्या ? सूरे=सूर्य। ४—बोलछड=प्रतिज्ञाभंग करनेवाला। देहे=देती हो। ५—भमर भम=भौंरे भ्रमण कर रहे हैं। ७—अछल=था। भेव=समझना। बड बोल जत सब

(१९२)

सखि हे कतहु न देखि मधाई।
काँप शरीर थीर नहि मानस
अवधि नियर भेल आई ॥२॥
माधव मास तीथि भयो माधव
अवधि कइए पिआ गेला।
कुच-जुग संभु परसि कर बोललन्हि
तें परतीति मोहि भेला ॥ ४ ॥
मृगमद चानन परिमल कुंकुम
के बोल सीतल चंदा।
पिया बिसलेख अनल जों बरिए
विपति चिन्हिए भल मंदा ॥६॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
चित जनु झंखह आजे।
पिय बिसलेख-कलेस मेटाएत
बालम विलमि समाजे ॥ ८ ॥

थीर=बडे लोग जो कुछ कहते हैं, पक्का होता है। ८—के=कौन। सिम=सीमा।

१—मधाई—माधव, कृष्ण। २—मानस=मान। अवधि=मिलने का दिन। नियर=निकट। ३—माधव मास=वैशाख। माधव तिथि=एकादशी। गेला=गये। ४—कर=हाथ। तें=उससे। ५—के=कौन। ६—बिसलेख—बिश्लेष, विच्छेद। अनल=आग। ७—झंखह=झखना, पश्चात्ताप करना।

(१६६)

लोचन धाए फेधायल
हरि नहि आगल रे।
सिव-सिव जिवओ न जाए
आस अरुझाएल रे॥ २॥

मन करे तहाँ उड़ जाइअ
जहाँ हरि पाइअ रे।
पेम-परसमनि जानि
आनि उर लाइअ रे॥४॥

सपनहु संगम पाओल
रंग बढ़ाओल रे।
से मोरा बिहि बिघटाओल रे
निन्दओ हेराएल रे॥ ६॥

भनइ विद्यापति गाओल
धनि धइरज धर रे।
अचिरे मिलत तोहि बालम
पुरत मनोरथ रे॥ ८॥

१—धाए=दौड़कर। फेधाएल=फन सहित हो गये, फूल गये। २ जिवओ=प्राण भी। अरुझाएल=उलझ पड़ें हैं। ३—मन करे=इच्छा होती है। ४—उर लाइअ=छाती से लगा लूँ। ५—संगम=मिलन, भेंट। पाओल=पाया। ६—बिहि=ब्रह्मा। बिघटाओल=नष्ट किया। निन्दओ हेराएल=नींद भूल गई, जाती रही। ८—अचिरे=शीघ्र ही पूरा होगा।

(१६४)

सखि मोर पिया ।
अबहु न आओल कुलिस-हिया ॥ २ ॥
नखर खोआओलु दिवस लिखि लिखि ।
नयन अँधाओलु पियापथ देखि ॥ ४ ॥
जब हम बाला परिहरि गेला ।
किए दोस किए गुन बुझइ न भेला ॥ ६ ॥
अब हम तरुनि बुझब रस-भास ।
हेन जन नहि मोर काहे पिआ पास ॥ ८ ॥
आएब हेन करि पिआ मोरा गेला ।
क जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन अब राइ ।
कानु समुझाइत अब चलि जाइ ॥१२॥

२—आओल=आया । कुलिस-हिया=वज्र के ऐसा कठोर-हृदय । ३--नखर= नहँ । खोआओलु=नष्ट कर दिया । प्रीतम के आने का दिन लिखते-लिखते मेरे नख घिस गये । ४—अंधाओलु=अंधा बना लिया । पियापथ=प्रीतम की राह । ५—बाला=भोली-भाली किशोरी । परिहरि गेला=छोडकर चले गये । ६—किये=क्या । बुझइ न भेला=कुछ न जान सके । ७—तरुनि=युवती । रस-भास=रस की बातें । ८—हेन=इस समय । १०--पुरबक=पूर्व का । बिसरित=विस्मरण । ११--राइ=राधा । १२--कानु=कृष्ण ।

(१९५)

आसक लता लगाओल सजनी
नयनक नीर पटाय।
से फल अब तरुनत भेल सजनी
आँचर तर न समाय॥ २॥
काँच साँच पहु देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह भान।
दिन-दिन फल तरुनत भल सजनी
अहु खन न करु गेआन॥ ४॥
सब कर पहु परदेस बसि सजनी
आयल सुमिरि सिनेह
हमर एहन पति निरदय सजनी
नहि मन बाढ़य नेह॥ ६॥
भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठि बधाव करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह॥ ८॥

१,२--सखि, आंखो की पानी से सींचकर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) जवानी में आ गया, पुष्ट हो चला, वह अंचल के नीचे नहीं समाता। ३--साच=सचमुच में। पहु=प्रीतम। तसु=उसके। कुह=कुहेसा (निराशा)। अहुखन=इस समय भी। ६--एहन=ऐसा। ७--आओत=आयेगा। गुनसाह=गुणवान्। ८--बधाब=बधैया। नाह=पति।

(१६०)

कोन गुन पहु परवस भेल सजनी
बुझलि तनिक भल मंद।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निमि चंद ॥ २ ॥
कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहि आन।
कतेक जतन सौ मेटिए सजनी
मेटए न रेख पखान ॥ ४ ॥
जे दुरजन कटु भाखए सजनी
मोर मन न होए विराम।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तज हिमधाम ॥ ६ ॥
चतओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तजए पाँन।
जे जन रतल जाहि सौ सजनी
कि करत विहि भए वाँक ॥ ८ ॥
विद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमंत।
राजा सिवसिंघ मन दए सजनी
मोदवती दइ कंत ॥ १० ॥

१–तनिक=उनका। २—मनमथ मन मथ=कामदेव मन का मथन कर रहा है। तनि=उनके। ३—दुष्ट लोग भले ही उनके

(१६१)

माधव हमर रटल दुर देस ।
केओ न कहइ सखि कुसल-सनेस ॥ ४ ॥

जुग जुग जीवथु वसथु लाख कोस ।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ॥ ४ ॥

हमर करम भेल विहि विपरीत ।
तेजलनि माधव पुरुबिल प्रीत ॥ ६ ॥

हृदयक वेदन वान समान ।
आनक दुख आन नहि जान ॥ ८ ॥

भनइ विद्यापति कवि जयराम ।
दैव लिखल परिनत फल वाम ॥१०॥

सैकड़ों अवगुण मुझसे कहें, किन्तु मेरे लिये उनके समान दूसरा कोई नहीं है। ४—पखान=पत्थर। ५—विराम=उदासीनता (कृष्ण के प्रति)। राहु पराभव=राहु द्वारा हराये जाने पर, ग्रस लिये जाने पर। हिमधाम=चन्द्रमा। ७—तरनि=सूर्य। ८—रतल=अनुरक्त। कि करत =ब्रह्मा बिमुख होकर क्या करेगा।

१—रटल=चला गया। २—केओ = कोई। सनेस=संदेश। ३—जीवथु=जीयें। वसथु=बसें। ४-हुनक = इनका। ५—विहि = ब्रह्मा। ६—तेजलनि=छोड़ दिया। पुरुबिल = पूर्व का। ७—वेदन=वेदना, दुःख। ८—आनक = दूसरे का। १०—वाम=विपरीत।

"कृतमन्दपदन्यासा विकचश्रीश्चारुशब्दभंगवती।
कस्य न कम्पयते कं जरेव जीर्णस्यसत्कवेर्वाणी"

जौवन रूप अछल दिन चारि।
से देखि आदर कएल मुरारि॥ २॥
अब भेल झाल कुसुम रस छूछ।
बारि-बिहुन सर केओ नहि पूछ॥ ४॥
हमरि ए विनती कहब सखि रोय।
सुपुरुष वचन अफल नहि होय॥ ६॥
जावे रहइ धन अपना हाथ।
तावे से आदर कर संग साथ॥ ८॥
धनिकक आदर सब तहँ होय।
निरधन बापुर पुछय न कोय॥१०॥
भनइ विद्यापति राखब सील।
जो जग जीविए नवओ निधिमील॥१२॥

१—अछल=थे। २—से=वह। कएल=किया ३—झाल=कटु, गंधहीन। रस छूछ=रस से हीन। ४—वारि-विहुन=पानी से रहित। सर=तालाब। केओ=कोई। ५—रोय=रोकर। ६—अफल=व्यर्थ। ७-जावे=जबतक। ८ तावे=तबतक। संग साथ=संगी-साथी मित्र-कुटुम्ब। ९—धनिकक=धनियों का। सब-तहँ=सर्वत्र। १०—बापुर=बेचारा। ११—सील=मर्यादा १२—यदि जग में जीवित रहो, तभी नवो निधियाँ प्राप्त हों।

poetry is at bottom a criticism of life. The greatness of a poet lies in his powerful and beautiful application of ideas to life — Mathew Arnold.

(११९)

सखि हे हमर दुखुख नहि ओर ।
इ भर बादर माह भादर
सून मंदिर मोर ॥ २ ॥

झंपि घन गर्जंति संतत
भुवन भरि बरसंतिया ।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हंतिया ॥ ४ ॥

कुलिश कत सत पात मुदित
मयूर नाचत मातिया ।
मत्त दादुर डाक डाहुक
फाटि जायत छातिया ॥ ६ ॥

तिमिर दिग भरि घोर यामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया ।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन रातिया ॥ ८ ॥

---

२ –(इस पद्य का यह चरण अत्यन्त प्रसिद्ध है । स्वय रवीन्द्र-नाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है) । भर=भरा हुआ । बादर=मेघ । ३—संतत=सदा । ४ —पाहुन=प्रवासी । खर सर=तेज बाण । हंतिया=मारता है । ५—कत सत=कई सौ । पात = गिरता है । मातिया=मत होकर है । ६—डाक = पुकारता है । डाहुक=एक बरसाती पक्षी । ७—दिग=दिशा । अथिर=चंचल । ८—कइसे = किस प्रकार । गमाओब = बिताऊंगी ।

(२००)

मोर वन वन सोर सुनइत
बढ़त मनमथ पीर ।
प्रथम छार असाढ़ आमोल
अबहु गगन गँभीर ॥२॥
दिवस रयना अरे सखी
कइसे मोहन विनु जाए ॥३॥
आवए साओन बरिख भाओन
घन सोहा ओन बारि ।
पंचसर-सर छुटत रे कइसे
जीअए विरहिन नारि ॥४॥
आवए भादो वेगर माधो
कॉसो कहि एहि दुख ।
निडर डर डर डाक डाहुक
छुटत मदन बनूक ॥७॥
अछूह आसिन गगन-भासि न
घनन घनघन रोल ।
सिंह भूपति भनइ ऐसन
चतुर मास कि बोल ॥९॥

२—भाओन=जो मन को भावे । ५—पचसर=कामदेव । ६—वेगर=बिना । कॉसो=किससे । ७—डर डर डाक डाहुक—डाहुक (पक्षी-विशेष) डर डर शब्द से पुकार रहा है—मानो कामदेव का बंदुक छुट रहा हो । ८-अछूह=प्राप्त=प्राप्त आया । भासि=मालूम पड़ता है ।

(२०१)

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर वन
कोकिल पचम गावे रे।
मलयानिल हिमसिखर सिधारल
पिया निज देश न आवे रे ॥२॥
चनन चान तन अधिक उतापए
उपवन अलि उतरोले रे ॥४॥
समय वसंत कंत रहु दुर देस
जानल विधि प्रतिकूले रे ॥५॥
अनमिख नयन नाह मुख निरखइत
तिरपित न भेल नयाने रे।
ई सुख समय सहए एत संकट
अबला कठिन पराने रे ॥ ६ ॥
दिन-दिन खिन तनु हिम कमलिनि जनु
न जानि कि जिव पाजंत रे।
बिद्यापति कह धिक धिक जीवन
माधव निकरुन कंत रे ॥ ८ ॥

२—फुटल=प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिमसिखर सिधारल=मलय-पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण-पवन बहने लगा। ३—चनन=चन्दन। चान=चन्द्रमा। उतापए=उत्तप्त कर देता है, जलाता है। अलि उतरोले रे=भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनमिख=विना पलक गिरे हुए। ७—हिम=वर्फ। परजंत=शय। ८—निकरुन=करुणा-रहित, कठोर।

(२०२)

सजनी कानुक कहबि बुझाई।
रोपि पेमक विज अंकुर मूड़लि
बाँचब कौन उपाई ॥२॥
तेल-बिन्दु जैसे पानि पसारिए
ऐसन मोर अनुराग।
सिकता जल जैसे छनहि सूखए
तैसन मोर सुहाग ॥४॥
कुल-कामिनि छलौं कुलटा भए गेलौं
तिनकर बचन लोभाई।
अपने कर हम मूँड़ .मुड़ाएल
कानु से प्रेम बढ़ाई ॥६॥
चोर-रमनि जनि जनि मन मन रोअई
अम्बर वदन छिपाई।
दीपक लोभ सलभ जनि. धाएल
से फल भुजइत चाई ॥८॥
भनई विद्यापित इह कलजुग रित
चिन्ता करह न कोई।
अपन ·' करम-दोष आपहि भुंजइ
जे जन पर-वस होई ॥१०॥

१—कानुक = कृष्ण को। २—मूड़लि = तोड दिया। पसारिए—फैलता है। ४—सिकता = बालू। तैसन = वैसा। सुहाग = सौभाग्य। ५—छलौं = थी। कुलटा = व्यभिचारिणी। तिनकर = उनके। ६—मूड़

(२०३)

के पतिश्रा लए जाएत रे
मोरा पियतम पास।
हिए नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ॥२॥
एकसरि भवन पिया बिनु रे
मोग रहलो न जाय।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिश्राय ॥४॥
मोर मन हरि हरि लय गेल रे
अपनो मन गेल।
गोकुल तजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ॥६॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि धरु पिय आस।
आओत तोर मनभावन रे
एहि कातिक मास ॥८॥

मुडाएल = बदनाम हुई। ७—चोर-रमनि = चोर की स्त्री। अम्बर = वस्त्र (चोरनारि जिमि प्रगट न रोई।—तुलसी] ८—सलभ = पतग। जनि = ऐसा। भुजइत चाई = भोगना ही चाहिये। १०—भुजइ = भोगता हूं।

१—के—कौन। २—भेल = हुआ, आया। ३-एकसरि = अकेली। ४—अनकर = दूसरे का। पतिआय = विश्वास करता है। ५—हरि लय गेल = हरकर ले गये। अपनो = स्वयं भी। ८—आओत = आवेगा।

(२०४)

सजनी, के कह आओब मधाई।
बिरह - पयोधि पार किए पाओब
मझु मन नहि पतिआई ॥२॥
एखन-तखन करि दिवस गमाओल
दिवस - दिवस करि मासा।
मास - मास करि बरस गमाओल
छोड़लूँ जीवन आसा ॥४॥
बरस-बरस करि समय गमाओल
खोयलू कानुक आसे।
हिमकर-किरण नलिनि जदि जारब
कि करब माधब मासे ॥६॥
अंकुर तपन-ताप जदि जारब
कि करब वारिद मेहे।
इह नव जौवन बिरह गमाओब
कि करब स पिया गेहे ॥८॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
अब नहि हाह निराश।
से व्रजनन्दन हृदय अनन्दन
झटित मिलत तुअ पासे ॥१०॥

१—पाओब=आवग २—पयोधि=समुद्र । ३—एखन-तखन= यह क्षण, वह क्षण । ५—खोयलूँ=भुला दिया । कानुक=कृष्ण का । ६—हिमकर=चन्द्रमा । नलिनि=कमलिनी । जारब=जलायेगा ।

(२०५)

अंकुर तपन-ताप जारव

कि करव बारिद मेह

ई नव जौवन विरह गमाओव

कि करब से पिया गेह ॥२॥

हरि हरि के इह दैव दुरासा।

सिन्धु निकट जदि कंठ सुखाएब

के दुर करब यासा ॥४॥

चंदन तरु जब सौरभ छोड़ब

ससधर बरिखब आगि।

चिन्तामनि जब निज गुन छोड़ब

की मोर करम अभागि ॥६॥

साओन माह घन-बिन्दु न बरिखब

सुरतरु बाँझ कि छाँदे।

गिरिधर सेवि ठाम नहि पाएब

विद्यापति रहु धाँदे ॥८॥

कि=क्या। माधव मास = वैशाख [वसंत]। ७--तपन ताप = सूर्य की ज्वाला। ९--होह = होओ। झटित = शीघ्र।

३--के = कौन। ४-दुर करब=दूर करेगा। ५-सौरभ = सुगंध। ससधर=चन्द्रमा। वरिखब=वर्षा करेगा। ६--चिंतामनि=वह मणि, जिससे जो कुछ माँगे, दे दे। ७--घन बिन्दु = मेघ की बूँद। सुरतरु= कल्पवृक्ष। बाँझ=वन्ध्या। कि छाँदे = किस प्रकार। ८--सेवि = सेवा कर। ठाम = जगह। धाँदे=सन्देह।

(२०६)

चानन भेल बिषम सर रे
भूषन भेल भारी ।
सपनहुँ हरि नहि आएल रे
गोकुल गिरिधारी ॥२॥
एकसरि ठाढ़ि कदम-तर रे
पथ हेरछि मुरारी ।
हरि बिनु हृदय दगध भेल रे
झामर भेल सारी ॥४॥
जाह जाह तोहे ऊधो हे
तोहे मधुपुर जाहे ।
चन्द्रबदन नहि जीवति रे
वध लागत काहे ॥६॥
भनइ विद्यापति तन मन रे
सुनु गुनमति नारी ।
आज आओत हरि गोकुल रे
पथ चलु झट झारी ॥८॥

१—चानन=चन्दन । बिषम=कठोर । सर=बाण । भारी=भार-स्वरूप । ३—एकसरि=अकेले । पथ हेरथि=राह देख रही हैं । ४—दगध=दग्ध, जला हुआ । झामर=मलिन । ५—जाह=जाओ । मधुपुर=मथुरा । ६—जीवति=जीयेगी । वध=हत्या । काहे=किसे । ८—झट झारी=झटकर, शीघ्र-शीघ्र ।

विपत अपत तरु पाओल रे
पुन नव नव पात ।
विरहिन-नयन विहल विहि रे
अबिरल बरिसात ॥ २ ॥
सखि अंतर विरहानल रे
नित बाढ़ल जाय ।
बिनु हरि लख उपचारहु रे
हिय दुख न मिटाय ॥ ४ ॥
पिय पिय रटए पपिहरा रे
हिय दुख उपजाव ।
कुदिना हित जन अनहित रे
थिक जगत सोभाव ॥ ६ ॥
भनइ बिद्यापति गाओल रे
दुख मेटत तोर ।
हरखित चित तोहि भेटत रे
पिय नन्दकिसोर ॥८॥

१—विपत्ति-रूपी पत्रहीन वृक्ष ने पुनः [वर्षा आने पर] नये-नये पत्ते प्राप्त किये। २—बिहल=विधान किया, बनाया, पैठा दिया। विहि=ब्रह्मा। अबिरल=लगातार, निरन्तर। ३—अंतर=भीतर, हृदय में। बिरानहल=बिरह-रूपी अग्नि। ४—लख=लाख। उपचार=उपाय। ५—कुदिना=कुदिन आने पर। अनहित=शत्रु। सोभाव=स्वभाव। थिक=है। ७—मेटत=मिटेगा।

मोर पिया सखि गेल दुर देस।
जौवन दए गेल साल सनेस ॥ १ ॥
मास अषाढ़ उनत नव मेघ।
पिया विसलेख रहओं निरथेघ ॥
कोन पुरुष सखि कोन से देस।
करब मोयँ तहाँ जोगिनी भेस ॥ २ ॥
साओन मास वरसि घन वारि।
पंथ न सूझे निसि अँधिआरि ॥
चौदिसि देखिए विजुरी रेह।
से सखि कामिनि जीवन सँदेह ॥ ३ ॥
भादव मास वरसि घन घोर।
सभदिसि कुहुकय दादुल मोर ॥
चेहुँकि चेहुँकि पिया कोर, समाय।
गुनमति सूतलि अंक लगाय ॥ ४ ॥
आसिन मास आस धर चीत।
नाह निकारुन न भेलाह हीत ॥
सर-वर खेलए चकवा हास।
विरहिन वैरि भेल आसिन मास ॥ ५ ॥

१—साल = काँटा। सनेस = भेंट। २—उनत = उन्नत, चढता हुआ। विसलेख = विश्लेष, वियोग। रहओ = रहती हूँ। निरथेघ = निरवलम्ब। से = वह। ४—दादुल = मेढक। कोर = गोद। सुतलि = सोई। अंक = हृदय। ५—निकारुन = निष्करुण। भेलाह = हुआ। ६—दिगन्तर = दूर देश। वास = रहना। सुखराति = दीवाली की

कातिक कत दिगन्तर बास।
पिय-पथ हेरि-हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहु का भेल।
हमे दुखसाल सोआमि दय गेल॥ ६॥
अगहन मास जीव के अंत।
अबहु न आयल निरदए कंत॥
एकसरि हम धनि सूतओं जागि।
नाहक आओत खाएत मोहि आगि। ७॥
पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिया परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरओं चौदिस झँखओं रोय।
नाह बिछोह काहु जन होय॥ ८॥
माघ मास घन पडए तुसार।
झिलमिल केचुआँ उनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पियतम कोर।
बिधि बस दैव वाम भेल मार॥ ९॥

रात। सोआमि=स्वामी। ७—सूतओ जागि=जागकर सोती हूँ। जब मुझे आग खा जायगी—जब मैं विरह-ज्वाला में मर जाऊँगी, तब प्रीतम व्यर्थ आयेंगे। ८—दीघरि=दीर्घ, बड़ी। झँखओ=झँखती हूँ। तुसार=बर्फ। झिलमिल=बारीक चोली में उभड़े हुए कुच हैं जिनके ऊपर हार है। वाम भेल=विमुख हुआ।

फागुन मास धनि जीव उचाट।
बिरह-बिखिन भेल हेरओं बाट॥
आयल मत्त पिक पंचम गाव।
से सुनि कामिनि जीवहु सताव॥१०॥

चैत चतुरपन पिय परबास।
माली जाने कुसुम बिकास॥
भमि-भमि भमरा करु मधुपान।
नागर भइ पहु भेल अयान॥११॥

वैसाख तवे खर मरन समान।
कामिनि कंत हनय पंचबान॥
नहि जुड़ि छाहरि न बरसि बारि।
हम जे अभागिनि पापिनि नारि॥१२॥

जेठ मास ऊजर नव रंग।
कंत चढ़ए खलु कामिनि-संग॥
रूपनरायण पूरथु आस।
भनइ विद्यापति बारह मास॥१३॥

१०—धनि जीव उचाट=बाला का जी उचट गया। बिखिन=विक्षीण, अत्यन्त कृश। पिक=कोयल। से=वह। सताव=सताता है। ११—परबास=प्रवास=विदेश में। कुसुम बिकास=फूल का खिलना। भमि=भ्रमण कर भमरा=भौंरा। नागर=चतुर। पहु=प्रीतम। १२—तवे=तप जाता है, गरम हो उठता है। खर=तीक्ष्ण। जुड़ि=ठंढा। छाहरि=छाया। बरसि=बरसता है। बारि=पानी। १३—ऊजर नवरंग=नये रंग उजड़ गये। खलु=निश्चय। पूरथु=पूरा करें।

(२०९)

माधव देखलि बियोगिनि वामे।
अधर न हास बिलास सखी संग।
अहोनिस जप तुअ नामे॥२॥
आनन सरद सुधाकर सम तसु
बोलइ मधुर धुनि बानी।
कोमल अरुन कमल कुम्हिलायल
देखि मन अइलहुँ जानी॥४॥
हृदयक हार भार भेल सुबदनि
नयन न होय निरोधे।
सखि सब आए खेलाओए रँग करि
तसु मन किछुओ न बोधे॥६॥
रगड़ल चानन मृगमद कुंकुम
सभ तेजलि तुअ लागी।
जनि जलहीन मीन जक फिरइछ
अहोनिस रहइछ जागी॥८॥
दूति उपदेस सुनि गुनि सुमिरल
तइखन चलला धाई।
मोदवतीपति राघवसिंह गति
कवि विद्यापति गाई॥१०॥

२—तसु=उसका। ४—कुम्हिलायल=मुरझा गया। अइलहुँ=मैं आई। ६—निरोधे=बंद। ७—रगड़ल=घिसा। चानन=चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। कुंकुम=केशर। ८—जक=समान। फिरइछ=

(२१०)

लोचन नीर वटनि निरमाने।
करए कलामुख तथिहि सनाने ॥२॥
सरस मृनाल करइ जपमाली।
अहोनिस जप हरिनाम तोहारी ॥४॥
वृन्दावन कान्हु धनि तप करई।
हृदय-वेदि मदनानल बरई ॥६॥
जिब कर समिध समर कर आगी।
करति होम बध होएबह भागी ॥८॥
चिकुर वरहि रे समरि कर लेअई।
फल उपहार पयोधर देअई ॥१०॥
भनई विद्यापति सुनह मुरारी।
तुअ पथ हेरइत अछि वर नारी ॥१२॥

फिरती है। ९—तइखन = उसी क्षण।

१, २—आँखो के आंसुओ से नदी का निर्माण कर वह चन्द्रवदनी उसी में स्नान करती है। ३—मृनाल=मृणाल=कमल-नाल। करइ= बनाती है। जपमाली=जपमाला, सुम्रनी। ६—हृदय-रूपी वेदी पर काम की अग्नि धधक रही है। ७, ८—अपने प्राणों को समिध (अग्निहोत्र की लकडी) बनाकर और स्मरण को अरणी (आगी=जिससे आग निकले, अरणी) करके वह होम कर रही है, तुम इसकी हत्या के भागी बनोगे। ९-चिकुर = केश। वरहि= पहीं, कुश। समरि= सँभलकर १०—पयोधर = कुच। अछि=है।

(२११)

अकामिक मन्दिर भेलि वहार।
चहुँदिस सुनलक भमर-झंकार ॥२॥
मुरुछि खसल महि न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ॥४॥
केओ सखि वेनि धुन केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओ सँभार ॥६॥
केओ वोलमंत्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद डाकिनि बोलि ॥८॥
अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन-भुजँग डसु वालहि तोरि ॥१०॥
भनइ विद्यापति एहो रस भान।
एहि विष गारुड़ि एक पए कान ॥१२॥

१—अकामिक=अकस्मात्। भेलि वहार=बाहर हुई। २—भमर=भौंरा। ३ खसल=गिर पडी थीर=स्थिरता। ४—चेतए=सँभालती है। चिकुर=केश। चीर=साडी। ५—केओ=कोई। वेनि धुन=वेणी गूँथती है, वेणी सँभलती है। धुरि झार=धूल झाडती है। ६—अरगजओ=कस्तूरी आदि के लेप से। सँभार=सँभालती है। ७—कान तर=कान के निकट। जोलि=जोर से। ८—खेद=खदेडती है। ९—कि रभसि बोरि=क्या रभस कर बोल रहे हो? १०—तुम्हारी प्रेमिका को (वालहि) कामदेव रूपी सर्प ने काट लिया है। १२—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गारुड़ी (विष उतारनेवाला) हैं।

(२१२)

माधव, कठिन हृदय परबासी।
तुम्ह पेअसि मोयँ देखल बियोगिनि
अबहु पलटि घर जासी ॥ २ ॥
हिमकर हेरि अवनत कर आनन
करु करुना पथ हेरी।
नयन काजर लए लिखए विधुन्तुद
भय रह ताहेरि सेरी ॥ ४ ॥
दखिन पवन बह से कइसे जुवति सह
कर कवलित तनु अंगे।
गेल परान आस दए राखए
दस नख लिखए भुजंगे ॥ ६ ॥
मीनकेतन भय सिव सिव सिव कय
धरनि लोटावए देहा।
करे रे कमल लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा ॥ ८ ॥
परभृत के डर पायस लए कर
वायस निकट पुकारे।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
करथु विरह उपचारे ॥ १० ॥

१—परबासी=प्रवासी, विदेश में रहनेवाला। २—पेअसि=प्रेयसी, प्रेमिका। जासी=जाओ। ३—हिमकर=चन्द्रमा। अवनत=नीचे। बिन्धुन्तुद=राहु। ताहेरि सेरी=उसी की शरण में।

(२१३)

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि
मूदि रहए दु नयान।
कोकिल कलरव मधुकर धुनि सुनि
कर देइ झाँपइ कान ॥ २ ॥
माधव, सुन सुन वचन हमारा।
तुअ गुनसुन्दरि अति भेल दूबरि
गुनि गुनि प्रेम तोहारा ॥ ४ ॥
धरनी धरि धनि कत बेरि बइसइ
पुन तहि उठइ न पारा।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि हेरि
नयन गरए जलधारा ॥ ६ ॥
तोहर बिरह दिन छन छन तनु छिन
चौदिस चाँद समान।
भनइ बिद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देइ रमान ॥ ८ ॥

५—कवलित=ग्रस्त, खा जाना। ६—गेल=गया हुआ। भुजगे= सर्प (सर्प वायु को खा जायगा, यह समझकर)। ७—मीनकेतन= कामदेव। ८—करे रे कमल लए—हाथ रूपी कमल ले कर। सिरिफल =नारियल। ९—परभृत=कोयल। पायस=खीर। वायस =कौआ। १०—करथु=करें। उपचारे=उपाय।

१—कुसुमित कानन=खिला हुआ वन। २—मधुकर-भौंरा। ५—पृथ्वी पकड़कर वह बाला कई बार बैठ जाती है और पुनः

सरद्क ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिन के लोचन लीला।
केसपास लए चमरि के सोपलक
पाए मनोभव पीला ॥२॥
माधव, जानल न जीवति राही।
जतबा जकर लेले छलि सुन्दरि
से सब सोंपलक ताही ॥ ४ ॥
दसन दसा दालिम के सोंपलक
बन्धु अधर रुचि देली।
देह-दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर सनि सखि भेली ॥ ६ ॥
भौंहक-भंग अनग-चाप दिहु
कोकिल के दिहु वानी।
केवल देह नेह अछ लओले
एतबा अएलहुँ जानी ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन वर जोवति
चित झँखइ जनु आने।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

(चेष्टा करने पर) उठ नहीं सकती। ७—दिन=अनाथ, असहाय। चौदिस=चतुर्दशी।

१—ससधर=चन्द्रमा। मुखरुचि=मुख की शोभा। सोंपलक=समर्पण किया। २—चमरि=वह गाय जिसकी दुम का चँवर होता है।

(२१५)

आए उनमद समय बसंत।
दारुन मदन निदारुन कंत ॥टेक।
ऋतुराज आज विराज हे सखि
नागरि जन वंदिते।
नव र नव दल देखि उपवन
सहज सोभित कुसुमिते।
आरे, कुसुमित कानन कोकिल साद।
मुनिहुक मानस उपजु बिसाद ॥ १ ॥
अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु-संचिते।
समय कंत उदंत नहि किछु
हमहि विधि-वस-वंचिते ॥
वंचित नागर सेइ संसार।
एहि रितुपतिसौ न करए बिहार ॥२॥

मनोभव=कामदेव। पीला=पीड़ा। ४—जतआ=जितना। जकर=जिसका। लेले छलि=लिये हुए थी। ५—दालिम=दाडिम=अनार। बन्धु=बन्धुली फूल। सौदामिनि=बिजली। सनि=समान। ७—अनग,चाप दिहु=कामदेव के धनुष को दिया। —अछ=है। एतवा=इतना। ६—झँखह=झँखना।

१—उनमद=उन्मत्त, पागल। दारुन=कठिन। निदारुन=करुणाहीन। नागरी जन बंदिते=नागरी स्त्रियों द्वारा पूजित। नव=नवीन। दल=पत्ता। कुसुमित=खिले हुए। कानन=वन।

अवि हार भार मनोज मारए
चंद रबि सन भानए ।
पुरुब पाप संताप जत हो
मन मनोभव जानए ॥
जारए मनसिज मार सर साधि ।
चानन देह चौगुन हो बाधि ॥ ३ ॥
सब धाधि आधि वेआधि जाइति
करिए धैरज कामिनी ।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनी ॥
जामिनि सुफल जाइत अवसान ।
धैरज धरु विद्यापति भान ॥ ४ ॥

साद = ध्वनि । विषाद = विषाद, दुःख । २—मधुकर = भौंरा । रव = आवाज । उदत = वार्त्ता । सेह = वही । ऋतुपतिसों = वसंत में । ३—मनोज = कामदेव । चंद रबि सनि भानए = चन्द्रमा और सूर्य के समान मालूम होता है । जत = जितना । मनसिज = कामदेव । मार = मारता है । चानन = चन्दन । धाधि = ज्वाला । ४—आधि वेआधि = शोक और पीडा । जाइति = जायगी । सुपहु = सुप्रभु, प्यारे प्रीतम । आओत = जावेगा । जामिनि = रात । अवसान = अन्त । भान = कहते हैं ।

"स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विनानुग्रहम् ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नम कविकर्मणे ॥"

२=१

(२१६)

माधव, कत परबोधब राधा।
हा हरि हा हरि कहतहि बेरि बेरि
अब जिउ करब समाधा ॥ २ ॥

धरनि धरिये धनि जतनहि बइसइ
पुनहि उठए नहि पारा।
सहजहि विरहिन जग महँ तापिनि
बोरि मदन-सर-धारा ॥ ४ ॥

अरुन-नयन-नोर तीतल क बर
बिलुलित दीघल केसा।
मन्दिर बाहिर करइत ससय
सहचरि गनतहि सेषा ॥ ६ ॥

आनि नलिनि केओ रमनि सुताओलि
केओ देइ मुख पर नीरे।
निसबद पेखि केओ साँस निहारए
केओ देइ मंद समीरे ॥ ८ ॥

कि कहब खेद भेद जनि अन्तर
घन घन उतपत साँस।
भनइ विद्यापति सेहो कलावति
जीव बधल आस-पास ॥१०॥

२—समाधा=समाप्त। ३—बइसइ=बैठती है। ५—नोर=आँसू। तीतल=भीगा हुआ। ६—सेषा=अंत, मृत्यु। ७—सुताओलि=सुलाई। ९—उतपत=उत्तप्त, गर्म। १०—आस-पास=आशा के बंधन में।

(२१७)

अनुखन माधब माधब सुमरत
सुन्दरि भेलि मधाई।
ओ निज भाव सुभावहि विसरल
अपने गुन लुबुधाई ॥२॥
माधव, अपरुब तोहर सिनेह।
अपने विरह अपन तनु जरजर
जिवइत भेलि सदेह ॥४॥
भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि
छल-छल लोचन पानि।
अनुखन राधा राधा रटइत
आधा आधा बानि ॥६॥
राधा सयँ जब पुनतहि माधव
माधव सयँ जब राधा।
दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत
बाढ़त विरहक बाधा ॥८॥
दुहुदिसि दारु-दहन जैसे दगधई
आकुल कीट परान।
ऐसन बल्लभ हेरि सुधामुखि
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

इस पद्य में [illegible] की पराकाष्ठा हो गई है। राधा विरहवश, प्रेम में तल्लीन हो, [illegible] समझती है और राधा राधा चिल्लाने लगती है। पुनः जब होश में आती है, तब [illegible]

[illegible]

(कृष्ण का विरह)

(२१८)

रामा हे, से किए बिसरल जाई।
कर धरि माथुर अनुमति मंगइत
ततहि परल मुरछाई ॥२॥
किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे
जे किछु कहल वर रामा।
कठिन कलेवर तेईं चलि आओल
चित्त रहलि सोइ ठामा ॥४॥
से बिनु राति दिवस नहि भावए
ताहि रहल मन लागी।
आन रमनि सयँ राज सम्पद सोयँ
आछिए जइसे विरागी ॥६॥
दुइ एक दिवस निचय हम आओब
तुहु परबोधब राई;
विद्यापति कह चित रहल नहि
प्रेम मिलाएब जाई ॥८॥

व्याकुल हो उठती है। यों दोनों अवस्थाओं मे मन लगा रहता है।

१—रामा=सुन्दरी (सखि)। से=वह। किए=क्यों। बिसरल=भूलना। २—सरे=स्वर मे। लहु लहु आखरे=मधुर शब्दों में। जे किछु=जो कुछ। ४—तेईं=उसीसे। ५—से=वह (राधा)। ६—आन=अन्य। आछिए=हूँ। ७—निचय=निश्चय। ८—तहि=वहाँ।

(२१६)

तिल एक सयन ओत जिउ न सहए
न रहए दुहु तनु भीन ।
माँझे पुलक गिरि अंतर मानिए
अइसन रहु निसि-दीन ॥ २ ॥

सजनी कोन परि जीवए कान ।
राहि रहल दुर हम मथुरापुर
एतहु सहए परान ॥ ४ ॥

अइसन नगर अइसन नव नागरि
अइसन सम्पद मोर ।
राधा बिनु सब बाधा मानिए
नयनन तेजिए नोर ॥ ६ ॥

सोइ जमुना जल सोइ रमनीगन
सुनइत चमकित चीत ।
कह कविसेखर अनुभवि जनलों
बडक बडइ पिरीत ॥ ८ ॥

१—तिल एक=एक क्षण के लिये भी । ओत=ओट । भीन=भिन्न । माँझे=मध्य में । २—मिलन के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किंचित् मात्र-मात्र का व्याघात हो जाता था, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड के समान मालूम पडता था, इस प्रकार हम दिन-रात मिले हुए थे । ३—कोन परि=किस प्रकार । ५—अइसन=ऐसा । ६—नोर=आंसू । ६—अनुभवि=अनुभव करके । जनलों=जान गया ।

भावोल्लास

—सरस बसंत समय भल पाओलि[1]
दछिन पवन बहु धीरे।
सपनहुँ रूप बचन एक भाखिए
मुख सों दुरि करु चीरे ॥२॥
तोहर बदन सम चान होअथि नहि
जइओ जतन बिहि देला।
कए बेरि काटि बनाओल नव कए
तइओ तुलित नहि भेला ॥३॥
लोचन-तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए लुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ॥४॥
भनहि विद्यापति सुनु वर जौवति
ई सम लछिम समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥५॥

१—पाओलि=पाया। २—स्वप्न में एक आदमी ने आकर कहा— अरी, मुख से अंचल हटाओ। ३—बदन=मुख। चान=चन्द्रमा। जइओ=यद्यपि। विहि=विधाता। ४—कए=कितने। कय=काया, शरीर। तइओ=तौ भी। तुलित=तुल्य, समान। ५—तूल=तुल्य। भए सक हो सकता। लुकाएल=छिपगया। जल भए=जल में। पंकज=कमल। ई सम=यह सब।

(२२१)

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार ॥२॥
कर कौसल कर कपइत रे
हरवा उर टार।
कर-पंकज उर थपइत रे
मुख-चंद निहार ॥४॥
केहनि अभागलि वैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देखि पाओल रे
गुनमय गोविन्द ॥६॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धरु धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतवो सिचु नीर ॥८॥

१--सुतलि छलहुँ=सोई थी। गरवा=गले में २--जखनि=जिस समय। भिनुसरवा=भोर, उषःकाल। आएल=आया। ३--चतुराई। करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटाया। ४--कर पंकज कमल रूपी हाथ। थपइत=स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुंह देखने लगे। ५--केहनि=कैसी। अभागलि=अभागिनी। ६--भल कए=अच्छी तरह ८--फर=

(२२२)

मोरा रे अँगनमा चनन केरि गछिआ
ताहि चढ़ि कुरुरय काग रे।
सोने चोंच बाँध देव तोयँ बायस
जओ पिया आओत आज रे ।।२।।
गावह सखि सब झुमर लोरी
मयन-अराधन जाऊँ रे
चओदिस चम्पा मओली फूलति
चान इजोरिया राति रे।
कइसे कए मोयँ मयन अराधव
होइति बड़ि रति साति रे ।।५।।
विद्यापति कवि गावए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राओ भोगीसर सब गुन आगर
पदमा देइ रमान रे ।।७।।

फबता है। कतबो सिचु नीर = कितना भी पानी पटाओ।

१—अँगनमा = आँगन में। चनन केरि = चन्दन का। गछिया = वृक्ष। कुरुरए = बोल रहा है। २—सोने = स्वर्ण से। तोयँ = तुझे। बायस = काग। ३—गावह = गाओ मयन अराधन = कामदेव को अराधना करने। ४—मओली = मल्लिका। चान = चन्द्रमा। इजोरिया = चाँदनी। कइसे कए = किस प्रकार। होइत = होयगी। रति-साति = रति जनित पीड़ा। ६—पहु = प्रीतम। अछ = है ७—रमान = पति।

(२२३)

अँगने आओब जब रसिया ।
पलटि चलब हम इषत हँसिया ॥२॥
रस-नागरि रमनी ।
कत कत जुगति मनहि अनुमानी ॥४॥
आवेसे आँचर पिया धरबे ।
जाएब हम न जतन बहु करबे ।
कँचुआ धरब जब हठिया ।
करे कर बाँधब कुटिल आध दिठिया ॥८॥
रभस माँगब पिआ जबही ।
मुख मोड़ि बिहँसि बोलब नहि नहि ॥१०॥
सहजहि सुपुरुख भमरा ।
मुख कमलक मधु पीअब हमरा ॥१२॥
तखन हरब मोर गेआने ।
विद्यापति कह धनि तुअ धेआने ॥१४॥

१—अँगने=आँगन में । आओब=आयेंगे । २—इषत=थोड़ा-थोड़ा । ३—रस नागरि=रस में चतुरा, सुरसिका । ४—कत=कितनी । जुगति=युक्ति । ५—आवेसे=आवेश में, उत्तेजित होकर । ६—वे बहुत यत्न करेंगे, किन्तु मैं न जाऊँगी । ७—कँचुआ=कँचुकी, चोली । हठिया=हठकर । ८—(अपने) हाथ में (उनके) हाथ को बाँध दूँगी और तीरछी एवं आधी चितवन से देखूँगी । ९—रभस=रति-क्रीड़ा बिहसि=हँसकर । ११—भमरा=भौंरा । पीअब=पीयेगा ।

(२२४)

पिआ जब आओब इ मझु गेहे।
मंगल जतहु करब निज देहे ॥ २ ॥
कनअ कुम्भ करि कुच जुग राखि।
दरपन धरब काजर देइ आँखि ॥ ४ ॥
वेदि बनाओब हम अपन अकमे।
झाड़ करब ताहे चिकुर बिछीने ॥ ६ ॥
कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब।
आम पल्लव ताहे किंकिन सुझम्प ॥ ८ ॥
दिसि दिसि आनब कामिनि ठाट।
चौदिसि पसारब चाँदक हाट ॥ १० ॥
विद्यापति कह पूरब आस।
दुइ एक पलक मिलब तुअ पास ॥ १२ ॥

१३--तखन=उस समय। (काम-क्रीडा के समय) मेरा ज्ञान हर लेंगे।

१--आओब=आवेंगे। इ=यह। मझु=मेरे। गेह=घर में। जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर में करूँगी। ३--कनअ कुम्भ=सोने के घड़े। कुच जुग=दोनों कुच। ४--आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण-रूप में धरूँगी=मेरी आँखों में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५--वेदी=चौरा। अकमे=गोदी। ६--केश को विच्छिन्न कर (खोलकर) उससे झाड़ू करूँगी। ७--कदलि=केला। गरुअ=विशाल। सुझम्प=आन्दोलन, झालर। ९--आनब=लाऊँगी। ठाट=समूह। हाट=बाजार (स्त्रियों के मुख चन्द्रमा ही चन्द्रमा-से दीख पड़ेंगे।)

(२२५)

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल।
बिरह जनित दुख सब दुर गेल ॥ २ ॥
कर धरि बइसाओल बिचित्र आसन।
रमन-रतन-श्याम रमनी-रतन ॥ ४ ॥
बहु विधि विलसए बहु विधि रंग।
कमल मधुप जनि पाओल संग ॥ ६ ॥
नयन नयन दुहु वयन वयान।
दुहु गुन दुहु गुन दुहुजन गान ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति नागरि भोर।
त्रिभुवनविजयी नागर चोर ॥ १० ॥

(२२६)

चिर दिन से विहि भेल अनुकूल रे।
दुहु मुख हेरइत दुहु से आकुल रे ॥ २ ॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धरु रे।
दुहु अधरामृत दुहु मुख भरु रे ॥ ४ ॥
दुहु तनु काँपइ मदन उछल रे।
किन किन किन धरि किंकिनि रुनल रे ॥ ६ ॥
जाइतेहि स्मित नव वसन मिलल रे।
दुहु पुलकावलि ते लहु लहु रे ॥ ८ ॥
रस मातल दुहु वसन खसल रे।
विद्यापति रस-सिन्धु उछला रे १० ॥

दुलह=दुर्लभ। बइसाओल=बिठाना। भोर=प्रेमुग्ध। सिन्धु=

(२२७)

सुनु रसिया,
अब न बजाऊ विपिन बँसिया ॥ २ ॥
बार बार चरनारविंद गहि
सदा रहब बनि दसिया।
कि छलहुँ कि होएब से के जाने
वृथा होएत कुल [illegible]सिया ॥ ४ ॥
अनुभव ऐसन मदन—भुजंगम
हृदय मोर गेल डसिया।
नद-नन्दन तुअ सरन न त्यागब
वलु जग होए दुरजसिआ ॥ ६ ॥
विद्यापति कइ सुनु बनितामनि
तोर मुख जीतल ससिआ।
धन्य धन्य तोर भाग गोआरिनि
हरि भजु हृदय हुलसिआ ॥८॥

हँसते हुए। पुलकावलि=रोमांच। मतल=मत्त बना। ससल=गिर पड़ा।
१—रसिआ=रसिक। २—बँसिया=वंशी। ३—दसिआ=दासी। ४—कि=क्या। छलहुँ=थी। होयब=होऊँगी, बनूँगी। से=यह बात। के=कौन। कुल हँसिया=कुल की निन्दा। ५—ऐसन=इस प्रकार। मदन-भुजंगम=काम रूपी सर्प। गेल डसिया=डँस गया, काट गया। ६—बलु=भले ही, बरच। दुरजसिआ=अपयश, कलंक। ७—बनितामनि=स्त्रियों में [illegible] समान। जीतल=[illegible] लिया। ससिआ=चन्द्रमा।

(२२८)

सखि, कि पुछसि अनुभव मोय।
से हो पिरित अनुराग बखानिए
तिल तिल नूतन होय॥ २॥
जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सुनल
स्रुति पथ परस न भेल॥ ४॥
कत मधु-जामिनि रभस गमाओल
न बूझल कइसन केल।
लाख लाख जुग हिय हिय राखल
तइओ हिय जुड़ल न गेल॥६॥
कत विदगध जन रस अनुमोदइ
अनुभव काहु न पेख।
विद्यापति कह प्रान जुड़ाएत
लाखे न मिलल एक॥ ८॥

१—कि पुछसि=क्या पूछती हो? मोय=मुझसे। २—से हो=वही। तिल तिल=क्षण-क्षण। निहारल=देखा। ४—स्रवनहि=कानों से। परस=स्पर्श। ५—मधु-यामिनि=वसंत की रात। रभस=काम-क्रीडा। गमाओल=बिता दी। केल=केलि। तइओ=तो भी। जुड़ल न गेल=न जुड़ाया, ठंढा न हुआ। ७—विदगध=विदग्ध, रसिक। रस अनुमोदई=रस का उपभोग करते हैं। पेख=देखना। ८—लाख में एक न मिला।

प्रार्थना और नचारी

(२२९)

बिदिता देवी विदिता हो
अविरल-केस सोहन्ती ।
एकानेक सहस को धारिनि
जरि रंगा पुरनन्ती ॥ २ ॥
कजल रूप तुअ काली कहिए
उजल रूप तुअ बानी ।
रविमंडल परचंडा कहिए
गंगा कहिए पानी ॥ ४ ॥
ब्रह्मा - घर ब्रह्मनी कहिए
हर-घर कहिए गौरी ।
नारायन-घर कमला कहिए
के जान उतपत तोरी ॥ ६ ॥
विद्यापति कविवर एहो गाओल
जाचक जन के गति ।
हासिनि देइ पति गरुड़नरायन
देवसिंघ नरपति ॥ ८ ॥

(२३०)

कनक-भूधर-शिखर वासिनि
चन्द्रिका चय चारु हासिनि
दशन कोटि विकास, वंकिम-
तुलित चन्द्रकले ।
क्रुद्ध - सुररिपु वलनिपातिनि
महिष - शुम्भ-निशुम्भ-घातिनि
भीत-भक्तभयापनोदन—
पाटल प्रबले ॥ २ ॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणी
दुर्ग मारि विमर्द हारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे।
गगन मडल गर्भगाहिनि
समर-भूमिपु सिहवाहिनी
परसु-पाश-कृपाण-शायक—
शख-चक्र-धरे ॥ ४ ॥
अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित वर्द्धित-
पारणा रभसे।
संसारबंध-निदानमोचिनि
चन्द्र-भानु-कृशानु-लोचन
योगिनी गण गीत शोभित-
नृत्यभूमि रसे ॥ ६ ॥
जगति पालन - जनन - मारण
रूप कार्य सहस्र कारण
हरि विरचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे।
सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति कृतस्तुति
तोषिते शिवसिंह भूपति
कामना फलदे ॥ ८ ॥

(२३१)

जय जय संकर जय जय त्रिपुरारि।
जय अध पुरुष जयति अध नारि ॥ २ ॥
आध धवल तनु आधा गोरा।
आध सहज कुच आध कटोरा ॥ ४ ॥
आध हड़माल आध गजमोती।
आध चानन सोहे आध विभूती ॥ ६ ॥
आध चेतन मति आधा भोरा।
आध पटोर आध मुँज डोरा ॥ ८ ॥
आध जोग आध भोग विलासा।
आध पिधान आध नग वासा ॥१०॥
आध चान आध सिंदुर सोभा।
आध बिरूप आध जग लोभा ॥१२॥
भने कविरतन विधाता जाने।
दुइ कए बाँटल एक पराने ॥१४॥

(२३२)

भल हर भल हरि भल तुअ कला।
खन पित वसन खनहि बघछला ॥ २ ॥
खन पंचानन खन भुजचारि।
खन संकर खन देव मुरारि ॥ ४ ॥
खन गोकुल भए चराइअ गाय।
खन भिखि माँगिए डमरु बजाय ॥ ६ ॥
खन गोविंद भए लिअ महादान।
खनहि भसम भरु काँख वो कान ॥ ८ ॥

एक सरीर लेल दुइ वास।
खन वैकुंठ खनहि कैलास ॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित वानि।
ओ नारायण ओ सूलपानि ॥१२॥

(२३३)

आगे माई एहन उमत वर लैल हिमगिरि
देखि देखि लगइछ रंग।
एहन उमत वर घोड़वो न चढ़इक
जो घोड़ रँग रँग जग ॥ २ ॥
वाघक छाल जे बसहा पलानल
साँपक भीरल तंग।
डिमिक डिमिक जे डमरु वजाइन
खटर खटर करु अग ॥ ४ ॥
भकर भकर जे भाँग भकोसथि
छटर पटर करु गाल।
चानन सो अनुराग न थिकइन
भसम चढ़ावथि भाल ॥६॥
भूत पिसाच अनेक दल साजल
सिर सो बहि गेल गग।
भनइ बिद्यापति सुनु ए मनाइनि
थिकाह दिगम्बर अग ॥८॥

(२३४)

वेरि वेरि अरे सिव मो तोय वोलो
फिरसि करिअ मन माय।

बिन संक रहह भीख माँगिए पए
गुन गौरव दुर जाय ॥२॥
निरधन जन बोलि सब उपहासए
नहि आदर अनुकम्पा।
तोहे सिव आक धतुर फुल पाओल
हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥
खटँग काटि हर हर जे बनाविअ
त्रिसुल तोड़िय करु फार।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ
पाटए सुरसरि धार ॥६॥
भन विद्यापति सुनहु महेसर
इ लागि कएलि तुअ सेवा।
एतए जे बर से बर होअल
ओतए जाएब जनि देवा ॥८॥

(२३५)

हम नहि आज रहब यहि आँगन
जो बुढ़ होएत जमाई' गे माई।
एक त बइरि भेला बीध विधाता
दोसर धिया कर बाप।
तेसरे बइरि भेल नारद बाभन
जै बूढ आनल जमाई, गे माई ॥।
पहिलुक बाजन डामरु तोरब
दोसरे तोरब रुँडमाल
बरद हाँकि बरिआत बेलाइब
धिआले जाएब पराई, गे माई ॥

धोती लोटा पतरा पोथी
एहो सभ लेवन्हि छिनाई।
जौं किछु बजता नारद वाभन
दाढ़ी धए घिसिआएब, गे माई ॥
भन विद्यापति सुनु हे मनाइन
दृढ़ करु अपन गेआन।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी विआहु
गौरी हर एक समान, गे माई ॥

(२३६)

नाहि करब वर हर निरमोहिया।
बित्ता भरि तन वसन न तिन्हका
वघछल काँख तर रहिया।२॥
वन वन फिरथि मसान जगावथि
घर आँगन ऊ वनौलनि कहिया।
सासु ससुर नहि ननद जेठौनी
जाए बैसति धिया केकरा ठहिया।४॥
बूढ वड़द ढकपाल गोल एक
सम्पति भाँगक झोरिया।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइन
सिव सन दानी जगत के कहिया ॥६॥

(२३७)

कतए गेला मोर बुढ़वा जती।
पीसल भाँग रहल सेइ गती ॥२॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती।
आज लगाइ देल कौन उदगती ॥४॥

एकसर जोहए जाएब कौन गती।
ठेसि खसब मोरि होत दुरगती ॥६॥
नंदनबन विच मिलल महेस।
गौरी हरखित भेल छुटल कलेस। ८॥
भनइ विद्यापति सुनु हे सती।
इहो जोगिया थिका त्रिभुवन पती ॥१०॥

(२३८)

जोगिया एक हम देखलौं गे माई।
अनहद रूप कहलो नहि जाई ॥२॥
पच वदन तिन नयन बिसाला।
वसन विहुन ओढन वघछाला ॥४॥
सिर वहे गग तिलक सोहे चदा।
देखि सरूप मेटल दुखददा ॥६।
जाहि जोगिया लै रहलि भवानी।
मन आनलि वर कोन गुन जानी ॥८।
कुल नहि सिल नहि तात महतारी।
वएस हिनक थिक लछु जुग चारी ॥१०॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि।
एहो जोगिया थिका त्रिभुवन दानि। १२॥

२३९)

सिव हो, उतरप पार कओन विधि।
लोढव कुसुम तोरब वेलपात।
पुजब सदासिव गौरिक मात ॥
बसहा चटल सिव फिरहु मसान।
भँगिया जरठ दरदो नहि जान ॥

जप तप नहि कैलहु नित दान।
चित गेला तिन पन करइत आन॥
भन विद्यापति सुनु हे महेस।
निरधन जानिके हरहु कलेस॥

(२४०)

जखन देखल हर हो गुननिधी।
पुरल सकल मनोरथ सब निधी॥२॥
बसहा चढ़ल हर हो बुढ़ जती।
काने कुडल सोभे गले गजमोती॥४॥
बइसल महादेव चौका चढ़ी।
जटा छिरिआओल माओल भरी॥६॥
बिधिकरु बिधिकरु बिधिकरु करू।
बिधि न करइ से हर हो हठ बरू॥८॥
बिधिए करइत हर हो घुमि खसु।
सँसार खसल फनि सिरि गौरीहँसु॥१०॥
केआ नहि किछु कहइन्हि हिनकहूँ।
पुरबिल लिखल छला मोर पहूँ॥१२॥
कवि विद्यापति गाओल।
गौरी उचित वर पाओल॥१४॥

(२४१)

हर जनि बिसरब मो ममिता,
हम नर अधम परम पतिता।
तुअ सन अधमउधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता॥२॥
जम के द्वार जवाब कओन देब
जखन बुझत निजगुन कर बतिया।

जब जम किंकर कोपि पठाएत
तखन के होत धरहरिया ॥४॥
भन विद्यापति सुकवि पुनीत मति
सकर अिपरीत वानी।
असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करु दिअ सुपलानी ॥३॥

(२४२)

एत जप-तप हम किअ लागि कैलहु
कथिला कएलि नित दान।
हमरि धिया के एहो वर होयता
अब नहि रहत परान ॥२॥
हर के माय बाप नहि थिकइन
नहि छइन सादर भाय।
मोर धिया जों सासुर जैती
बइसति ककर लग जाय ॥४॥
घास काटि लौती बसहा चरौती
कुटती भाँग धतूर।
एको पल गौरा बैसहु न पौती
रहती ठाढि हजूर ॥३॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दृढ करु अपन गेआन।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ॥८॥

(२४३)

कखन हरब दुख मोर
हे भोलानाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाएब
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ।
आछत चानन अवर गँगाजल
वेलपात तोहि देब, हे भोलानाथ।
यहि भव-सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु कर आए, हे भोलानाथ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ।

(२४४)

यहि विधि व्याहन आयो
एहन वाउर जोगी।
टपर टपर कए वसहा आयल खटर खटर रुँडमाल॥
भकर भकर सिव भाँग भकोसथि डमरू लेल कर लाय॥
ऐपन मेटल पुरहर फोरल वर किमि चौमुख दीप॥
धिआ ले मनाइनिनि मंडप वइसलि गाविए जनु सखि गीत॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस॥

(२४५)

आजु नाथ एक वर्त मोहि सुख लागत हे।
तोहे सिव धरि नट बेष कि डमरू वजाएब हे॥
भल न कहल गउरा रउरा आजु सु नाचब हे।
सदा सोच मोहि होत कवन विधि बाँचब हे॥

जे जे सोच मोहि होत कहा समुझाएप हे।
रउरा जगत के नाथ कवन सोच लागए हे॥
नाग ससरि भुमि खसत पुहुमि लोटायत हे।
कार्त्तिक पोसल मजूर सेहो धरि खायत हे॥
अमिय चूइ भुमि खसत बघम्बर जागत हे।
होत बघम्बर बाघ बसह धरि खायत हे॥
टूटि खसत रुदराछ मसान जगावत हे।
गौरी कह दुख होत विद्यापति गावत हे॥

(२४६)

आगे माइ, जोगिया मोर जगत सुखदायक
दुख ककरो नहि देल।
दुख ककरो नहि देल महादेव
दुख ककरो नहि देल।
यहि जोगिया के भाँग भुलेलक
धतुर खाआइ धन लेल॥
आगे माइ, कातिक गनपति दुइ जन बालक
जग भरि के नहि जान।
तिनका अभरन किछुओ न थिकइन
रति यक सोन नहि कान॥
आगे माइ, सोना रूपा अनका सुत अभरन
आपन रुद्रक माल।
अपना सुत ला किछुओ ना जुरइनि
अनका ला अजाल॥
आगे माइ, छन मे हेरथि कोटि धन बकसथि
ताहि देवा नहि थोर।

भन विद्यापति सुनह मनाइनि
थिका दिगम्बर भोर ॥

(२४७)

जोगिया भँगवा खाइत भेला रँगिया
भोला बौड़लवा ॥
सबके ओढ़ावे भोला साल दुसलवा
आप ओढ़य मृगछलवा ।
सबके खिलावे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धतुरवा ॥
कोई चढ़ावे भोला अच्छत चानन
कोई चढ़ावे बेलपतवा ॥
जोगिन भूतिन सिव के सँघतिया
भैरो बजावे मिरदगिया ।
भन विद्यापति जै जै सकर
पारवती गौरि सँगिया ॥

(२४८)

जौं हम जनितहुँ भोला भेला ठगना
होइतहुँ राम गुलाम गे माई ।
भाई विभीखन वड तप कैलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माई ।
पुरुव पछिम एको नहि गेला
अचल भेला यहि ठाम, गे माई ।
बीस भुजा दस माथ चढ़ाओलि
भाँग दिहल भर गाल, गे माई ।

नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरषि देलन्हि रुँडमाल, गे माई।
एक लाख पूत सवा लाख नातो
कोटि सौवरनक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माई।
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनओ महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माई।

(२५६)

जानकी-वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि, नहि जननि जनक नहि जाही ॥२॥
बसु नइहरा ससुरा के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेल वहि गाम ॥४॥
सासुक कोर मे सुतल जमाय।
समधि विलह तौ विलहल जाय ॥६॥

जाहि ओदर से वाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेलि ॥८॥
भन विद्यापति सुकवी भान।
कवि के कवि कहँ कवि पहचान ॥१०॥

गंगा-स्तुति

(२५०)

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे।
छोड़इत निकट नयन बह नीरे ॥२॥
करजोरि बिनमओ विमल तरगे।
पुन दरसन होए पुनमति गगे ॥४॥
एक अपराध छेमब मोर जानी।
परसल माय पाए तुअ पानी ॥६॥
कि करब जप-तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने ॥८॥
भनइ विद्यापति समदओ तोही।
अन्त काल जनु बिसरह मोही ॥१०॥

(२५१)

ब्रह्मकमडलु वास सुवासिनि
सागर नागर गृहवाले।
पातक महिष विदारण कारण
धृतकरवाल बीचि-माले ॥
जय गगे जय गगे।
शरणागत भय भगे
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित
कुसुम विचित्रित तीरे।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे ॥
हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके।

अविलसदमरपुरी - पद दान-
विधान विनाशित शोके ॥
सहज दयालुतया पातकि जन
नरकविनाशन निपुणे ।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
विद्यापति कवि भणित गुणे ॥

कृष्ण-कीर्त्तन

(२५२)

माधव, कत तोर करब बड़ाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई ॥
जौं श्रीखंड सौरभ अति दुरलभ
तौं पुनि काठ कठोर ।
जौं जगदीस निसाकर तौं पुन
एकहि पच्छ इजोर ॥
मनि समान औरो नहि दोसर
तनिकर पाथर नामे ।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह
की कहु ठामहि ठामे ॥
तोहर सरिस एक तोहँ माधव
मन होइछ अनुमान ।
सज्जन जन सों नेह कठिन थिक
कवि विद्यापति भान ॥

(२५३)

माधव, बहुत मिनति कर तोय ।
दए तुलसी तिल देह समर्पिनु

दया जनि छाड़वि मोय।
गनइत दोसर गुन लेस न पाओवि
जब तुहुँ करवि विचार।
तुहु जगत जगनाथ कहाओसि
जग बाहिर नइ छार॥
किए मानुस पसु पखि भए जनमिए
अथवा कीट पतंग।
करम विपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसंग॥
भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइत इह भव-सिधु।
तुअ पद-पल्लव करि अवलम्बन
तिल एक देह दिनबधु॥

(२५४)

तातल सैकत बारि-बिन्दु सम
सुत - मित - रमनि - समाज।
तोहे विसारि मन ताहे समरपिनु
अब मझु हब कोन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहुँ जगतारन दीन दयामय
अतय तोहर बिसवासा।
आध जनम हम नींद गमायनु
जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि - रभस रग मातनु
तोहे भजव कोन वेला॥

कत चतुरानन मरि मरि जाओत
न तुअ आदि अवसाना।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत
सागर लहरि समाना॥
भनइ विद्यापति सेष समन मय
तुअ विनु गति नहि आरा।
आदि अनादिक नाथ कहाओसि अब
तारन भार तोहारा॥

(२५५)

जतने जतेक धन पापे बटोरल
मिलि मिलि परिजन खाय।
मरनक बेरि हरि कोइ न पूछए
करम संग चलि जाय॥
ए हरि, वन्दौं तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि
पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु
जुवती मनि मयँ मेलि।
अमृत तजि हलाहल किए पीअस
सम्पद अपदहि भेलि॥
भनइ विद्यापति नेह मने गनि
कहल कि बाढ़व काजे।
साँझक बेरि सेवकाई मँगइत
हेरइत तुअ पद लाजे॥

— —

विविध

(२५६)

व्यथा

माधव, कि कहब तोहर गेआन।
सुपहु कहलि जब रोप कयल तब
कर मूनल दुहु कान ॥२॥
आयल गमनक बेरि न नोन टरु
तइ किछु पुछिओ न भेला।
एहन करमहीनि हम सनि के धनि
कर से परसमनि गेला ॥४॥
जओ हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच - कंचन - गिरि - साँधि।
कौसल करतल बाहु-लता लए
दृढ करि रखितहुं बाधि ॥६॥
इ सुमिरिए जब जाओ मरिए तब
बूझि पड़ हृदय पषाने।
हिमगिरि - कुमरी चरन हृदय धरि
कवि विद्यापति भाने ॥८॥

(२५७)

प्रेम

फूल एक फुलवारि लाओल मुरारि।
जतने पटाओल सुवचन-बारि ॥२॥
चौदिस बान्हल सीलक थारि।
जिवे अवलम्बन करु अवधारि ॥४॥
ततहु फुलल फुल अभिनव पेम।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम ॥६॥

अति अपरुब फुल परिनत भेल।
दुइ जिव अछल एक भए गेल ॥ ८ ॥
पिसुन-कीट नहि लागल ताहि।
साहस फल देल विहि निरवाहि ॥ १० ॥
विद्यापति कह सुन्दर सेहु।
करिए जतन फलमत होए जेहु ॥१२॥

(२५८)

शिवसिंह का युद्ध

दूर दुग्गम दमसि भंजेओ
गाढ़ गढ़ गूढ़िय गॅजेओ
पातसाह ससीम सीमा
समर दरसओ रे ॥ १ ॥
ढोल तरल निसान सद्दहि
भेरि कोहल संख नद्दहि
तीनि भुवन निकेत
केतकि सान भरिओ रे ॥ २ ॥
कोह नीर पयान चलिओ
वायु मध्ये राय गरुओ
तरनि तेअ तुलाधरा
परताप गहिओ रे ॥ ३ ॥
मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ
धरनि पूरिय गगन झम्पिअ
हानि तुरए पदाति पयभर
कमन सहिओ रे ॥ ४ ॥

तरल तर तरबारि रंगे
विज्जुदाम छटा तरंगे
घोर घन संघात बारिस-
काज दरसेत्रो रे ॥ ६ ॥

तुरए कोटिअ चाप चूरिअ
चारि दिसि सौं विदिस पूरिअ
विषम सार असाढ़ धारा
धरनि भरित्रो रे ॥ ६ ॥

अन्ध कूअ कबन्ध लाइअ
फेरवी फम्फरिस गाइअ
रुहिर मत्त परेत भूत
वैताल विछलित्रो रे ॥ ७ ॥

पार भइ परिपथि गंजिअ
भूमि मंडल मुंड मंडिअ
चारु चन्द्र कलेव कीत्ति
सुकेत की तुलित्रो रे ॥ ८ ॥

राम रूप स्वधम्म सिक्खिअ
दान दप्प दधीचि रक्खिअ
सुकवि नव जयदेव
भनित्रो रे । ६ ॥

देवसिंह नरेन्द नन्दन
शत्रु नरवइ कुल निकन्दन
सिंह सम सिवसिंह राया
सकुल गुनक निधान गनित्रो रे ॥ १० ॥

(२५६)

दृष्टकूट

हरि सम आनन हरि सम लोचन
हरि तहाँ हरि वर आगी।
हरिहि चाहि हरि हरि न सोहावए
हरि हरि कए उठि जागी ॥
माधव हरि रहु जलधर छाई।
हरि नयनी धनि हरि-घरिनी जनि
हरि हेरइत दिन जाई ॥
हरि भेल भार हार भेल हरि सम
हरिक वचन न सोहावे।
हरिहि पइसि जे हरि जे नुकाएल
हरि चढ़ि मोर बुझावे ॥
हरिहि वचन पुनु हरि सयँ दरसन
सुकवि बिद्यापति भाने।
राजा सिवसिंह रूपनारायन
लखिमा देवि रमाने ॥

(२६०

माधव, आब बुझल तुअ साजे।
पंच दून दह दह गुन सए गुन
से देलह कोन काजे ॥
चालिस चारि काटि चौठा
से हम सेपिया मोरा।
से निरखत मुख पेखत चौदिस
करत जनम के ओरा ॥

साठिहु मह दह बिन्दु बिबरजित
  के से सहत उपहासे।
हम अबला अब पहुक दोसर्सें
  दुइ बिन्दु करब गरामे॥
नव बुदा दए नवए बाम कए
  से उर हमर पराने।
कपटी बालमु हेरि न हेरए
  कारन के नहि जाने॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जोवति
  ताहि करथि के बाधा।
अपन जीव दए परक बुझाइअ
  नाल कमल दुइ आधा॥

(२६१)

'कुसुमित कानन' कुजे बसा।
नयनक काजर घोरि मर्सी॥
नखसौं लिखल नलिनि दल पात।
लीखि पठाओल आखर सात॥
पहिलहि लिखलनि पहिल बसत।
दोसर लिखलनि तेसरक अत॥
लिखि नहि सकली अनुज बसत॥
पहिलहि पद अछि जीवक अत॥
भनहि विद्यापति आखर लेख।
बुध-जन हो से कहए बिसेख॥

(२६२)

द्विज आहर आहर सुत नदन
  सुत आहर सुत रामा।

बनज बधु सुत सुत दए सुन्दरि
चलिलि संकेतक ठामा ॥
माधव, बूझल कथा बिसेखी।
तुअ गुन लुबुधलि प्रेम पिआसलि
साधस आइलि उपेखी ॥
हरि अरि अरि पति ता सुत वाहन
जुवति नाम तसु होई।
गोपति पति अरि सह मिलु वाहन
विरमति कबहु न होई ॥
नागर नाम जोग धनि आवए
हरि अरि अरि पति जाने।
नौमि दसाह एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ॥

बाल-बिवाह

(२६३)

पिया मोर बालक हम तरुनी।
कोन तप चुकलौंह भेलौंह जननी ॥
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर।
पिया के देखैत मोर दगध सरीर ॥
पिया लेली गोद कै चललि बजार।
हटिया के लोग पूछे के लागु तोहार ॥
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाइ।
पुरुब लिखल छल बालमु हमार ॥
बाटरे बटोहिया कि तुहु मोरा भाइ।
हमरो समाद नेहर लेने जाउ ॥

कहिहुन ववा के किनऐ धेनु गाइ।
दुधवा पियाइके पोसता जमाइ॥
नहि मोर टका अछि नहि धेनु गाइ।
कौन विधि पोसव वालक जमाइ॥
भनइ विद्यापति सुनु व्रजनारि।
धीरज धरह त मिलत मुरारि॥

परकीया (स्वयंदूतिका)

(२६४)

अपर पयोधि मगन भेल सूर।
नखि-कुल सकुल बाट विदूर॥
नर परिहरि नाविक घर गेल।
पथिक गमन पथ संसय भेल॥
अनतए पथिक करिअ परवास।
हमे धनि एकलि कत नहि पास।
एक चिंता अओक मनमथ मोस।
दरसिस दसा मोहि कओनक दोस॥
रयनि न जाग सखी जन मोर।
अनुखन सगर नगर भम चोर॥
तोहे तन्नत हम विरहिनि नारि।
उचितहु वचन उभज कुलगारि॥
बामा वचन बाम पथ याव।
अपन मनोरथ जुगुति बुझाव॥
भनइ विद्यापति नारि सुजानि।
भल नए रखलक टहु अनुमानि॥

(२६४)

हम जुवती पति गेलाह विदेस ।
लग नहि वसए पड़ोसियाक लेस ॥
सासु दोसरि किछुओ नहि जान ।
आँखि रतौंधी सुनए नहि कान ॥
जागह पथिक जाह जनु भोर ।
राति अँधार गाम बड़ च्चोर ॥
भरमहु भोरि न देअ कोतवार ।
काहु क केओ नहि करए बिचार ॥
अधिप न कर अपराधहु साति ।
पुरुष महते सब हमर सजाति ॥
विद्यापति कवि यह रस गाव ।
उकुतिहु अबला भाव जनाव ॥

(२६५)

विद्यापति की मृत्यु

दुल्लहि तोहरि कतए छथि माय ।
कहुन ओ आबथु एखन नहाय ।
बृथा बुझथु संसार बिलास ।
पल पल नाना तरहक त्रास ॥
माय बाप जौं सदगति पाब ॥
संतति कॉ अनुपम सुख आब ।
विद्यापतिक आयु अबसान ।
कातिक धवल त्रयोदसि जान ॥
॥ इति ॥